बायोकेमिक चिकित्सा-विज्ञान ।

रासायनिक अनुशीलन, सम्पूर्ण मेटिरिया-मेडिका,
रोगका विस्तारित विवरण और चिकित्सा,
वृहत् लक्षण-कोष या रेपर्टरी
समन्वित ।

एम० भट्टाचार्य एण्ड को०
इकानमिक फार्मेसी,
८४ नं० क्लाइव स्ट्रीट
कलकत्ता ।

मूल्य—४)

श्रीफकीरदास सरकार
एम० भट्टाचार्य एण्ड को०
८४ न० क्लाइव स्ट्रीट,
कलकत्ता।

प्रथम संस्करण।

मुद्रक
श्रीशैलेन्द्रचन्द्र भट्टाचार्य
इकानमिक प्रेस
२५, न० रायबागान स्ट्रीट,
कलकत्ता।

११००—१८-१०-४४ वां।

निवेदन ।

इस देशमें **बायोकेमिक मतसे चिकित्साका** प्रचार बहुत थोड़े बरसोंसे हुआ है, पर इतने ही दिनोंमें सर्व-साधारणको मालूम हो गया है, कि यह कितनी उपयोगी चिकित्सा-प्रणाली है और इसीलिये इसका भरपूर प्रचार भी हो रहा है।

अङ्गरेजी जाननेवालोंके लिये तो इस चिकित्सा-प्रणालीको सीखना कठिन नहीं है; क्योंकि अङ्गरेजीमें बायोकेमिक चिकित्सा-सम्बन्धी बहुत-से सुन्दर-सुन्दर ग्रन्थ हैं; पर हिन्दीमें उस जोड़का एक भी ग्रन्थ नहीं था। जो कुछ मिलते थे, वे पाठक या चिकित्सकोंकी जरूरतोंका पूरा न कर सकते थे। हमलोग, यह बराबर सुनते आ रहे थे, कि एक उत्तम बायो-केमिक चिकित्साका ग्रन्थ चाहिये। मङ्गलमयी जगदम्बाकी कृपासे आज उसे प्रकाशित करनेका सुयोग प्राप्त हुआ है।

इस ग्रन्थमें चार विशेष विभाग हैं। प्रथम विभागमें,—सुसलरके बायोकेमिक विज्ञानकी आलोचना; दूसरेमें—बारह बायोकेमिक औषधियोंको प्रस्तुत करनेकी प्रणाली, जीव-देहके साथ उनका सम्बन्ध और विपर्ययके कारण पैदा होनेवाली रोग-लक्षणावलीका निर्देश; तीसरे विभागमें—रोग-परिचय और औषध-निर्णय; और चौथे विभागमें—लक्षण-कोष या रेपर्टरी है।

रोग-परिचय और चिकित्सा-विभागमें, प्रत्येक रोगका पूरा-पूरा परिचय, निदान, चुनी हुई दवा, पथ्यापथ्य और उपयुक्त सेवा-पद्धति बहुत ही सहज और सरल भाषामें अच्छी तरह बता दी गयी है। यदि यह कहा जाये, कि इस ढङ्गका वर्णन और चिकित्सा बताना—इस ग्रन्थका एक नूतनत्व है, तो भी अत्युक्ति नहीं है। इसकी रोग-सूची देखनेसे ही बहुत-कुछ बातें समझमें आ जायँगी।

यदि इस ग्रन्थसे चिकित्सक और विद्यार्थियोंका कुछ भी लाभ हुआ, तो हम अपना परिश्रम सफल समझेंगे।

१ फरवरी १९३८ } एम० भट्टाचार्य एण्ड को०।

बायोकेमिक चिकित्सा-विज्ञान।

—❧✽☙—
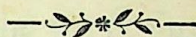
सूचना।

बायोकेमिक दवाएँ या Tissue remedies के सम्बन्धमें दूसरी बातोंपर विचार करनेके पहले, यह जान रखना आवश्यक है, कि इसकी मूल-भित्ति क्या है।

Biochemistry शब्द, दो अलग-अलग शब्द मिलकर बना है। Bios—जैव और Chemistry—रासायन-तत्व। प्रत्येक शरीर-धारीकी सजीव अवस्थामें शारीरिक क्रिया ठीक-ठीक होनेके लिये चय और पूर्त्तिकी क्रिया इस देह-क्षेत्रमें प्रत्येक क्षण हुआ करती है। यह क्रिया रासायनिक-प्रक्रियाके अनुसार बहुत ही सुश्रृङ्खलित-भावसे चला करती है। जैव-क्रिमितिकी तरह उद्भित-जगतमें भी रासायनिक प्रक्रियासे उद्भिद-जीवनका विकास, वृद्धि और क्षय-बराबर ही हुआ करता है।

जीव देहके सभी यंन्त्रों और अङ्गोंके गठन और पोषणके लिये आवश्यक परिमाणमें और ठीक ठीक विभागके अनुसार कई पार्थिव (inorganic) पदार्थोंकी जरूरत पड़ा करती है। खाने-पीनेकी चीजोंके साथ, शरीरमें घुसकर, पाचन

होनेके बाद, रक्तके दौरानके साथ-साथ ये सभी पदार्थ शरीरमें सब जगह हो जा पहुँचते हैं और वहाँ ये आवश्यकताके अनुसार ग्रहण कर लिये जाते हैं; इसके अलावा सभी शारीरिक क्रियाओंके लिये, नैसर्गिक नियमके अनुसार शरीर-तन्तु जलकर, कितने ही उड़ जानेवाले अंशोंके सिवा, बाकीके पार्थिव पदार्थ जलकर भस्मके रूपमें परिणत हो जाते हैं। इन पार्थिव पदार्थोंको inorganic tissue salts कहा जाता है। बायोकेमिकके मतसे ये सभी तन्तु-लवण (tissue salts) जबतक उपयुक्त परिमाणमें और ठीक-ठीक उचित विभागके अनुसार रहते हैं, तबतक स्वास्थ्य ज्यों-का-त्यों बना रहता है। इस शृङ्खलामें गड़बड़ी होनेपर ही कोई रोग पैदा हो जाया करता है।

सबके पहले हनिमैनने ही कितने ही पार्थिव-लवणोंकी परीक्षा की और सदृश मतानुसार (Homeopathy) चिकित्साके लिये उन्हें काममें लाने लगे। उस समय बायोकेमिक मतसे इसका व्यवहार प्रचलित न हुआ था। इसके बाद स्टाफ (Staff) साहबने भी इस बातका समर्थन किया कि किसी रोगको आरोग्य करनेके लिये नर-देहके ये सभी उपादान बहुत ही आवश्यक और उपयोगी हैं। विख्यात-वैज्ञानिक ग्रौवल (Grauvogl) साहबने भी इन लवणोंकी बहुत प्रशंसा की है।

पर, जर्मनीके ओल्डेनवर्ग नगरके रहनेवाले डाक्टर विलियम एच, सुसलर (Schuessler) साहबने ही इन

डं

सब अजैव अर्थात पार्थिव-लवणोंका सहारा लेकर बायोकेमिक चिकित्सा-प्रणालीका प्रचार और प्रतिष्ठा की है। १८७३ ईस्वीमें उन्होंने इस विषयका ग्रन्थ लिखकर सर्व-साधारणमें प्रचार किया। डाक्टर ओकान्नर (Oconner) ने जर्मन भाषामें लिखे हुए उस ग्रन्थका अङ्गरेजीमें अनुवाद किया और इसके बाद एम० डासेटी वाकर (M. Docelti Walker), केरी साहब और बोरिक एण्ड डियुई इन दोनों चिकित्सकोंने बायोकेमिक चिकित्साके सब ग्रन्थ अङ्गरेजी भाषामें प्रकाशित किये। केरी साहब तथा डा० बोरिक और डियुईके रचे ग्रन्थका सबने आदर किया। इसके बाद तो बायोकेमिक चिकित्साके अनेकानेक ग्रन्थोंकी रचना हुई।

जैव-तन्तु।

जीव-देहकी गठनके भीतर हमलोगोंको कितने ही खास-खास अंश दिखाई देते हैं। उनके सम्मिलन और ठीक-ठीक स्थानपर लगनेके कारण ही शरीरका निर्माण हुआ है। ये सब अंश नाना प्रकारके तन्तुओंसे (tissues) बने हुए हैं। ये तन्तु भी कितने ही छोटे-से-छोटे कोषों द्वारा बने हैं ; इन तन्तुओंमें—अस्थि-कोष (bone cells), पेशी-कोष (muscle-cells), उपास्थि-कोष (cartilage cells), श्लैष्मिक-झिल्ली-कोष (mucous cells), स्थिति-स्थापक तन्तु (elastic tissue), उपत्वक तन्तु (epithelial tissue), संयोजक तन्तु (connective tissue), स्नायु-कोष (nerve

cells), चक्षु-तन्तु (crystalline cells) इत्यादि भिन्न-भिन्न श्रेणीके और अलग-अलग काममें आनेवाले तन्तु सब दिखाई देते हैं। **ये सब कोष भी जैव** (organic) **और पार्थिव** (inorganic) **दो पदार्थोंसे बने हैं।** इन कोषोंको देखनेके लिये अनुवीक्षण यन्त्रकी सहायताकी जरूरत पड़ती है। सजीव नर-देहका गठन और उसकी शक्ति बहुत दिनोंतक ठीक-ठीक अविकृत अवस्थामें रह सकती है, पर उसका मूल पदार्थ—ये कोष प्रत्येक क्षण लगातार ध्वंस होते रहते हैं और उनकी जगहपर नये-नये कोष बनते रहते हैं।

शरीरके रक्तके भागसे ही इन कोषोंकी पुष्टि होती हैं; रक्त बड़ी बड़ी और कैशिक-धमनियाँ तथा शिराओंमें प्रवाहित होता रहता है। **रक्तके तीन विशेष काम दिखाई देते हैं।** जैसे—(क) खानेकी चीजें पच जाने बाद, उनके भीतरसे पुष्ट करनेवाले पदार्थोंको खींचकर धमनीकी राहसे शरीरके सभी अंशोंमें पहुँचा देना। (ख) साँसके साथ खींचा हुआ अम्लजान (oxygen) फेफड़ेसे लेकर समस्त तन्तु और कोषोंको प्रदान करना; क्योंकि हरेक तन्तुके निर्दिष्ट कामोंके लिये अम्लजानके सहारे उनके दहन कार्यकी जरूरत पड़ती है। इसके अलावा, तन्तुओंके दहनसे उत्पन्न हुए अङ्गारजान (Carbon dioxide) को लेकर शिराओंकी राहसे फेफड़ेमें पहुँचा देना। इसके बाद यह अङ्गारजान प्रश्वासके साथ निकल जाता है। (ग) शरीरके

सभी स्थानोंमें जो चय हुए जैव-पदार्थ रहते हैं, उनको शिरा-पथसे लेकर वृक्क-यन्त्र (मसाना—kidney) में पहुँचा देता है; इस तरह वे पेशाबके साथ निकल जाते हैं। अतएव, यह देखनेमें आता है, कि शरीरका पोषण करने और गन्दा मैल निकाल बाहर करनेके लिये रक्तकी बहुत बड़ी आवश्यकता है।

रक्तकी रासायनिक संयुति।

वजनके अनुसार १०० भाग रक्तमें ८० भाग पानी और २० भाग कठिन पदार्थ, खासकर यवक्षारजानसे उत्पन्न यौगिक-पदार्थ (Nitrogenous compound) हैं, उसका १० भाग हिमोग्लोबिन नामक लाल द्रव्य, ९ भाग प्रोटीड पदार्थ (खाद्य-पदार्थोंसे लिया हुआ जैव-पदार्थ) और बाकी १ भागमें बहुत थोड़े परिमाणमें मेद (fat), कार्बोहाइड्रेटस (शर्करा-श्रेणी), पार्थिव लवण और यूरिया (मूत्रक्षार) नामक तन्तु-ध्वंसका बचा हुआ भाग है। यह अजैव-लवण प्रधानकर क्लोराइड्स, सोडियम, फास्फेट और पोटासियम फास्फिटस हैं। उस हिमोग्लोबिनमें सूक्ष्म परिमाणमें लोहा भी रहता है और आक्सिजनको लेने और ठीक-ठीक यथा-स्थान रखनेका काम इस लोह के बिना हो ही नहीं सकता।

Elements अर्थात स्वाभाविक मौलिक पदार्थोंमें, जीव-देहमें हमलोग कितने ही मौलिक और यौगिक रूपसे प्राप्त हुआ करते हैं। जैसे—आक्सिजन, नाइट्रोजेन, हाइड्रोजेन, कार्बन सलफर, फास्फोरस, क्लोरिन, सोडियम, पोटैसियम,

कैलसियम, आयरन, सिलिकन, फ्लोरिन, लिथियम और मैंगेनीस। पहले तीन पदार्थ मौलिक और यौगिक—दोनों ही अवस्थाओंमें मौजूद रहते हैं, बाकीके सिर्फ यौगिक अवस्थामें ही दिखाई देते हैं।

जीव-देहके निर्माणके लिये खासकर दो पृथक श्रेणियोंके रासायनिक यौगिक पदार्थकी जरूरत होती है। (क) अजैव या पार्थिव पदार्थ; जैसे—खड़िया, मिट्टी, साधारण नमक, सिलिका इत्यादि। (ख) जैव-पदार्थ, जैसे—मैद, चीनी, श्वेतसार (starch), अण्डलाल इत्यादि। पार्थिव यौगिक पदार्थों में प्रधानत: पानी, अङ्गारकाम्ल (carbon dioxide), हाइड्रोक्लोरिक एसिड (नमकका तेजाब), सोडियम क्लोराइड (साधारण नमक), कैलसियम कार्बोनेट और कैलसियम फास्फेट दिखाई देते हैं। जैव-पदार्थों में शर्करा और श्वेतसारको साधारणत: कार्बो हाइड्रेटस कहा जाता है।

साँस लेना और छोड़ना (श्वास-प्रश्वास) प्रभृति सभी ऐच्छिक या अनैच्छिक (इच्छा-पूर्वक या बिना इच्छा किये हुए) कामकी उपयुक्त शक्ति पैदा करनेके लिये देह-तन्तुका दहन हुआ करता है। यह जलानेका काम श्वास-प्रश्वासके साथ लिये हुए अम्लजानके सहारे ही हुआ करता है। इस विश्वके सभी दहन-कार्य अम्लजानकी सहायतासे ही हुआ करते हैं और इन सब जले हुए तन्तुओंकी जगहपर खूनके दौरानद्वारा नये तन्तुओंका निर्माण हुआ करता है; इस प्रक्रियाके साथ एञ्जिनकी अच्छी तरह तुलना की जा सकती है।

जलते हुए कोयलेकी गर्मीसे पानीको भाफ बनाकर जो शक्ति पायी जाती हैं, उससे बहुत बड़े-बड़े जहाज बिना किसी बाधाके सागरको मन्थन करते हुए तेजीसे दौड़ते रहते हैं। एञ्जिनकी गति-शक्तिको जारी रखनेके लिये, ज्योंही कोयला जल जाता है, त्योंही नया कोयला उसमें डालना पड़ता है और पानी जब भाफमें बदल जाता है, तो दूसरा पानी डालना पड़ता है। जलनेकी क्रियासे कोयलोंका चय होनेके बाद जली हुई राख गिरती रहती है, इसी तरह जीव-देहमें भी सभी कामोंके लिये या तेल पैदा करनेके लिये तन्तुओंका दहन होता है और जलकर बची हुई मैल शरीरके नव-द्वारकी राहसे निकल जाती है। उन नष्ट हुए तन्तुओंकी जगहपर रक्त-प्रवाह नवीन-तन्तुके उपादान सब पैदा करता है। ये उपादान ही जैव और पार्थिव पदार्थ हैं और ये आवश्यक परिमाणमें और संयत-विभागके अनुपातसे विद्यमान रहते हैं और ग्रहण किये जाते हैं।

आहार-बिहारकी गड़बड़ी पैदा हो जानेपर—अथवा अन्यान्य कारणोंसे पार्थिव-उपादानोंकी कमी या परिमाणकी विचित्रता या विभागकी गड़बड़ी जब होती है, तभी स्वास्थ्यमें विकार पैदा होकर नाना प्रकारकी बीमारियां उत्पन्न हो जाती हैं इत्यादि।

अब जीव-देहमें इन सब **पार्थिव लवणोंका परिमाण और विभागके** अनुपातको समझनेकी जरूरत है—१००० ग्राम (१ ग्राम=१५.४३२ ग्रेन) रक्तकोषमें नीचे

लिखे परिमाणके और विभागके अनुसार पार्थिव-लवण सब पाये जाते हैं।

लौह	...	...	०.९९८
कैलि-सल्फ	...	...	०.१३२
„ म्यूर	...	...	३.०७९
„ फास्फ ट	...	...	२.३४३
नेट्रम-फास्फेट	...	...	०.६३३.
नेट्रम-म्यूर	...	...	०.३४४.
कैल्केरिया-फास	...	...	०.०९४
मैग्नेशिया-फास	...	...	०.०६०

अलग-अलग श्रेणियोंके तन्तु सब जिस तरह विभिन्न कार्योंके लिये बने हैं, उनके उपादानोंमें भी उसी तरहका प्रभेद हैं। जैसे:—

स्नायु-कोष (Nerve cells)—मैग्नेशिया-फास, कैलि-फास, नेट्रम और फेरम।

पेशी-कोष (Muscle-cells)।—मैग्नेशिया-फास, कैलि-फास, नेट्रम, फेरम और कैलि-म्यूर।

संयोजक तन्तु (Connective tissue)।—खासकर साइलिसिया।

स्थिति-स्थापक तन्तु (Elastic tissue)।—प्रधानतः कैल्केरिया-फ्लोरिका।

अस्थि-कोष (Bone-cells)—कैल्केरिया-फ्लूयोर, मैग्नेशिया-फास और अधिक मात्रामें कैल्केरिया-फास।

उपास्थि और श्लैष्मिक-कोष (Cartilage and mucous cells)—खासकर नेट्रम-म्यूर।

केश और चक्षु-कोष—और-और पार्थिव लवणोंके साथ लोहा।

प्रत्येक पार्थिव-लवणका एक-एक बँधा हुआ काम है और हरेकका कितने ही जैव पदार्थोंके साथ घनिष्ट सम्बन्ध रहनेके कारण,—खासकर उसी जातिके कोष और तन्तुओंसे मिलकर ये अपनी रासायनिक प्रक्रियासे शरीरकी बनावटके काममें सहायता पहुँचाते हैं। इसीलिये यह देखनेमें आता है, कि नेट्रम-फास शरीर-क्षेत्रमें जल उत्पन्न करता है, नेट्रम-म्यूर शरीर-क्षेत्रमें पानीका निवास बनाता है और नेट्रम-सल्फ शरीर-क्षेत्रसे पानीको हटा देता है। इसी तरह कैलि-म्यूरके साथ रक्तका अंश (fibrin) का घनिष्ट सम्बन्ध है और इस नमकके परिमाणु लगातार इस क्षेत्रमें क्रिया करते रहते हैं। कैलि-म्यूर नमकका परिमाण या विभागका अनुपात गड़बड़ा जानेपर इनकी कमीके कारण रक्तका जो फाइब्रिन बिगड़ जाता है, वह उस समय शरीरमें आमयिक विशृङ्खलता पैदा कर दिया करता है। और रक्त-प्रवाहसे अलग होकर नाक, फेफड़ा, मसाना, आँत प्रभृति राहोंसे निकलता है। इसी अवस्थामें-सर्दी, खाँसी, श्लेष्माकी अधिकता इत्यादि लक्षण

सब दिखाई देते हैं। रक्तमें अण्डलाल और दूसरे-दूसरे जैव-पदार्थों के साथ केलि-म्यूरर मिलकर फाइब्रिन या गिरी उत्पन्न करता है। इसके द्वारा रक्त-कणिकाएँ सब तन्तु-निर्माणके उपयोगी उपादानके रूपमें बन जाती हैं।

अण्डलालिक मूत्र-रोगमें (Brights disease), गड़-बड़ीका मूल कारण निकला हुआ अण्डलाल है। जैव-रसायनमें देखा जाता है, कि कैल्केरिया-फास्फेटके साथ अण्डलालका घनिष्ट सम्पर्क है; रक्त-प्रवाहमें नमकके परमाणुके निर्दिष्ट परिमाण जब घट जाते हैं, तो उससे सम्बन्ध रखनेवाला अण्डलालका हिस्सा एकदम निश्चेष्ट हो जाता है अर्थात उसमें जड़-भाव आ जाता है तथा वह मसानेकी राहसे निकला करता है। इस अभावको पूरा करनेके लिये केल्सियम फास्फेटके परमाणुका जब फिर प्रयोग किया जाता है, तो लवणकी शृङ्खला फिरसे स्थापित हो जाती है और अण्डलाल (जैव-पदार्थ) शरीरमें फिर नियमित रूपसे फैल जाता है।

शरीर-क्षेत्रकी जैव-किमितिकी क्रियापर ध्यान देनेसे ज्ञात होता है, कि शरीर-यन्त्रका गठन, पोषण और स्थितिके लिये दो पदार्थोंकी जरूरत रहती है और ये दोनों ही पदार्थ खूनमें पाये जाते हैं। जैसे—(क) **जैव-उपकरण**—मेद, अण्डलाल, शर्करा। (ख) **जल और अजैव-उपकरण**—पोटास, केलसियम, सिलिका, लोह, सोडियम

और मैग्नेशियम। इन सब पार्थिव-लवणोंके ठीक-ठीक रहे बिना, जैव-उपकरण सब स्वाधीन-भावसे कोष और तन्तुओंका निर्माण नहीं कर सकते। कोई तन्तु या समूची देह जल जानेपर, जलीय भाग वाष्पके आकारमें बदल जाती है और अदृश्य हो जाती है, जैव-उपकरण सब अङ्गारमें परिणत हो जाते हैं और पार्थिव-लवणोंका जलकर बचा हुआ भाग भस्म-रूपमें पड़ा रहा करता है।

बायोकेमिक दवाएँ और उनका प्रयोग।

इसके पहले हमलोगोंने देखा है, कि शरीरके निर्माण और धारणके लिये सभी उपकरण रक्तके सहारे सब शरीरमें फैलते हैं। ये सभी उपकरण धमनीका शरीर भेदकर आस-पासके तन्तुओंमें आकर मिल जाते हैं। जब पार्थिव-लवण उपयुक्त परिमाणमें शरीरमें रहता है, उस समय सभी तन्तु और कोष अपनी स्वाभाविक अवस्थामें अपना-अपना कार्य क्रिया करते हैं, ऐसी अवस्थामें मनुष्यका स्वास्थ्य भी एकदम ठीक रहता है।

रक्तके सहारे रहनेवाले इन सब उपकरणोंमेंसे कोई एक या एकसे अधिक न रहे या उसमें कमी पड़ जाये, तो किसी भी अङ्गमें गड़बड़ी पैदा हो जाती है। दर्द, ज्वर, सूजन, प्रदाह वगैरह बीमारियाँ पैदा हो जानेपर या उनका लक्षण प्रकट होनेपर, हमलोगोंको वह कमी मालूम होती है; पर रक्त-प्रवाहमें पार्थिव-लवणोंका परिमाण ठीक-ठीक रहने-

पर भी, किसी खास श्रेणीके तन्तुमें इस तरहकी कमी जब हो जाती है तो वह रक्त-प्रवाहसे अपने प्रयोजनके अनुसार वह नमक ले लिया करता है और इसीलिये बहुत ज्यादा चयकी वजहसे रक्त-भाण्डारमें उस खास नमकका स्वाभाविक भाग घट जाता है और रोगवाली अवस्था पैदा हो जाती है।

रक्तके सहारे रहनेवाले नमककी कमी या अभाव—चाहे किसी भी कारणसे क्यों न हो, जिसका लक्षण मालूम हो, उस लवणका चीण-द्रव अथवा सूक्ष्म-मात्राका प्रयोग करने-पर वह कमी या अभाव हटकर फिर स्वास्थ्य प्राप्त होजाता है। **यही प्रकृतिका नियम** है। शारीरिक-क्रिया ठीक-ठीक सुशृङ्खलित रखनेके लिये और स्वास्थ्यको ठीक-ठीक बनाये रख-नेके वास्ते शरीरके उपकरणोंकी मात्रा और विभागका अंश सभी सुशृङ्खलित रखना होगा। यह नियम सिर्फ पार्थिव-लवणके सम्बन्धमें ही नहीं प्रयोग होता, बल्कि जैव-उपकरणोंके सम्बन्धमें भी यही लागू होता है। हमलोगोंको मालूम हुआ है, कि मेद (fat), शर्करा (carbohydrates) और अण्डलाल (albumen) की मिलावटसे कोष और तन्तुओंके अवयव प्राप्त होते हैं ; पर इन सब पार्थिव-लवणोंके संयोगकी वजहसे उनमें उनकी श्रेणीके अनुसार गुण पैदा होते हैं, नहीं तो ये तन्तु एकदम निश्चेष्ट और जीव-देहमें रहनेके उपयुक्त नहीं रह जाते। हमलोग अपनी भोजन-सामग्रीसे ही नित्य-प्रति ये जैव-उपकरण प्राप्त करते हैं। यदि कोई दूसरी सभी भोजन-सामग्रियाँ त्यागकर सिर्फ मेद-जातीय खाद्य-पदार्थपर

निर्भर रहे, तो तीनों ही जैव-उपकरणोंके अनुपातसे शृङ्खला बिगड़कर रोग पैदा हो जानेकी सम्भावना पैदा हो जाती है।

जिन्हें खानेको नहीं मिला है, ऐसे मनुष्यको यदि सर-दर्द, ज्वर आदि हो जाये और उसके कारणका बिना पता लगाये केवल बाहरी लक्षणोंको देखकर ही दवा दे दी जाये, तो उससे रोगीको कोई भी फायदा न पहुँचेगा: बल्कि उससे जल्द ही उसकी मृत्यु हो जायगी। इस अवस्थामें उसको धीरे और थोड़ी मात्रामें, सहजमें पचनेवाली भोजन-सामग्री खिलानेपर उसकी बीमारी दूर हो जायगी और उसकी जान बच जायगी।

नैसर्गिक नियमसे किसी कोष या तन्तुको रक्त-प्रवाह जबर्दस्ती जैव या अजैव, कोई भी पदार्थ खिला नहीं देता। **ये तन्तु और कोष अपने-अपने आवश्यक पदार्थ रक्तके प्रवाहसे आप-ही-आप ले लेते हैं।** अजैव-लवणका परिमाण और अनुपात तो ऊपर जो सूची लिखी गयी है, उसमें दिखा दिया गया है। चिकित्साके काममें, लक्षण-सम्बलित रोग दूर करनेके लिये, ठीक-ठीक अजैव-लवण सूक्ष्म-परिमाणमें प्रयोग करना पड़ेगा। सुसलरकी दवा तैयार करनेकी प्रणाली देखनेसे ही यह सूक्ष्मत्व समझमें आ जायगा।

डाक्टर सुसलर कहते हैं—"सभी साध्य-रोग, तन्तु-स्थित और रक्त-अवलम्बित अजैव-पदार्थोंके प्रयोगसे आरोग्य किये

जाते हैं। किसी भी रोगकी उत्पत्तिकी वजह, किसी तरहके छत्रक, बीजाणु या जीवाणु उस स्थानपर मूल कारण है या नहीं? अर्थात उन सब छत्रक बीजाणु या जीवाणुके ऊपर रोगकी उत्पत्ति निर्भर करती है या नहीं?—बायोकेमिक चिकित्सामें इस सवालकी कोई भी सार्थकता नहीं है; क्योंकि यह चिकित्सा-प्रणाली सभी रोगोंकी जड़का संस्कार कर देती है। कोषोंको स्वाभाविक अवस्थामें लानेके लिये आवश्यक लवणका प्रयोग करनेके पहले, रोग-जीवाणु प्रभृतिकी उत्पत्तिके क्षेत्र-स्वरूप तन्तुओंका एकदम संस्कार कर दिया जाता हैं। लक्षण बतानेवाली दवाका प्रयोग करने-पर न्यायसङ्गत स्वाभाविक नियमसे अवश्य ही आरोग्य होगा। क्विनिन, पारा प्रभृति पदार्थ बहुत बार स्थूल-मात्रामें सेवन करनेकी वजहसे बढ़ी हुई दीर्घ-काल-स्थायी पुरानी बीमारी भी इन सब तन्तु-लवणोंका सूक्ष्म-मात्रामें प्रयोगकर आरोग्य की जाती है।"

बायोकेमिक मतसे चिकित्सा करनेके लिये तीन नियमोंका पालन करना आवश्यक है। यथा,—(क) चिकित्साके समय इस विषयमें जानकारी रखना कि किस-किस लवणकी गड़बड़ी हो गयी है। (ख) तन्तु द्वारा पूरा करने योग्य परिमाण और मात्राके सम्बन्धका ज्ञान। (ग) दवा तैयार करनेकी प्रणाली और प्रयोगकी प्रथाके सम्बन्धमें उपयुक्त शिक्षा।

रक्त-कणिका या कोषाणुके सूक्ष्म अवयवकी अपेक्षा भी अधिकतर जबतक पार्थिव-लवणोंका सूक्ष्म चूर्ण नहीं होता,

तबतक तन्तु या कोष द्वारा न तो वे ग्रहण किये जाते हैं और न वे ठीक-ठिकानेपर पहुँचते हैं। किसी रोगको आरोग्य करनेके लिये इस सूक्ष्मत्वकी कितनी अधिक जरूरत है, वह हमलोगोंके रोजाना खान-पानके सम्बन्धमें विचार करनेसे ही मालूम हो जायगा। खाद्य-पदार्थोंमें अजैव-लवण बहुत सूक्ष्म-परिमाणमें विद्यमान रहनेके कारण ही जैव-तन्तु उनको अपनी देहमें ग्रहण कर सकते हैं।

बचपनसे ही मनुष्यका सबसे श्रेष्ठ खाद्य दूध है। उसी दूधका विश्लेषण करनेपर देखा गया है, कि गायके एक सेर दूधमें प्राय: १/१६ ग्रेन लौह रहता है। अतएव, जो बच्चा रोज एक पाव दूध पीता है, उसे उस १/१६ ग्रेनका चौथाई भाग अर्थात कुल १/६४ ग्रेन लौह उस दूधसे प्राप्त होता है और इसी मात्रामें लौह उसके पोषण और वृद्धिमें सहायता पहुँचाता है। इसी हिसाबसे दूसरे-दूसरे पार्थिव-लवण भी कितनी सूक्ष्म-मात्रामें रहकर उस बच्चेका उपकार किया करते हैं, इसपर नजर डालनेसे ही आश्चर्यमें पड़ जाना पड़ता है।

नीचे लिखे बारह तन्तु-लवणोंका रोगमें प्रयोग किया जाता है।

कैल्केरिया-फास्फोरिका ··· $Ca_3 (PO_4)_2$

फास्फेट {
- फेरम-फास्फोरिकम ··· $Fe Hpo_4 + Fe_3 (Po_4)_2$
- कैलि-फास्फोरिकम ··· $K_2 HPO_4$
- नेट्रम-फास्फोरिकम ··· $Na_2 HPO_4 12 H_2O$

	मैग्नेशिया फास्फोरिका	... $Mg\ HPO_4\ 7\ H_2O$
म्यूरियेट्स या क्लोराइडस	कैलि-म्यूरियेटिकम	... KCL
	नेट्रम-म्यूरियेटिकम	... Na CL
सल्फेट्स	कैल्केरिया सल्फुरिका	... $Ca\ SO_4\ 2H_2O$
	नेट्रम-सल्फुरिकम	... $Na_2\ SO_4\ 10H_2O$
	कैलि-सल्फुरिकम	... $K_2\ SO_4$.
फ्लोराइड	कैल्केरिया-फलुयोरिका	... $Ca\ F_2$
विशुद्ध अयौगिक सिलिका	साइलिसिया	... $Si\ O_2$

इस सूचीसे मालूम होता है, कि सिलिकाके सिवा सभी लवण यौगिक (मिलावटकी अवस्थामें) व्यवहृत हुए हैं। कैल्केरिया-फास्फोरिकाके कैमितिक संकेतसे प्रमाणित होता है, कि Ca_3 अर्थात कैलसियम मूल पदार्थके तीन परमाणुओंके साथ $(PO_4)_2$ अर्थात—फास्फोरिक एसिडके दो परमाणु मिलाकर यह लवण तैयार हुआ है।

इन सब लवणोंका स्थूल मात्रामें प्रयोग करनेपर, तन्तु और कोष उन्हें ग्रहण नहीं कर सकते। अगर स्थूल मात्रामें लौहका प्रयोग किया जाता है, तो उसका अधिकांश मलके साथ निकल जाता है। खासकर स्थूल मात्रामें पेटमें जानेपर जब यह पाचक रसके साथ सम्मिलित होता है, तो वह एक दूसरे ही तरहके पदार्थमें परिणत हो जाता है। इसीलिये, उससे इच्छाके अनुसार फायदा नहीं दिखाई देता ;

पर दूधकी चीनीके साथ द्रवयोग-विश्लेषण (विचूर्ण—trituration) प्रक्रियासे सूक्ष्म बनाये हुए अजैव-लवण पेटमें जानेके पहले मुँहके भीतरी भागके, कण्ठ, यदा और जीभकी उपत्वचाके तन्तु और कोषोंसे भीतर ले जाते हैं और उनके पासकी कैशिक धमनीके सहारे कि प्रवाहके साथ मिल जाते हैं और जिन तन्तुओंमें उनकी कमी रहती हैं, वहाँ पहुँचकर जो क्षय हो गया है, उसे पूर्ण किया करते हैं। बायोकेमिक चिकित्सा-प्रणालीकी यही परम सुविधा है।

इसके अलावा रक्तका **जीव-पदार्थ** (जैसे—अण्डलाल) जब इस प्रक्रियासे खूब ही सूक्ष्म हो जाता है, तो उसके मौलिक उपादान (elements) विश्लिष्ट हो पड़ते हैं; पर **पार्थिव अजैव-लवण**को जब सूक्ष्म किया जाता है, तो उस समय यह भय बिलकुल ही नहीं होता; उन्हें चाहे कितना ही रगड़ा और घोंटा क्यों न जाये, कितने ही परिमाणमें वह सूक्ष्मीकृत क्यों न हो, यौगिक पार्थिव लवणके हरेक अणु परमाणु कभी भी अपने उपादानसे अलग नहीं होते।

बायोकेमिक दवाओंका सूक्ष्मतम मात्रामें ही प्रयोग करना चाहिये; जरूरत होनेपर बार-बार प्रयोगकर इच्छानुसार फल प्राप्त किया जा सकता है; पर बड़ी मात्रामें यदि उनका प्रयोग किया जाता है, तो यह मात्राकी अधिकता ही रोगके आरोग्यमें गड़बड़ी मचा देती है और चिकित्सामें सफलता नहीं प्राप्त होती।

औषध-प्रस्तुत-प्रक्रिया।

सूत्र

य। ट्राइटुरेशन (विचूर्ण) द्वारा २, ६, १२, ३० दशमिक क्लोराइड ऊँचे चढ़ाकर, विचूर्ण अवस्थामें या टिकिया (tablet) आकारमें इन सब लवणोंको प्रयोग किया जाता है।

एक भाग विशुद्ध पार्थिव-लवणके साथ ९ भाग दूधकी चीनी मिलाकर और एक घण्टातक खलमें घोंटनेपर प्रथम दशमिक (१०) शक्ति तैयार होती है। इस प्रथम दशमिक क्रमके १ भागके साथ दूधकी चीनी ९ भाग मिलाकर फिर एक घण्टातक घोंटनेपर दूसरा दशमिक क्रम तैयार होता है। इसी तरह लगातार पहलेके क्रमकी दवाके १ भागके साथ दूधकी चीनी ९ भाग मिलाकर और एक घण्टातक घोंटकर बादका क्रम तैयार किया जाता है।

यह विचूर्ण एक मटरकी मात्रामें (प्रायः ५ ग्रेन) जीभ-पर डाल लेना या इसी मात्राकी टिकिया (tablet) चबाकर खाना पड़ता है। बालक-बालिकाओंको उनकी उमरके अनुसार इसकी आधी या चौथाई मात्राका प्रयोग करना चाहिये। डाक्टर सुसलर ये सब दवायें सूखी अवस्थामें अथवा पानीमें गलाकर प्रयोग करते थे। बहुतोंका ऐसा मत है, कि आधा गिलास अन्दाजन पानीमें (प्रायः ८ आउन्स) १०-१५ ग्रेन विचूर्ण या २-३ टिकियाएँ गलाकर, उसीसे यदि एक चम्मचकी मात्रामें प्रयोग किया जाये तो बहुत ही शीघ्र फायदा होता है। नयी बीमारीमें, आध घण्टासे लेकर

दो घण्टोंके अन्तरसे दवाका प्रयोग किया जाता है। पुरानी बीमारीमें, दिनमें ३-४ बार सेवन करना ही काफी होता है; गरम पानीमें गलाकर पिलानेसे बहुत जल्द फ़ायदा होता है।

यदि रोगोंके लक्षणोंके द्वारा ऐसा मालूम होता है, कि एकसे अधिक दवाओंकी जरूरत है, तो वे दो दवाएँ या इससे भी अधिक दवाएँ एकके बाद दूसरी इसी ढङ्गसे प्रयोग करनी चाहियें, पर उन सबको एक साथ मिलाकर कभी भी प्रयोग न करना चाहिये।

कैल्केरिया फ्लुओरिका ।

(Calcarea Fluorica, Calcium Flouride Flour-spar)

यह एक प्रकारका खनिज-पदार्थ है। कई रङ्गोंका— स्फटिककी तरह, सीसा धातुकी शिरा लगा हुआ, छः पहलू या आठ पहलूकी तरह होता है; पानीमें नहीं गलता, पर गन्धक-का तेजाब मिलाकर, वियोजित होनेपर—"हाइड्रो-फ्लुओ-रिक-एसिड" पैदा करता है। आगका संयोग होनेपर इसमेंसे फास्फोरस-सी ज्योति निकलती है। इसका आपेक्षिक गुरुत्व ३'४ है और इसमें ५८'२१ अंश कैलसियम वर्त्तमान रहता है।

जीव-शरीरमें यह लवण—अस्थि-गात्र, दन्त-गात्र तथा स्थिति-स्थापक तन्तुमें और अधोत्वचा, धमनी तथा शिराओंके तन्तुमें तथा संयोजक तन्तुमें मौजूद रहता है।

अगर जैव-तन्तुके साथ इसका जो सम्बन्ध है, उसमें किसी तरहकी गड़बड़ी हो जाती है, तो उससे सम्बन्ध रखनेवाले स्थिति-स्थापक तन्तुओंका स्थायी प्रसारण हो जाता है अथवा उनमें ऐसी शिथिलता आ जाती है, मानो वे जीर्ण हो गये हैं। अगर संयोजक तन्तु या लसिकाओंमें इस लवणकी कमी पड़ जाती हैं तो शिराओंकी सूजन (varicose), बवासीरका मसा, अर्बुद (tumor), ग्रन्थियोंमें कड़ापन इत्यादि लक्षण सब प्रकट हो जाते हैं। तलपेटके स्थानका ढीलापन और तलपेटका झूल पड़ना, जरायुसे रक्त-स्राव होना तथा प्रसवके बादका प्रसवान्तिक दर्द होता है। इस लवणका प्रयोग करनेपर तन्तुओंकी संकोचन-शक्ति फिरसे वापस आ जाती है और उसकी स्वाभाविक क्रिया फिर होने लगती है। उस समय निकले हुए रोग पैदा करनेवाले पदार्थ सब अलग होकर लसिका द्वारा खींच और सोख लिये जाते हैं और धीरे-धीरे शरीरसे निकल जाते हैं; इससे एक तरहका काम और भी होता है। अर्थात—साँसके साथ भीतर खींचा हुआ अम्लजान (oxygen) और जैव-तन्तुका संयोग होकर तथा दहनकी क्रियाकी वजहसे जो गन्धकका तेजाब पैदा होता है, उससे कैल्केरिया-फ्लुओरिकाके परमाणुओंका वियोजन होता है। उत्क्षिप्त फ्लुओरिक-एसिड

और पैदा हुए उद्जानका सम्मिलन होकर हाइड्रो फ्लुओरिक एसिड पैदा होता है और उससे आमयिक पदार्थ गल जाते हैं; इसके बाद यह गला हुआ पदार्थ लसिकाएँ ग्रहण कर लेती हैं और वे पेशाबके साथ निकल जाते हैं।

जे० बी० बेल साहबने होमियोपैथिक प्रणालीसे इस लवणकी परीक्षा की थी। होमियोपैथिक चिकित्सामें इसका भरपूर व्यवहार हुआ करता है। गलगण्ड (घेघा); स्तनका कड़ा अर्बुद; जन्मके उपदंशके रोगीके मुँहके भीतर और कण्ठमें जखम और दर्द-भरा हड्डीका जखम (caries of the bones); यक्ष्मा; नश्तर लगवाने बाद असमान जोड़को रोकना; किसी चोटवाली जगहपरकी हड्डीमें अर्बुद निकलना; जरायुका अपनी जगहसे हट जाना।

विशेष और निर्देशक लक्षण।

मन।—वृथा ही आशङ्का कि धन नष्ट हो जायगा; बहुत अधिक मानसिक सुस्ती; रोगी अर्थ-लोलुप हो जाता है; अव्यवस्थित चित्त बना रहता है।

मस्तक।—माथेमें कड़े उद्भेद; नये पैदा हुए बच्चेके माथेमें रक्तार्बुद; माथेमें गहरी चोट लगनेकी वजहसे, वहाँकी हड्डीमें रूखी, असमान, कड़ी गांठकी तरह सूजन और दर्द।

आँख।—ऐसा मालूम होता है, मानो आँखके सामने छोटी-छोटी चमकीली लहरें नृत्य कर रही हैं या

आगकी चिनगारियाँ उड़ रही हैं। आँखोंका प्रदाह (आँख उठना), कनीनिकापर बूंदकी तरह उद्भेद; मोतियाबिन्द; पलकोंपर कोमल अर्बुद; कण्ठमाला रोगसे उत्पन्न कनीनिकाका प्रदाह; इसके साथ ही गुटिका दोष भी रहता है।

कान ।—कानसे पुराना पीवका स्राव, कर्ण-पटह-पर खड़ियाकी तरह पदार्थ इकट्ठा होना; शङ्खास्थिके पासकी कानकी छोटी हड्डी और चूड़ाकृति अस्थिका कड़ापन; इसके साथ ही कानसे कम सुन पड़ना; कानमें गुन-गुन आवाज और गम्भीर गरजकी आवाज़ आना।

नाक ।—नया या पुराना पीनस रोग; माथेकी सर्दीके साथ गाढ़ा बलगम निकलना; सूखी सर्दी; बहुत ही बदबूदार गाढ़ा हरे रङ्गका या पीली आभा लिये ढेला-ढेला बलगम निकलना; नाककी शीर्णताके साथ प्रदाह; खासकर नाकमें बहुत अधिक खरोंट या पपड़ी जमना।

मुख-मण्डल ।—गालोंमें कड़ी सूजन; जबड़ा या हन्वस्थिका फूल जाना, कड़ा हो जाना और उसमें दर्द।

मुँहके भीतर ।—दाँतकी ज़ड़ या मसूढ़े फूले, दर्द-भरे, इसके साथ ही हन्वस्थिका फूलना और कड़ा हो जाना; दाँतमें दर्द, खाने-पीनेका पदार्थ छू जानेपर दर्दका बढ़ना; दाँतोंका बहुत ही ढीला पड़ जाना, इसमें दर्द रहता है; दाँतका ऐनामिल (enamel—ऊपरका चमकदार पदार्थ) क्षय हो जाना, रुखड़ा हो जाना या टेढ़ा-मेढ़ा हो

जाना ; मुँहके कोनेमें जखम ; जीभ फटी-फटी, दर्दसे भरी या बिना दर्दके ही ; जीभपर कड़ी बतौड़ी या अर्बुद ; जीभका प्रदाह घट जानेपर उसका कड़ा हो जाना।

कण्ठ।—दाने-भरा कण्ठनालीका प्रदाह ; तालु-मूल और उसके बगलकी ग्रन्थिमें लगातार गाढ़ा बलगम चिपका रहना ; जलन और दर्द, गरम पीनेकी चीजें पीनेपर आराम मालूम होता है, पर ठण्डा पानीय पीनेपर तकलीफ बढ़ जाती है ; उप-जिह्वा लम्बी हो जाती है और गलेके भीतर हमेशा ही एक तरहकी खुजलाहट मालूम होती है। डिफ्थीरिया रोग श्वास-नलीमें बहुत ही तेजीसे फैल जाया करता है।

पाकाशय।—कण्ठसे गाढ़ा बलगम निकलनेकी चेष्टा करनेपर हिचकी आने लगती हैं, यह कमजोरी लाती है और दिनमें कितनी ही बार हिचकी आया करती है ; खाया हुआ पदार्थ अजीर्ण अवस्थामें वमन हो जाया करता है ; बच्चोंका वमन ; पेट फूलना ; अरुचि और अजीर्ण ; बहुत परिश्रमी विद्यार्थियोंका पाचनका विकार, खानेके बाद ही बेचैनी मालूम होने लगना और मिचली होने लगना ; माथेका काम बहुत अधिक करनेकी वजहसे मस्तिष्ककी थकावट और अजीर्ण ; अन्नका अच्छी तरह पाचन न होना।

उदर।—बहुत वायु होना ; दाहिनी कोंखमें दर्द और उसी करवट सोनेपर रोगका बढ़ना ; गर्भवती स्त्रियोंके

तलपेटमें वायु होना और इसी वजहसे बेचैनी मालूम होना ; वात-रोगियोंका अतिसार ; मलद्वारमें इस ढङ्गकी खुजलाहट मानो छोटी-छोटी कृमि काट रही हैं ; मलद्वारमें फटे घाव ; मलनालीके निचले भागमें फटा घाव, उसमें बहुत अधिक दर्द रहता है ; खूनी बवासीर ; भीतरवाली बवासीर, जिससे किसी तरहका भी स्राव नहीं होता ; पीठके निचले अंशमें लगातार दर्द बना रहना, कब्जियत ; बवासीरके साथ-ही-साथ माथेमें खूनका दबाव।

मूत्र-यंत्र।—बार-बार पेशाब लगता है, बहुत ज्यादा पेशाब होता है, पेशाब थोड़ा, रङ्गका गहरा और उसमें बहुत तेज गन्ध रहती है।

पुं-जननेन्द्रिय।—आबमजूल (Hydrocele) ; अण्डकोषमें सूजन और कड़ापन ; उपदंश ; उपदंशके जखमके साथ, जखमवाली जगहका कड़ा हो जाना ; यह इस दवासे बहुत जल्द कोमल हो जाता है। बच्चे और बालकोंको जन्मसे ही आये हुए उपदंशके उपसर्ग-स्वरूप मुँहका घाव इत्यादि।

स्त्री-जननेन्द्रिय।—जरायुका अपनी जगहसे हट जाना ; बन्द-रोग अर्थात—ढीलापनकी वजहसे जरायुका थोड़ा-सा निकलना। जरायु और उसमें खिंचाव मालूम होना, जरायुमें नीचेकी ओर उतरनेवाला दर्द ; बहुत अधिक रजः-स्रावकी अवस्थामें जरायुकी संकोचन-शक्ति बढ़ा देनेके लिये

यह दवा बहुत ही विख्यात है; जरायुकी निश्चेष्टताकी वजहसे प्रसवके बादका दर्द दब जाता है और इससे फूल या खूनके थक्के आदि निकल आनेमें सहायता प्राप्त होती है।

श्वास-यंत्र।—श्वासनलीकी खुजली; श्वासनलीका सूखापन और स्वरभङ्ग; कालो (क्रूप) खाँसी; आक्षेपवाली खाँसी; खाँसीके साथ छोटे-छोटे पीली आभा लिये गाढ़े बलगमके टुकड़े निकलना; सोनेपर कण्ठमें खुजली और उपदाहका बढ़ जाना; प्रकृत क्रूप-रोग (डिफ्थीरिया) की यह प्रधान दवा है। श्वास-कृच्छ्रता, श्वासनलीका ऊपरी भाग रुका हुआ मालूम होता है अथवा ऐसा मालूम होता है, मानो किसी मोटे आवरणके भीतरसे साँस ले रहा है; उपजिह्वा बहुत ही बढ़ी हुई, गलनलीका पिछला भाग भूल पड़ता है।

हृद्-क्रिया।—हृत्पिण्डका आयतन बढ़ जाना; हृद्-कम्पन; कैल्केरिया-फ्लुओरिकासे हृदावरक झिल्ली—(endocardium) के ऊपर जमे हुए खराब तन्तु हट जाते हैं और हृदावरक झिल्ली स्वाभाविक अवस्थामें आ जाती है। धमनीका अर्बुद और रक्तवहा-नाड़ीके प्रसारणकी अवस्थाकी यह प्रधान दवा है; शिरार्बुद और शिराका फैल जाना; धमनीका अर्बुद; हृद्-कपाटकी बीमारियाँ; यक्ष्मासे पैदा हुए विष द्वारा हृत्पिण्ड और रक्तवहा-नाड़ीका विषैला हो जाना और उसकी अभिभूत अवस्था।

गर्दन और पीठ ।—गर्दनकी ग्रन्थियोंकी पत्थरकी तरह कड़ी अवस्था ; छोटी-छोटी गण्डमाला ; पुराना कटि-वात (Lumbago) ; चलनेकी चेष्टा करनेपर तकलीफका बढ़ना, पर लगातार चलते रहनेपर घटना ; पीठके नीचे-वाली जगहपर जलनके साथ दर्द ; अस्थिमय अर्बुद ; विकृत अस्थि (Rickety) वाले बच्चोंकी—उरु-देशकी अस्थिका टेढ़ापन ।

हाथ-पैर ।—कलाईके नीचेवाले भागमें कोषबद्ध—अर्बुद और गुटिकाएँ ; हाथकी अंगुलीकी सन्धियोंमें वातकी वजहसे सूजन ; अंगुलीकी हड्डीका बढ़ना ; घुटनेकी सन्धिमें तैल-स्रावी झिल्लीका (Synovial membrance) का पुराना प्रदाह ; पुराना साइनोवाइटिस ; हाथ पैरकी हिलानेपर सन्धिकी जगहपर दर्द ; अंगुलीकी हड्डी सहजमें ही अपनी जगहसे हट जाती है ; अस्थिमें पीव पैदा हो जाना ; कोहनीकी सन्धि (elbow-joints) में सूजन ; हिलानेपर रगड़ खानेकी तरह कर्कश आवाज, उसमें तैल-रसका स्राव न होना ; अंगुलीमें अस्थि-अर्बुद ; दोनों पैरकी हड्डीमें अर्बुदकी तरह कोई चीज बढ़ जाना ; घोड़ोंका "स्पेविन" नामक अस्थि-रोग ।

नींद ।—बेचैन नींद ; सपनेमें नयी-नयी जगहें और दृश्य देखता है ; आनेवाली विपत्तिकी आशङ्काके साथ स्पष्ट सपने ।

चर्म ।—विशेषकर सफेद रङ्गकी त्वचा रहती है; तलहत्थी फटी फटी; मोटे चमड़ेवाली जगहें फटीं; पीव-भरे जख्मके चारों ओरके स्थान कड़े और लचीले नहीं रहते; ऊँचे किनारेवाले कठिन जख्म; चारों ओरका चमड़ा बैंगनी रङ्गका हो जाता है और फूला रहता है; चर्म मोटा और पत्थरकी तरह कड़ा; स्तनकी ग्रन्थिका बढ़ना; पत्थरकी तरह कड़े अर्बुद; बीच-बीचमें विसर्पके दाने निकल आना; नासूर; गाढ़ा हरी आभा लिये पीव; फोड़े आदिमें पीव पैदा हो जाने और बाहरी कड़ापन रहनेपर यह दवा ज्यादा फायदा करती है। हृत्पिण्डकी बीमारीकी वजहसे उदरी-रोग।

ज्वर ।—तन्तुओंकी शिथिलताके साथ ज्वर; ज्वरके प्रत्यक्ष कारणकी उपयोगी दवाके साथ कैल्केरिया-फ्लुओरिका अन्तर देकर व्यवहार किया जाता है।

ह्रास-वृद्धि ।—बैठे रहने और ऋतु-परिवर्त्तनके समय बढ़ना; उत्ताप और सेंकसे घटना।

प्रयोग ।—३ री, ६ ठी और २०० शक्तिका हमेशा व्यवहार होता है। अस्थि-सम्बन्धी रोगोंमें ३० और २०० द्वारा बहुत फायदा दिखाई देता है। मलद्वारके फटे घाव, बवासीर, शिराओंका फूलना, अंगुल-बेढ़ा इत्यादि रोगोंमें इसके बाहरी प्रयोगसे फायदा होता है। ३ री या ६ ठी शक्तिका विचूर्ण २० ग्रेनकी मात्रामें लेकर, ६ आउन्स पानीमें

गलाकर, उसमें साफ कपड़ा या रूई भिंगो कर उस जगहपर लगाना चाहिये; सूख जानेपर फिर उसी पानीसे तर कर देना चाहिये।

कैल्केरिया-फास्फोरिका।

(Calcarea Phosphorica, Calcium Phosphate, Phosphate of lime).

जगद्-विख्यात चिकित्सक हेरिङ्ग साहबने इस लवणको तैयारकर होमियोपैथिक नियमके अनुसार इसका प्रूविङ्ग या परीक्षा की थी। चूनेके पानीमें बूंद-बूंद डाइलूटट फास्फोरिक ऐसिड डालकर नीचे जो सफेद-सफेद पदार्थकी तली जमती है, उसे संग्रह कर लिया जाता हैं और उस चुआये हुए पानीमें धोकर "वाटर-बाथ" नामक यन्त्रमें सुखा लिया जाता है; यही विशुद्ध फास्फेट आफ लाइम या कैल्केरिया-फास्फोरिका है।

नर-कङ्कालकी हड्डियोंमें सैंकड़े ५७ भाग "फास्फेट आफ लाइम" है। जीव-शरीरमें प्रवेशकर यह अण्डलालके साथ मिल जाता है और अस्थि तथा तन्तुओंमें अण्डलाल बहन कर ले जाता है। शरीरकी बाढ़ और पोषणका यह एक प्रधान उपकरण है। रक्त रस और रक्त-कणिका, लार, पाचक-रस, अस्थि, संयोजक-तन्तु, दाँत, दूध इत्यादि जैव-

पदार्थोंमें यह यथेष्ट पाया जाता है; इससे हाड़ोंमें कड़ापन पैदा होता है।

बचपन, यौवन और बुढ़ापा—इन तीनों ही अवस्थाओंमें "केल्केरिया-फास" अत्यन्त उपयोगी औषध है। देरसे दाँत निकलना और उस समयकी बहुत-सी बीमारियाँ, अस्थि-सम्बन्धी रोग, टूटी हुई हड्डीका जोड़ लगनेमें देर होना, किसी नयी बीमारीके बाद कमजोरी, पुरानी क्षय करनेवाली बीमारी, कण्ठमाला धातु, हरित्-रोग (chlorosis), यक्ष्मा इत्यादि रोगोंमें यह दवा लाभदायक है।

अन्यान्य अवयवोंके हिसाबसे माथा बड़ा, माथेके पीछेवाले स्थानकी हड्डी बहुत पतली और कोमल, कागजकी तरह लचीली, करोटीकी हड्डीका जोड़ खुला रहता है, माथेमें बहुत ज्यादा पसीना होता है, चेहरा बदरङ्ग, आँखके चारों ओर नीले रङ्गका घेरा; बच्चा बराबर लगातार स्तनका दूध पीता रहना चाहता है, पर स्तनका दूध पीनेके बाद तुरन्त ही नाभीकी जगहपर और उदरमें दर्द हो जाता है और इसी वजहसे वह चिल्लाकर रो उठता है। उदर पोला और भीतर धँसा, औदरिक ग्रन्थियाँ बढ़ी हुईं; दिनके समय सोता और रातमें बेचैन रहता है; गर्दन इतनी क्षीण और कमजोर रहती है, कि माथा सीधा नहीं रख सकता, माथा एक ओर लटक जाता है। बच्चेका अकाल-वार्द्धक्य, त्वचा ढीली और सिकुड़ी, सूखी और ठण्डी; कण्ठमाला और अस्थि-रोग पैदा होनेकी सम्भावना; गुल्फ-सन्धिकी कम-

जोरीकी वजहसे बच्चा देरसे चलना सीखता है; कार्श और मस्तकोदक (Hydrocephalus) रोग होनेकी सम्भावना; कमरके पास मेरुदण्डकी कमजोरीकी वजहसे रोगी तनकर सीधा बैठ नहीं सकता।

इसमें स्वास्थ्यको फिरसे ठीक-ठिकाने ला देनेकी अद्भुत-शक्ति है। रक्तके लाल कणकी पहलीवाली अवस्थामें जब वह श्वेत भ्रूणावस्थामें रहती है, तब इस लवणके द्वारा ही उसका पूरा-पूरा पोषण और वृद्धि हुआ करती है। जीर्ण, क्षय करनेवाले और प्रलेपी (hectic) रोगमें, रोगके बादकी कमजोरीमें तथा पेशाबके साथ बहुत अधिक फास्फेट निकलनेपर या बार-बार गर्भ होनेके कारण कमजोरी आ जानेपर अथवा बहुत दिनोंतक स्तनका दूध पिलानेपर यदि दुर्बलता आ जाये और बहुत अधिक रजःस्राव और प्रदरकी वजहसे शरीर क्षीण हो जानेपर इससे बहुत फायदा होता है।

बुढ़ापेमें त्वचाकी खुजली, योनिकी खुजली, स्नायविक, दुर्बलता, यक्ष्माके साथ फेफड़ेका कमजोर पड़ जाना, रातमें पसीना, खून मिली खाँसी, नव-विवाहित युवकोंका बहुत अधिक मैथुन करनेके कारण शरीरका क्षय हो जाना, स्त्रियोंमें अधिक कामेच्छा तथा जिनको हस्त-मैथुनका अभ्यास पड़ गया है, उनकी बीमारीमें लाभदायक है। बहुत तरहकी ऐंठन और दर्दोंमें इसका प्रयोग किया जाता है। यह मैग्नेशिया-फास्फोरिकाका अनुपूरक है।

विशेष और निर्देशक लक्षण।

मन।—कैल्केरिया-फास्फोरिकाको बतानेवाली सब बीमारियोंमें मानसिक उद्वेग स्पष्ट और साफ-साफ दिखाई देता है। स्मरण-शक्ति घट जाती है; बच्चे और बालक-बालिकाएँ क्रोधी, हमेशा चिड़चिड़े बने रहते हैं; बुद्धिहीन, सहजमें ही कुछ भी समझ नहीं सकते। शोक, कलह, अपमान, निराशा प्रभृतिके कारण शारीरिक और मानसिक रोग, लगातार स्थान बदलते रहनेकी उत्कण्ठा, घरमें रहनेके समय बाहर जाना चाहता है और बाहर जानेपर घर लौट आना चाहता है।

मस्तक।—बुढ़ापेके कारण सरमें चक्कर आना; सर-दर्द, खासकर माथेकी हड्डीकी सन्धिके स्थानमें दर्द ज्यादा मालूम होता है; आकाशकी अवस्था बदलनेके साथ-ही-साथ सर-दर्दका बढ़ना; विद्यार्थी, बालक-बालिकाओंको जवानी आनेके साथ-ही-साथ सर-दर्द; पेट फूलनेके साथ सर-दर्द; ब्रह्मरन्ध्रकी जगहपर इतनी ठण्डक मालूम होना मानो एक टुकड़ा बर्फ रखा हुआ है। माथेकी हड्डीकी सभी सन्धिवाली जगहें बहुत दिनोंतक मिलती नहीं हैं; बहुत ही बड़ा माथा; मस्तकास्थिकी यक्ष्माकी वजहसे कोमलता और उसका क्षय होते जाना; कण्ठमाला धातुवाले रोगीके माथेमें जखम; पुराना मस्तिष्कोदक (Hydroce-

phalus) रोग, इसकी नयी अवस्थामें भी इसका प्रयोग होता है और प्रतिषेधकके रूपमें भी इससे फायदा दिखाई देता है ; माथेमें जगह-जगहके केश उड़ जाते हैं।

आँख।—आँखोंकी चकड़नके रोगमें अगर मैग्नेशिया फास्फोरिकासे फायदा न हो तो इस लवणसे फायदा होता देखा गया है। दृष्टि-शक्तिकी क्षीणता, गैसकी रोशनीमें पढ़नेमें तकलीफ होती हैं ; कण्ठमाला (स्क्राफुला) रोगवाले रोगीकी आँखोंका प्रदाह ; रोशनीका सहन न होना ; कनीनिकाका फैलनेवाला गदलापन।

कान।—कानका बाहरी अंश हमेशा ही ठण्डा रहता है ; कानसे लगी हड्डीमें दर्द और तकलीफ ; वातके रोगियोंका और कण्ठमाला दोषवाले बालक-बालिकाओंका कानका दर्द।

मुँहके भीतर।—तालमूल-ग्रन्थिकी (tonsils) सूजनकी वजहसे मुँह फाड़नेमें तकलीफ़ ; सवेरे मुँहका स्वाद बिगड़ा ; दाँत निकलनेमें देर और तेजीसे दाँतका क्षय होते जाना ; जीभपर सफेद रङ्गकी मैल।

मुख-मण्डल।—बालिका और युवतियोंके चेहरेके मुँहासे, चेहरेका रङ्ग सफेद, पीली आभा लिये या मिट्टीकी तरहका ; चेहरेपर ठण्डा पसीना अधिक होना।

कण्ठ।—ग्रन्थिका बढ़ना ; लगातार स्वर-भङ्ग ; कुछ निगलनेके समय गलेमें सभी जगह दर्दका फैल जाना ;

तालुमूल-ग्रन्थि बढ़नेका पुराना रोग ; कण्ठके भीतर ढीलापन और दर्द भरा रहना।

पाकाशय।—अस्वाभाविक भूख ; बच्चा बराबर स्तन पीना चाहता है, पर बार-बार और सहजमें ही के कर देता है ; पेटमें वायु और कलेजेमें जलन ; भोजनके बाद तकलीफ ; दबानेपर दर्द अधिक होना। मन्दाग्नि (डिस्पेप्शिया), पाकाशयमें गड़बड़ी और बेचैनी मालूम होना, कुछ खा लेने और डकार आनेपर थोड़ी देरके लिये तकलीफका घटना ; उपवास करनेपर दर्द मेरुदण्डतक फैल जाता है। कुल्फी बरफ और बरफका पानी पीनेपर वमन हो जाता है। न पचनेवाली चीजें खानेकी तेज़ आकांक्षा ; भोजनके बाद तकलीफ, अतिसार और सर-दर्द।

उदर और मल।—बच्चोंकी विसूचिका ; मल पानीकी तरह, गरम, बदबूदार, बहुत ज्यादा परिमाणमें, बड़ी आवाजके साथ निकलता और छिटक पड़ता है। दुबले-पतले बच्चोंका गरमीके दिनोंका अतिसार, दाँत निकलनेके समय पतले दस्त आना, मलका रङ्ग हरा, श्लेष्मा-मिला, अजीर्ण मल और बदबूदार वायु निकलना। वक्षके उपसर्ग कम पड़ जानेपर मलद्वारमें फटा घाव हो जाता है और मलद्वारके उपसर्ग घट जानेपर, वक्षकी बीमारी बढ़ जाती है। ऋतु-परिवर्त्तनके समय ग्रन्थियोंमें दर्द और उपसर्गोंका बढ़ना ; वृद्धोंकी कब्जियतके साथ मानसिक सुस्ती ; सरमें

चक्कर आना; माथेमें दर्द और पुरानी खाँसी; शीर्ण रोगियोंका आँत उतरना; बच्चोंकी नाभिसे खून निकलना; पित्त-पथरी और क्रिमि पैदा होना और रस बहनेवाली बवासीर।

मूत्र-यन्त्र।—सारे शरीरकी कमजोरीके साथ—शय्यामें पेशाब कर देना, बार-बार पेशाब लगना, बालक और वृद्धोंको अनजानमें पेशाब हो जाना। बहुत ज्यादा पेशाब होनेके साथ-ही-साथ कमजोरी; "ब्राइट-रोगमें" अर्थात—पेशाबके साथ अण्डलाल निकलना (कैलि-फासके साथ पर्याय-क्रमसे प्रयोग करनेपर फायदा होता है)। दुबले, कम खून-वाले रोगीका पुराना प्रमेह, लिङ्गमें खुजली और दर्द; अण्डकोषमें सूजन, पानी भरना (आबमजूल), एकशिरा। इस लवणका नियमित रूपसे सेवन करनेपर मूत्राशयकी पथरी पैदा होना बन्द हो जाता है।

स्त्री-जननेन्द्रिय।—युवतियोंको बहुत जल्दी रजो-दर्शन हो जाना, बहुत ज्यादा चमकीला रक्त, दो सप्ताहके अन्तरसे ऋतु-स्राव; ऋतु-स्रावके पहले योनिमें टपक और कामेच्छा पैदा हो जाती है; कण्ठमाला धातुग्रस्त बालक-बालिकाओंमें हस्त-मैथुनकी इच्छा; जवान, पूरी उमरकी स्त्रियोंको देरसे ऋतु होना, स्रावका रङ्ग काला, बहुत कमजोरी और कष्ट, वातका दर्द; ऋतुके पहले और समय और कभी-कभी पाखाना-पेशाब करनेके समय प्रसवके दर्दकी

तरह तकलीफ होना। कामोन्मत्तता, ऋतुके पहले बढ़ना; जरायुमें दर्दके साथ कमरमें ऐंठन; नितम्बकी हड्डीमें दर्द; श्वेत-प्रदर, अण्डलालकी तरह स्राव, कभी-कभी दूधकी तरह भी स्राव होता है; सवेरे स्राव बढ़ जानेके साथ-ही-साथ कामेच्छा पैदा हो जाना, रोगिनी शय्यासे उठना नहीं चाहती, ऐसी धातुका संशोधन करनेके लिये कैल्केरिया-फास एक उत्कृष्ट दवा है। योनिमें जलन मालूम होना, स्तनमें कड़ापन और दर्द, जलन और तकलीफ; रोगिनी मन-ही-मन समझती है, कि उसके स्तनका आयतन बढ़ गया है। स्तनमें दूधका विकार, नमकीन स्वाद, नीली आभा लिये रङ्ग, बच्चा स्तनका दूध नहीं पीना चाहता। गर्भावस्थामें सभी अङ्ग-प्रत्यङ्गोंमें सुस्ती। बहुत दिनोंतक स्तनका दूध पिलानेके कारण कमजोरी, पीठ तथा दोनों कन्धोंके बीचमें दर्द; कण्ठकी आवाजका क्षीण होते जाना और खाँसी; बहुत अधिक कमजोरीके कारण जरायुका अपनी जगहसे हट जाना।

श्वास-यंत्र।—रह-रहकर इच्छा न रहनेपर भी लम्बी साँस लेना; वक्षको छूनेपर दर्द मालूम होना; वक्षोस्थि और कण्ठास्थिमें दर्द; वक्षका संकोचन; श्वास-कष्ट; स्वरको साफ करनेके लिये बार-बार खाक-खाककर खाँसना। माथा और गलेमें अधिक पसीना होना, दुबला और रक्तहीन शरीर, क्षय रोगकी प्रारम्भावस्था, जीर्ण-भावकी अर्थात—पुरानी खाँसी, यक्ष्मामें रोगीके हाथ-पैर हमेशा ठण्डे, दाँत निकलनेके समय और कमजोर रोगियोंकी हूपिङ्ग खाँसी

(कुक्कुर खाँसी) ; कण्ठमाला धातुवाले या वात-धातुवाले स्वल्प-रक्त रोगीको हमेशा सर्दी होते जाना ।

गर्दन और पीठ ।—बालक-बालिकाओंकी पतली गर्दन ; माथा अपनी जगहपर न रहकर इधर-उधर हिला करता है । कमरमें दर्द, सवेरे नींद खुलनेपर बढ़ना, कोई भारी चीज उठानेके समय या नाक छिड़कनेके समय गर्दनमें और स्कन्धास्थिमें अकड़नकी तरह दर्द ; और कमर और मसानेमें भी ऐसा दर्द मालूम होता है । मेरुदण्डके सबसे नीचेवाले अंश मेरुपुच्छ (coccyx) के स्थानपर दर्द । मेरुदण्डका क्षय रोग (potts disease) ; मेरुदण्डके बायीं ओर टेढ़ा पड़ जाता है ; कशेरुकास्थिका फटना ।

हाथ-पैर ।—अङ्ग-प्रत्यङ्गका सुन्न हो जाना और ठण्डक ; रोगवाली जगहपर चीटीं रेंगनेकी तरह अनुभव होना । कन्धा और स्कन्ध-फलककी हड्डीमें दर्दकी वजहसे हाथ न उठा सकना, ऊरुदेशकी अनुजंघास्थिमें; घुटनेमें दर्द, चलनेपर यह दर्द बढ़ना ; पैरकी अंगुली और गुल्फ-सन्धिमें वातका दर्द, रातके समय और अन्धड़-पानीके दिनोंमें बढ़ना, पुराना घुटनेका प्रदाह (chronic synovitis), कमरकी जगहपर फोड़ा ।

ज्वर ।—कण्ठमाला दोषवाले बालक और बालिकाओंका पुराना सविराम ज्वर , हल्का जाड़ा मालूम होना ; चेहरेपर ठण्डा पसीना ; शरीर ठण्डा ; यक्ष्मा रोगीको रातमें बहुत पसीना ।

चर्म।—चर्म सूखा और ठण्डा तथा सिकुड़ा हुआ; ताँबेके रङ्गके चर्मके ऊपर बहुतसे दाने; बुढ़ापेकी त्वचाकी खुजली; वृद्धा स्त्रियोंकी योनिकी खुजली; कण्ठमाला, खूनकी कमीवाले और वातकी धातुके मनुष्योंका अकौता (एकजिमा), पीले रङ्गकी या सफेद पपड़ी; युवतियोंके चेहरेके मुँहासे; अस्थिका जखम; फोड़ा धीरे-धीरे जखमका रूप धारण कर लेता है। रक्तमें श्वेत-कणकी अधिकता; शोथ।

ह्रास-वृद्धि।—सीढ़ीकी राहसे ऊपर चढ़नेमें कष्ट; सर्दी, हिलने-डोलने, आव-हवाके बदलने और पानीमें भींजनेपर बढ़ना, सोनेपर लक्षणोंका घटना। कैल्केरिया-फासका रोगी गरमी और सूखे दिनोंमें अच्छा रहता है।

प्रयोग।—निम्न-क्रम (३x और ६x) का हमेशा प्रयोग होता है। सुसलर ६x क्रम व्यवहार करनेकी सलाह देते हैं। होमियोपैथिक चिकित्सामें ३० और २०० शक्तिके प्रयोगसे आश्चर्य-जनक लाभ दिखाई देता है। स्थूल मात्रामें फायदा होनेके बदले हानि होती है। बहुत दिनोंतक सेवन करनेपर मसानेका दर्द (दर्द-गुर्दा) और पेशाबके साथ छोटी-छोटी पथरी निकलती देखी गयी है।

— —

कैल्केरिया सल्फ्युरिका ।

(Calcarea Sulphurica, Calcii Sulphas, Calcium Sulphate).

इसका साधारण नाम Gypsum है; और Plaster of Paris भी है, यह एक महीन सफेद रङ्गको स्फटिककी बुकनीकी तरह पदार्थ है। ४०० भाग पानीमें गला लिया जा सकता है; सुरासार और पानी मिले शोराम्ल और लवणाम्लके साथ नहीं गलता ।

यह लवण यकृतसे निकलकर पित्तके साथ मिल जाता है। जब यह यकृतमें रहता है, तो यकृतमें रहकर पुरानी जीर्ण रक्त-कणिकाओंका जलीय अंश खींचकर उन कणिकाओंको ध्वंस कर डालता है।

अगर यकृतमें इस लवणकी कमी या गड़बड़ी पैदा हो जाती है, तो इन जीर्ण रक्त-कणिकाओंका नाश नहीं हो पाता और उनकी वजहसे रक्तका प्रवाह भारी हो जाता है। स्वाभाविक अवस्थामें वे रक्त-कणिकाएँ, जिनसे कोई काम नहीं निकलता, यकृतके भीतर कैल्केरिया-सल्फ लवणके द्वारा विघटित होती हैं। इसके बाद पित्तकी प्रक्रियासे जो पदार्थ ध्वंस होनेसे बच जाता है, वह पासकी किसी राहसे निकल जाता है; पर इस लवणकी कमीके कारण जब स्वाभाविक क्रिया नहीं हो पाती, तो खूनके प्रवाहमें, अम्लजानके

सहारे, उन अकर्मण्य पदार्थोंका नाश होता है, इसीलिये शरीरसे उनके निकल जानेमें देर होती है।

यदि नष्ट न हुए अकर्मण्य पदार्थ यकृत द्वारा अथवा लसिका द्वारा दूर नहीं कर दिये जाते, तो वे श्लैष्मिक झिल्ली और चर्मपर आ पहुँचते हैं और ऐसी जगहपर सर्दी और उद्भेद पैदा हो जाया करते हैं।

पीव पैदा होनेके साथ इस लवणका घनिष्ट सम्बन्ध है। साइलिसिया नामक नमकसे भी पीव पैदा होता है और बहुत जल्दी पका देता है; पर कैल्केरिया-सल्फसे पीव पैदा होना रोक दिया जाता है और जखममें अंकुर पैदा होनेकी वजहसे वे जल्द आरोग्य हो जाते हैं। संयोजक तन्तुपर भी इसकी विशेष क्रिया दिखाई देती है। श्लैष्मिक-झिल्ली, स्नैहिक-झिल्ली, यक्ष्मासे उत्पन्न जखम, आँतोंका जखम, आँखोंका जखम इत्यादि स्थानोंमें क्लेदका स्राव होना, जखम, फोड़ा वगैरहसे बहुत दिनोंतक पीवका स्राव हुआ करता है, सब पीव निकल जानेपर भी पीव होना बन्द नहीं होता; पीव और खुली हुई राहसे उसका निकलना यही कैल्केरिया-सल्फ्युरिकाका विशेषकर प्रयोगका क्षेत्र है। गाढ़ा, पीले रङ्गका अथवा खून मिला पतला क्लेदका स्राव—इस लवणका निर्देशक लक्षण है।

विशेष और निर्देशक लक्षण।

मन।—बदलनेवाली मानसिक अवस्था। एकाएक स्मरण-शक्तिका लोप हो जाना, मृगी रोग।

मस्तक।—बालक-बालिकाओंके माथेका जख्म, पीव बहना या पीली आभा लिये पीव मिली पपड़ी जमना; सरमें चक्कर आनेके साथ भयानक मिचली; मस्तिष्कास्थिका क्षय रोग; समूचे माथेमें तकलीफ, खासकर ललाटमें।

आँख।—नये पैदा हुए बच्चे की आँख उठना; चक्षु-प्रदाह रोगमें गाढ़ा पीले रङ्गके पीवका स्राव, आँखमें चोट लगकर प्रदाह और पीव पैदा हो जाना; कनीनिका गदली, पीव पैदा हो जाना, बालू पड़ जानेकी तरह आँखमें करकराहटकी तकलीफ मालूम होना; आँख बाँध रखनी पड़ती है; दृष्टि-दोष, किसी पदार्थका सिर्फ आधा अंश दिखायी देता है।

कान।—कानके चारों ओर फुन्सियाँ, बहरापनके साथ पीवका बहना, कभी-कभी खून मिला पीव बहा करता है। साइलिसियाकी क्रिया जब समाप्त हो जाती है, तो इससे ज्यादा फायदा होता है।

नाक।—नासारन्ध्रके किनारे फटे-फटे और दर्द-भरे, नाकके पिछले छेदसे पीली आभा लिये स्राव; माथेमें श्लेष्मा जमा रहता है; इसके साथ ही गाढ़ा पीली आभा लिये पीव-मिला स्राव होता है; केवल एक ही रन्ध्र-पथसे श्लेष्मा निकलना; नाकसे रक्तस्राव।

मुखमण्डल।—चेहरेपर बहुत फोड़े और फुन्सियाँ; मूछोंके नीचेकी फुन्सी बहुत ही दर्द भरी रहती है; चेहरेपर दादकी तरह उद्भेद निकलते हैं।

मुँहके भीतर।—जीभ ढीली, थुलथुली, देखनेमें जली मिट्टीकी तरह; ओंठके पिछले भागमें जखम; जीभके पिछले भागमें पीली आभा लिये लेप; खट्टा स्वाद, साबुनकी तरह खारा स्वाद; जीभका प्रदाह, पकनेका उपक्रम; दतवन या ब्रशका व्यवहार करनेपर मसूढ़ेसे खून जाने लगता है; दाँतका दर्द, मसूढ़ेका भीतरी भाग फूला, दर्द-भरा, इसके साथ ही गाल फूले।

कण्ठ।—तालुमूल प्रदाह (tonsilitis), पकनेके बाद जब पीवका स्राव हुआ करता है, उस समय इस लवणसे बहुत ही ज्यादा फायदा होता है। कण्ठका जखम, अन्तिम अवस्थामें जब पीव होना आरम्भ हो जाता है।

पाकाशय।—भूख और प्यासकी अधिकता; फल, खट्टी तरकारी, चाय इत्यादि पीनेकी लालसा, पाकाशयमें जलनकी तकलीफ, भोजनके समय तालुमें दर्द अनुभव होना।

उदर और मल।—यकृतकी जगहपर और उदरके दाहिने भागमें दर्द, इसके साथ ही पाकाशयमें दर्द, ओकाई आना और कमजोरी; यकृतका फोड़ा और इसी वजहसे मलद्वारसे पीवका स्राव। आमाशय रोगमें खून-मिला, पीव भरा दस्त। टाइफस रोगमें आँतोंका जखम। भगन्दर मल-द्वारके पास दर्द भरे-फोड़े; काँच निकलना।

मूत्रयंत्र और जननेन्द्रिय।—विलेपी ज्वर के साथ लाल रङ्गका पेशाब; कब्जियत और श्वासमें कष्ट,

मसानेका प्रदाह, मूत्राशयका प्रदाह, पुराना और पीव मिला प्रदाह। सूजाककी बीमारीमें लाल आभा लिये मवाद निकलना ; मुखशायी-ग्रन्थिका फोड़ा ; शुक्रमेह ; उपदंशकी बीमारीमें पुराना भाव लिये पीव-मिले उपसर्ग ; बाघीमें पीव पैदा हो जाना रोकनेके लिये इसे साइलिसियाके साथ पर्याय-क्रमसे प्रयोग करते हैं। देरसे, पर बहुत दिनोंतक होते रहनेवाला ऋतुका स्राव ; इसके साथ ही सर-दर्द, अकड़न और कमजोरीका बढ़ जाना ; स्तन-प्रदाह रोगमें, साइलि-सियाके प्रयोगसे पीवका स्राव घटनेके बाद, इससे बहुत अधिक फायदा होता है।

पीठ और हाथ-पैर।—पीठ और पिक्क-चंचु अस्थि (coccyx) में दर्द ; हाथकी अंगुलियाँ अकड़ी ; अंगुल-बेढ़ा ; जो तन्तु गहरे नहीं हैं, उनसे लगातार पीवका स्राव होना। वक्षण-सन्धिकी बीमारी (hip-joint disease) का प्रदाह होनेपर, पीवका अगर स्राव हो तो इसका प्रयोग किया जाता है। इस लवणके साथ फेरम-फास और एकदम विश्राम लेनेका प्रबन्ध कर देनेपर बीमारी आराम हो जाती है। पीव बहनेवाला जख्म ; तलवेमें जलन और खुजली।

स्नायु और निद्रा।—वृद्धोंका स्नायुशूलका दर्द ; कमजोरी और सुस्ती ; दिनमें औंघाई, पर रातमें नींद न आना।

ज्वर।—सान्निपातिक ज्वरमें पतले दस्त आनेके बाद, पीव पैदा होनेकी वजहसे विलेपी ज्वरमें।

चर्म।—सारे शरीरमें दादकी तरह उद्भेद, जलने या दब जानेके बाद यदि पीव हो जाये तो यह बहुत ही उत्तम दवा है। कटे घाव, खरोंच इत्यादिमें अगर पीव हो और सहजमें आराम न होना चाहे तो इसके प्रयोगसे आरोग्य हो जाता है। फोड़ा बैठा देनेके लिये और पीवका स्राव बन्द करनेकी भी लाभदायक दवा है। विष-व्रण (carbuncle) लगातार पीव और रस बहना। पीले रङ्गकी पपड़ी पड़नेवाला चर्म-रोग ; दूधिया पपड़ी (crusta lactea) ; माथेमें केशोंके भीतर बहुतसे बिना पीव भरे छोटे-छोटे दाने ; उन्हें खुजलानेपर खून निकलता है। ग्रन्थियोंका जखम और पीवका स्राव।

ह्रास-वृद्धि।—बहुत परिश्रम करनेकी वजहसे और पानीमें धोनेके बाद सभी उपसर्ग बढ़ जाते हैं।

प्रयोग।—अंगुल-बेढ़ा, फोड़ा और जखममें इस लवणका बाहरी प्रयोग प्रचलित है। भीतरी प्रयोगके लिये ६x और १२x का व्यवहार होता है।

"लूपस" नामक यक्ष्मासे उत्पन्न चर्म-रोगमें इसका बारहवाँ (१२x) फायदेमन्द है।

———

फेरम-फास्फोरिकम ।

(Ferrum Phosphas, Ferroso-Ferric Phosphate, Phosphate of Iron)

यह नीली आभा लिये धुमैले रङ्गका एक विचूर्ण है। फास्फेट आफ सोडियम और सलफेट आफ आयरन निर्दिष्ट परिमाणके अनुसार मिलाकर यह नमक तैयार किया जाता है। सुरासार या पानीमें यह नहीं गलता, पर एसिडके साथ मिलनेपर गल जाता है।

जीव-शरीरमें हिमोग्लोबिन अर्थात रक्तमें रङ्ग लानेवाली लाल कणिकाओंमें लोहा पाया जाता है; पर केशोंके सिवा सभी दूसरे तन्तुओंमें या कोषमें उतना अधिक नहीं पाया जाता; यह रक्त-प्रवाहमें ही रहता है। ८२ सेर वजनके जवान मनुष्यके समूचे रक्त-भाण्डारमें कुल ४४ ग्रेन लौहकण रहता है।

नर-देहका हरेक कोषाणु अण्डलालसे बनता है और अण्डलाल लौहके आधारपर है; इसीलिये, प्रत्येक कोषाणुमें लौह-कण मौजूद रहते हैं। इसके अलावा यह भी देखा जाता है, कि लोहेका धर्म है—अम्लजान (oxygen) को आकर्षण करना। रक्तके कणमें रहनेवाले लौह-परमाणु, श्वासके साथ खींचे हुए अम्लजानको ग्रहणकर, शरीरके भीतरके केलि-सल्फ लवणके सहयोगसे, शरीरके सभी जैव-कोषाणुमें

उस अम्लजानको ले जाकर पहुँचा देते हैं। इसके बाद अम्लजानकी दहन प्रक्रियासे शरीरकी समस्त क्रियाएँ हुआ करती हैं। यदि इस शरीर-यन्त्रमें, लौहकणका सामंजस्य गड़बड़ा जाता है या विशृङ्खल हो पड़ता है, तो पेशी-सूत्र सब ढीले पड़ जाते हैं; रक्तवहा नाड़ीमें लौहकणकी शृङ्खला नष्ट होनेपर धमनी और शिरा आदिके गात्र फैल जाते हैं और इन सब स्थानोंमें खून बढ़ जाता है; अब यह होता है, कि रक्त-सञ्चालनकी अधिकताकी वजहसे धमनी और शिराका गात्र फटकर खून निकलने लगता है।

इस तरह, लौह-कणोंकी शृङ्खलामें गड़बड़ी आकर या बाधा पड़कर अन्त्रनाड़ीके गात्रके केशरमय पेशिक आच्छादन यदि शिथिल हो जाते हैं, तब दस्त पतले आने लगते हैं; परन्तु अन्त्रकी स्पष्ट शिथिल अवस्था आ जानेपर उसमें मलको निकाल बाहर करनेकी भी शक्ति घट जाती है और इसी वजहसे कब्जियत होने लगती है।

किसी जगह चोट लग जानेपर उस जगहकी रक्तवहा-नाड़ीका गात्र शिथिल हो पड़ता है और वहाँ रक्तकी अधिकता हो जाती है। इस अवस्थामें **फेरम-फास** रूपी लवणके कणकी सूक्ष्म मात्राका प्रयोग करनेपर लौहकी शृङ्खला फिरसे स्थापित हो जाती है और पेशियाँ सब सबल और कड़ी हो जाती हैं। अम्लजानकी आकर्षणी-शक्तिकी वजहसे फेरम-फास, खूनकी कमी, हरित्-रोग और ल्यूकिमिया (रक्तमें श्वेत-कणकी अधिकता) रोगमें यह फायदा करता है।

रक्तकी अधिकता और उसीके कारणोंसे पैदा हुए उपसर्ग। जैसे,—दर्द, गरमी मालूम होना, सूजन, लाली, तेज चलनेवाली नाड़ी और रक्त-सञ्चालनका बढ़ना—इन सभी स्थानोंमें—फेरम-फास्फोरिकमकी क्रिया लाभदायक होती है। ज्वर-रोगमें, प्रदाहकी पहली अवस्थामें, खासकर रस-क्षरण (effusion) की पूर्ववाली अवस्थामें भी यह फायदेमन्द है। बालक-बालिकाओंको भूख न लगना (अग्निमान्द्य), उनमें फुर्तीका न रहना और चिड़चिड़ापन, वजन और शक्तिका घटना प्रभृति उपसर्गोंके साथ कमजोरी ; इन सब क्षेत्रोंमें फेरम-फास ताकत भरता है, शरीरके पोषणमें सहायता करता है और आँतोंकी क्रिया नियमित बना देता है।

सभी प्रदाहोंकी पहली अवस्थामें जहाँ दर्द चलने-फिरनेपर बढ़ता है और सर्दीसे घट जाता है, रक्तकी अधिकताकी वजहसे रक्त-स्राव, चोटकी वजहसे ताजे जखम,—ये सब फेरम-फासके विशेष प्रयोग-क्षेत्र हैं।

विशेष और निर्देशक लक्षण।

मन।—नित्यके कामोंका भी आग्रह नहीं रहता, साहसकी कमी, हलका काम भी बहुत बड़ा और दुःसाध्य मा ूम होता है ; जरा-सी बातमें घबड़ा उठता है ; मस्तिष्कमें रक्तकी अधिकताकी वजहसे विकार और उन्मादका भाव ; शराब अधिक पीकर नशा, बहुत बकना, क्रोधकी अधिकताके कारण माथेमें रक्तकी अधिकता और सरमें चक्कर आना।

मस्तक।—माथेमें रक्तका वेग, सर-दर्द, हथौड़ीकी चोटकी तरह दर्द, दाहिने अंशमें अधिक; सर-दर्दके साथ अजीर्ण पदार्थका वमन, नाकसे रक्तस्राव होनेपर सर-दर्दका घटना, तकलीफवाली जगहपर बरफ या ठण्डे पानीसे या कपड़ा रखनेपर घटना; ब्रह्मरंध्रकी जगहपर ठण्डी हवा; ऊँची आवाज और गौण आघात भी असह्य मालूम होना, लू या सूर्यकी गरमी लगकर जो सब बीमारियाँ पैदा होती हैं, उनमें यह नमक फायदा करता है। चेहरा लाल, आँखें लाल, माथेमें टपकका दर्द। बालक-बालिकाओंको इन सब उपसर्गोंके साथ कोई बीमारी होनेपर यह फायदा करता है। मस्तिष्कावरण प्रदाह (meningitis) रोगकी पहली अवस्थामें माथेमें भार मालूम होना और तन्द्रामें पड़े रहनेका भाव।

आँख।—आँखोंमें प्रदाह, आँखें लाल, जलन, तकलीफ और दर्द: पलकके नीचे बालूके कणकी तरह करकराहट मालूम होना। आँखके सफेद अंश (शुक्लमण्डल) का नया प्रदाह, योजकत्वक (conjunctiva) शिथिल, रोशनीका सहन न होना, दाहिनी आँखकी निचली पलककी गुहौरी, पलकोंमें कोषबद्ध अर्बुद।

कान।—कानके दर्दकी पहली अवस्था, तकलीफ चारों तरफ फैल जाती हैं, कानके भीतर स्पन्दन अनुभव होता है; हृद्-यन्त्रका प्रत्येक स्पन्दन कानमें अनुभव कर सकता है। रक्तका दौरान होनेकी वजहसे कानमें आवाज, शिरा-

ओंके ढीलेपनकी वजहसे ठीक भावसे लौटकर नहीं आता। कर्णनाद, कानमें ठुन-ठुन आवाज, कानका बाहरी भाग प्रदाहित, कर्णमूल फूला और दर्द-भरा।

नाक।—सर्दी लगनेका लक्षण, माथेमें सर्दी लगनेकी पहली अवस्था। सर्दी, स्राव न रहनेपर भी ऐसा मालूम होता है, कि बराबर स्राव बह रहा है; नाककी श्लैष्मिक-झिल्लीमें रक्तकी अधिकता; नाकसे चमकीले रक्तका स्राव होना।

मुखमण्डल।—दर्द-भरा, गरम, नाड़ीकी चाल तेज, हिलने-डोलनेपर नाड़ीका स्पन्दन बढ़ जाता है, लाल आभा लिये चेहरा, रक्तहीनता और हरित-रोगमें, चेहरा खाकी रङ्गका रहता है।

मुँहके भीतर।—इसकी श्लैष्मिक झिल्ली लाल रङ्गकी, जीभ मैलसे भरी अथवा बिना मैल चढ़ी लाल रङ्गकी, फूली, जीभमें प्रदाह। दाँतके मसूढ़े फूले और प्रदाह-भरे; दाँत निकलनेके समयके उपसर्गों के साथ ज्वर-भाव; दाँतमें दर्द, गाल गरम, ठण्डा पानीय या खाद्य-पदार्थ मुँहमें लेनेपर घटना, गरम चीजोंसे तकलीफका बढ़ना।

कण्ठ।—कण्ठका प्रदाह, कण्ठ लाल रङ्गका और दर्दसे भरा रहता है, कण्ठका जखम, रक्तकी अधिकता, गर्मी, ज्वर, दर्द और टपक; तालुमूल-ग्रन्थि लाल, फूली और दर्दसे भरी; डिफ्थीरिया रोगकी आरम्भकी अवस्था; गवैये

और व्याख्यान देनेवालोंका गलौध (गला फँसना) और दर्द ; स्वरनली, कण्ठनली और श्वासनली इत्यादिसे रक्तस्राव।

पाकाशय।—बालक-बालिकाओंकी सर्दी लगनेकी वजहसे पेटमें दर्दके साथ पतले दस्त, पाकाशयकी प्रदाहकी आरम्भावस्थामें दर्द, सूजन और छूनेपर दर्द मालूम होना, डकारमें तेल या चर्बीका स्वाद रहता है ; ठण्डा पानी पीनेकी प्यास, मांस और दूधसे अरुचि ; ब्राण्डी ; बियर शराब प्रभृति उत्तेजक पदार्थ पीनेकी लालसा। मन्दाग्नि (डिस्पेप्सिया), गरम, लाल चेहरा ; पाकाशय प्रदेशकी छूनेपर दर्द , पाकाशयकी रक्तवहा-नाड़ीकी शिथिलताकी वजहसे अजीर्ण-रोग, भोजनके बाद और दबानेपर दर्द। क्लेद (मैल-भरी) जीभ, चेहरा लाल, तमतमाया भाव, टपकका दर्द, अजीर्ण खाद्यकी कै हो जाना ; भयानक मिचली ; भूखका न रहना, पेट फूलना, डकारमें खाये हुए पदार्थका स्वाद, दूधसे अरुचि, भोजनके बाद ओकाई आना, खायी हुई चीजका वमन, वमन हुए पदार्थका स्वाद बहुत खट्टा, काफी, केक, मांस, कोई-कोई मछली और खट्टी चीज सहन नहीं होती, बीच-बीचमें सवेरेके भोजनके पहले वमन।

उदर और मल।—पाकाशय और आँतोंके ज्वरकी पहली अवस्था, विसूचिका और अन्त्रावरण प्रदाह (peritonitis) की अवस्था। कब्जियतके साथ मलद्वारका अपनी जगहसे हटना, बवासीर, मांस खानेकी इच्छाका न होना।

बच्चोंकी विसूचिका, चेहरा लाल, नाड़ी कोमल, भरी, पानीकी तरह और खून मिला मल, लू लगकर रोगकी उत्पत्ति ; मल पतला पानीकी तरह, खून और श्लेष्मा मिला हुआ , वेग होता है, पर मरोड़ नहीं रहता ; पाचन-क्रियाके विकारके साथ अजीर्ण मल। अकसर काँच (मलद्वार) निकल आया करती है। बवासीरकी बीमारी, प्रदाह और खून जाना, चमकीले लाल रङ्गका रक्त रहता है और जल्दी जमता नहीं है। मसा कड़ा पड़नेसे पहलेकी अवस्थामें यह फायदा करता है। अन्त्र-वृद्धि (आँत उतरना), प्रदाहित और आवद्ध अवस्था।

मूत्र-यन्त्र ।—बार-बार पेशाब करनेकी इच्छा, प्रत्येक बार खाँसनेके साथ थोड़ा-सा पेशाब निकल पड़ता है। मूत्राशयकी सङ्कोचन करनेवाली पेशीकी शिथिलताकी वजहसे आप-से-आप पेशाब, इच्छा न रहनेपर भी पेशाब हो जाना, मूत्राशय-ग्रीवाके उपदाहकी वजहसे दिनमें ही अनजानमें पेशाब हो जाना। खूनका पेशाब, मूत्राशय प्रदाहकी पहली अवस्था, गरमी, दर्द, ज्वरका भाव, मसानेमें प्रदाहकी वजहसे दर्द, मधुमेह (डायबिटिस) रोगमें जब नाड़ीकी चाल तेज हो जाती है, सबल रहती है या इसके साथ ही शरीरके किसी स्थानमें दर्द, खिंचाव मालूम होना, गरमी रहना और रक्तकी अधिकता हो जाना रहता है। मूत्राशय-ग्रीवा और मूत्राशय सुखशायी ग्रन्थि (प्रोस्टेट ग्लैण्ड) का उपदाह, खड़े रहनेपर दर्दका बढ़ना और पेशाब हो जानेपर घटना, बार-बार बहुत ज्यादा परिमाणमें पेशाब।

जनन-यन्त्र।—अण्डकोषकी शिराका फूलना और अण्डमें दर्द, अण्डकोषका प्रदाह, उपकोष-प्रदाह और सूजाके रोगकी पहली अवस्था। बाघी, उसमें गरमी, टपक और ज्वर भाव, इच्छा न रहनेपर भी वीर्य निकल जाना, ऋतुशूल, चेहरा लाल, नाड़ीकी तेज गति, अजीर्ण, अम्ल (खट्टा) स्वाद लिये खायी हुई चीजकी कै। ऋतुके समय रक्तकी बहुत अधिकता, चमकीले लाल रङ्गका आर्त्तव-स्राव, बाधकके दर्दके साथ बार-बार पेशाब, योनिका आक्षेप, योनि-प्रदाह, योनि-पथ सूखा और गर्म, रति-क्रियाके समय या परीक्षाके समय योनिमें तकलीफ होती है। स्तन-प्रदाहकी पहली अवस्था, गर्भावस्थामें सवेरेके समय वमन, कै हुआ पदार्थका स्वाद खट्टा और अजीर्ण खाद्य-पदार्थसे भरा। प्रसवके बादका दर्द, फेरम-फास्फोरिकम प्रसूताओंके दुग्ध-ज्वरका प्रतिषेधक है।

श्वास-यन्त्र।—बालक-बालिकाओंका श्वासनलीका प्रदाह। श्वास-यन्त्रके सभी प्रदाहोंकी प्राथमिक अवस्था, नये बोखारके साथका प्रदाह, ब्राङ्काइटिस, फेफड़ेका प्रदाह, कण्ठनलीका प्रदाह, गलनलीका प्रदाह, फुसफुसावरक-झिल्ली (प्लुरिसि) का प्रदाह और प्लुरिसिके साथ निमोनिया। इन सब रोगोंके प्रारम्भमें फेरम-फास्फोरिकम बहुत ही लाभदायक है। पुराना श्वासनली-प्रदाह (ब्राङ्काइटिस) में बीच-बीचमें अगर नयी तेजी आ जाये, तो इसका प्रयोग करना

चाहिये। सूखी और कड़ी खाँसी और इसके साथ ही फेफड़ेमें दर्द, बोखारके साथ क्रूप-रोग। हुपिङ्ग (कुकुर) खाँसीके साथ खायी हुई चीजकी कै, व्याख्यान देनेके बाद या गाना गानेके बाद स्वरभङ्ग, कण्ठमें उपदाह और दर्द।

हृद्-यन्त्र।—धमनीका प्रदाह, हृद्वेस्ट-प्रदाह, हृद्-गह्वरको ढकनेवाली झिल्लीका प्रदाह। धमनीका अर्बुद—(aneurism) रोगमें इस लवणका प्रयोग करनेपर रक्तका प्रवाह स्वाभाविक होने लगता है और हृद्यन्त्रके बहुत अधिक सञ्चालनकी वजहसे पैदा हुए उपसर्ग दूर हो जाते हैं। शिरा-स्फीति (varicose veins), शिरा-प्रदाह और लसिक-प्रदाहकी प्रारम्भावस्थामें यह उपयोगी होता है।

पीठ और हाथ-पैर आदि।—सर्दीके कारण गर्दनका अकड़ जाना, पीठ, कमर और मसानेकी जगहपर दर्द; वातका दर्द, हिलाने-डोलानेपर बढ़ना, उत्तापसे घटना; सन्धिवात; खासकर कन्धेका वात; दर्द वक्षके ऊपरी भागतक फैल जाता है, एकके बाद दूसरी सन्धिपर हमला होता है; पेशी-वात और नयी अवस्था दब जानेके बाद बहुत तेज अवस्थाका न रहना। दाहिने हाथकी कलाई और कन्धेका वात; अंगुलीका प्रदाह, अंगुलबेढ़ाकी पहली अवस्था। जानु-सन्धिमें दर्द, टपक, कोमल अंगमें प्रदाह और गरमी, हाथ फूले और दर्दसे भरे, तलहत्थी गरम।

स्नायु-विधान।—बातसे पैदा हुआ पक्षाघात; रातमें भय; दाँत निकलनेके समय बच्चोंकी अकड़न (तड़का); मस्तिष्कमें रक्तकी अधिकताकी वजहसे नींद न आना; रातके समय बेचैनी; तीसरे पहर बहुत नींद आना; उद्वेग-भरे सपने।

ज्वर।—सर्दी, कपकपी, उत्ताप, नाड़ी तेज, तकलीफके साथ सब तरहकी सर्दी और प्रदाहकी प्रारम्भावस्था। वात-रोग, पाचन-विकार, अंत्र-विकार, सान्निपात इत्यादिसे उत्पन्न रोगकी पहली अवस्थामें सर्दी मालूम होना और ज्वर। वमनके साथ सविराम ज्वर; रोज़ तीसरे पहर १ बजनेके समय शीत और कम्प। रातके समय बहुत अधिक पसीना।

चर्म्म और तन्तु।—चोट लग जानेकी वजहसे खून जम जानेपर और ताज़े जख़ममें जब पीव नहीं पैदा होता, उस समय फेरम-फासकी कई मात्राएँ प्रयोग कर देनेसे दर्द, सूजन और जमा हुआ खून, तुरन्त हट जाता है। फोड़ा, छोटा फोड़ा, कार्बङ्कल, अंगुल-बेढ़ा—इन सब रोगोंके आरम्भमें, प्रयोग करनेपर दर्द, यंत्रणा, टपक, रक्तकी अधिकता, उत्ताप इत्यादि बहुत जल्द आरोग्य हो जाते हैं। विसर्प-रोगमें, पनसाहा मातामें, छोटी माता (खसड़ा), लाल ज्वर (scarlet fever) मसूरिका इत्यादिके ज्वरके साथ चर्मोद्भेद रोगमें इसका प्रयोग करना चाहिये। व्रण, जखम, इत्यादिमें अगर रक्तकी अधिकता हो, गरमी और दर्द रहे, सब तरहके प्रदाहोंमें रस-संचयकी पहली अवस्था।

रक्तकी कमी, रक्तमें लाल-कणका अभाव, रक्तमें श्वेत-कणकी अधिकता (leucomia); रक्तस्राव, शुक्रक्षय इत्यादिकी वजहसे शोथ। अस्थि-रोगसे लगाव रखनेवाले कोमल अंशका प्रादाहित और दर्द-भरा हो जाना। असली हरित-रोगमें (chlorosis) कैल्केरिया-फासके बाद इसका प्रयोग करना पड़ता है।

होमियोपैथिक चिकित्सामें भी इस लवणका व्यवहार होता है। डाक्टर जे० सी० मार्गनने १८७६ ईस्वीमें इसकी परीक्षा की थी।

प्रयोग।—डाक्टर सुसलर इसकी ६ ठी और १२ वीं शक्तिका सूखा विचूर्ण अथवा जलीय द्रव व्यवहार करनेका उपदेश देते हैं; पर रक्तकी कमीके इलाजमें १x या २x क्रम व्यवहृत होता है। बहुतसे विचक्षण चिकित्सकोंने अनुभव कर कहा है, कि यह लवण रातके समय १२x शक्तिसे नीचेका क्रम प्रयोग करनेपर नींदमें गड़बड़ी पैदा हो जाती है। डाक्टर मार्गन साहब "आरक्त-ज्वरमें" ३०x शक्ति व्यवहारकर फायदा होता देख चुके हैं; सर्दी-गर्मीके दिनोंकी बीमारी,—सूजाक इत्यादिमें २०० शक्तिके प्रयोगसे आरोग्य होता देखा गया है। मोच आ जाना, कुचल जाना, कटे घाव, बवासीर, रक्त-स्राव, काला दाग पड़ना इत्यादिमें भीतरी प्रयोगके साथ इसका बाहरी प्रयोग करनेपर लाभ होता है। थोड़ी मात्रामें नमक कुछ पानीमें गलाकर, उस पानीको साफ कपड़ेमें या लिण्ट अथवा पट्टीमें तरकर लगाना पड़ता है।

दूसरे-दूसरे बायोकेमिक लवणोंके अनुपूरक रूपमें और एकके बाद दूसरा, इस तरहके क्रमसे इसका प्रयोग होता है। अधिकांश स्थानोंमें इसके बाद "कैलि-मूर" व्यवहार किया जाता है। आगे लिखे रोगकी चिकित्सावाले विभागमें इसके बहुतसे उदाहरण मिलेंगे।

कैलि-म्यूरियेटिकम।

(Kali Chloratum. Potassium Chloride, Chloride of Potash)

यह नमक एक स्वाभाविक खनिज पदार्थ है, पर यह कृत्रिम उपायोंसे भी तैयार किया जाता है। विशुद्ध पोटासियम कार्बोनेट या हाइड्रेटको विशुद्ध पानी मिले लवणाम्लके साथ रूप बदलकर यह लवण तैयार होता है; यह छः पहलू या आठ पहलू दाना बाँधता है।

तिगुने ठण्डे पानीमें और दूने खौलते पानीमें यह नमक गल जाता है; शोधित सुरामें यह नहीं गलता।

जीव-देहके सौत्रिक उपादानोंसे इसका रासायनिक सम्बन्ध है। अतएव शरीरमें इस लवणके परमाणुओंकी संख्या गड़बड़ा जानेपर, रक्तका सौत्रिक रस चुआ करता है। इस लवणकी जब कमी पड़ जाती है, तब मस्तिष्कमें नये कोषका निर्माण नहीं होता। पेशी, रक्तके कण, स्नायु, मस्तिष्क-

कोष और शरीरमें सभी जगह रहनेवाले कोषाणुओंके बाहरी गात्रमें रहनेवाले रसमें यह लवण पाया जाता है।

इसके साथ नेट्रम-म्यूरके लवणगत गुणोंकी बहुत कुछ समानता है। चर्मकी तेजी घटकर यदि कैलि-म्यूरके लवण-परमाणुओंका क्षय हो जाता है, तो सौत्रिक अंशसे सफेद धुमैली आभा लिये एक तरहका सफेद स्राव हुआ करता है और वही सूखकर त्वचाके ऊपर गेहूँकी भूसीकी तरह निकला करता है। यदि चर्मकी उग्रता चर्मके नीचेवाले तन्तुमें फैल जाती है, तो सौत्रिक अंश और रस दोनोंका ही स्राव होकर चर्मपर छालेकी तरह दाने निकलते हैं। इस अवस्थामें अगर कैलिम्यूरका प्रयोग किया जाता है, तो वह शरीरके भीतरवाले हाइड्रोक्लोरिक एसिड (लवण-अम्ल) में रूपान्तरित हो जाता है और इस तरह निकले हुए अनावश्यक पदार्थोंके सोख लेने अथवा निकाल बाहर करनेमें सहायता पहुँचाता है और फिर रोगवाले तन्तुओंको ठीककर उनमें शृङ्खला स्थापित कर देता है।

रसस्रावी तन्तुके प्रदाहके स्थानकी प्राथमिक अवस्था जब बीत जाती है और दूसरी अवस्थामें जब गाढ़ा स्राव हुआ करता है; उस अवस्थामें भी कैलि-म्यूर फायदा करता है; पर उस गाढ़े स्रावके सूत्र सब सोख लिये जाने बाद, जब रक्तके सफेद कण (leucocytes) ही बचे रह जाते हैं; उस समय नेट्रम-फास्फोरिकम उपयोगी होता है। डिफ्थीरिया, क्रूप, आमाशय, क्रूपके साथ-ही-साथ नियुमोनिया,

संयोजक तन्तुओंकी बीचके स्थानमें सौत्रिक-रसका स्राव होना, लसिका-तन्तुओंका बढ़ना, रस-क्षरणके साथ प्रदाह, दूषित चेचकका टीका लेनेकी वजहसे चर्मके ऊपर दानोंका निकलना, जीभकी जड़में सफेद या धुमैला लेप, सफेद या धुमैला स्राव होना, जगह-जगहकी ग्रन्थियोंका फूलना, श्लैष्मिक-झिल्लीसे सफेद रङ्गका गाढ़ा, सौत्रिय या श्लेष्माका स्राव, चर्मके ऊपर मैदेकी तरह रूसी जमना ; यकृतकी क्रिया बिलकुल ही न होना या कम होना ; इन सब अवस्थाओंमें कैलि-म्यूरके प्रयोगसे असाधारण लाभ होता है। कानसे श्लेष्माका स्राव होनेकी दूसरी अथवा बादकी अवस्थामें कैलि-म्यूर बहुत फायदा करता है।

विशेष और निर्देशक लक्षण।

मन।—रोगीका एक तरहका अद्भुत विश्वास रहता है, कि उसे उपवास करनेकी जरूरत है।

मस्तक और मस्तककी त्वचा।—वमनके साथ सर-दर्द ; सफेद रङ्गका दूधकी तरह श्लेष्मा गलेसे खखार-खखारकर निकालना पड़ता है। यकृतकी क्रिया कमजोर पड़ जानेके कारण भूख नहीं लगती, सफेद रङ्गके श्लेष्माकी कै ; सफेद लेप चढ़ी जीभ, सरमें दर्द, बच्चेके माथेमें फटे घाव और केशोंकी लट बँध जाती हैं ; सूखी रूसी निकलना।

आँख।—सफेद श्लेष्मा निकलना ; पीली आभा लिये हरा-हरा और पीले रङ्गका पीब और श्लेष्मा निकलना और

पीव-भरी पपड़ी जमना ; आँखकी पलकोंपर पीव-भरे दाने ; आँखके भीतर छाले होनेके बाद, छिछला जखम पैदा होना ; पुतलीमें छाला, आँखके भीतर बालूके कण पड़े रहनेकी तरह कर-कराहट, उपतारा प्रदाह (iritis) ; पलकोंके भीतर दाना भरे उद्‌भेद । चक्षु-पटल (पुतली) के तन्तुओंका प्रदाह ।

कान ।—कानसे बहुत दिनोंका पुराना श्लेष्माका स्राव, कानके भीतर और कर्णनली (कानकी नली) में सूजन, दर्द, कानमें दर्द इत्यादिके साथ ग्रन्थिका फूलना ; बहरापन, नाक छिड़कनेपर या कुछ निगलनेके समय कानमें पट-पट आवाज ; कानका बाहरी भाग फूल जाता है, इसी-लिये सुन नहीं पाता, जीभपर सफेद मैल, इसके साथ ही कण्ठमें सूजनकी वजहसे बहरापन ; कानमें उससे भी अधिक दानामय उद्भेद, कर्ण-पटह सिकुड़ा हुआ, कानकी ग्रन्थियाँ फूलीं, कानमें नाना प्रकारकी आवाजें आना ।

नाक ।—सर्दी, गाढ़ा सफेद श्लेष्माका स्राव, माथेमें सर्दीका बैठ जाना और इसके साथ ही जीभपर सफेद मैल चढ़ी रहना ; सूखी सर्दी ; तालुके पिछले भागमें लसदार श्लेष्मा लिपटा रहना ; तीसरे पहरके वक्त नाकसे रक्त-स्राव ।

मुख ।—गालकी सूजन और दर्द ; मुखमण्डल या मसूढ़े में सूजनकी वजहसे दर्द ।

मुँहके भीतर ।—मुँहके भीतर जखम, स्तन पीने-वाले बच्चोंके मुँहमें घाव, छोटे बच्चोंकी माताओंके मुँहमें

घाव ; जबड़ेके नीचे और गर्दनकी ओरकी ग्रन्थियोंका फूलना, मुँहमें गले हुए जखम, उनसे मांस निकला करता है और लाल चमकीला भाव रहता है।

जीभ।—नक्शेकी तरह दाग-भरी मैल चढ़ी जीभ, जीभकी प्रदाह मिली सूजन ; सूखी या चिकनी धुमैली आभा लिये सफेद रङ्गकी मैल चढ़ी जीभ।

दाँत और मसूढ़े।—गाल और मसूढ़ेकी सूजनके साथ दाँतमें दर्द ; मसूढ़ेमें फोड़ा, पर पीव पैदा होनेके पहले इसका प्रयोग करना चाहिये।

कण्ठके भीतर।—अधिकांश डिफ्थीरिया रोग यह लक्षण और इसके साथ ही फिरम-फासके प्रयोगसे आरोग्य हो जाया करते हैं। पानीमें गलाकर यह कुल्ला करनेके लिये दिया जाता है। कर्णमूल-प्रदाह और गाँठोंकी सूजनमें तथा गल-नलीका प्रदाह, दाने-भरी, कण्ठकी सूजन, दानोंकी तरह उद्भेद और सफेद या राखके रङ्गका स्राव, तालुमूल—(tonsil) इतना बड़ा हो जाता है और इतना अधिक फूल जाता है, कि रोगी साँस नहीं ले सकता ; उसपर सफेद या धुमैले रङ्गके बिन्दुकी तरह बहुतसे दाने निकलते हैं।

पाकस्थली।—भूख न लगना ; पित्त-विकारके साथ जीभ सफेद या खाकी मैलसे ढकी। मन्दाग्नि—पाचन न होना ; घी या चर्बी मिली चीज खानेपर मिचली ; कन्धेके दाहिने भागमें भार मालूम होना और दर्द ; पाचनमें विकार ;

मुँहमें पानी भर आना, सफेद गदले बलगमकी कै होना; बहुत गर्म दूध या चाय पीनेकी वजहसे उदरमें दर्द। दुःसाध्य कब्जियत; मुँहका स्वाद तीता; पेटमें दर्द; गाढ़े सफेद स्लेष्माकी कै; काले जमे लसदार खूनकी कै; कब्जियतके साथ-ही-साथ कामला रोग (पिलई)।

उदर और मल।—पेटमें सर्दी लगकर क्षुद्रान्तमें स्लेष्मा जम जानेकी वजहसे कामला, मलका रङ्ग खूब हलका सफेद, यकृतकी क्रियाका मन्द पड़ जाना अथवा यकृतकी एकदम क्रिया ही न होना, उदरके दाहिने पार्श्वमें दर्द, कब्जियत, जीभ मैल चढ़ी, टाइफायड ज्वरमें—पतला मल, तलपेट फूला और छूनेपर दर्द, सफेद कृमि, मलद्वारको खुजलाया करता है (इस उपसर्गमें नेट्रम-फास भी फायदा करता है)। अतिसार, टाइफायडके साथ अतिसार, पीली आभा लिये या गेरुआ रङ्गका या मिट्टीके रङ्गका मल; चर्बी मिली या घीकी बनी चीजें खानेकी वजहसे अतिसार; स्लेष्मा-मिला लसदार मलके साथ आमाशय; बवासीर; रक्तका स्राव गाढ़ा, काला सौत्रिक जमा रक्त।

मूत्र और जननेन्द्रिय।—मूत्राशयके नये प्रदाहकी दूसरी अवस्था, जब सूजन आरम्भ होती है और गाढ़ा सफेद स्लेष्माका स्राव हुआ करता है। यह पुराने मूत्राशय-प्रदाह रोगकी प्रधान दवा है। मसाने (kidney) का प्रदाह, हरे रङ्गका पेशाब और यूरिक-एसिडकी तली जमती

है। दूषित सूजाककी बीमारी और अण्डकोषके प्रदाहकी यह श्रेष्ठ दवा है और खासकर अगर सूजाकका मवाद आना रुककर यह बीमारी हुई हो। कोमल उपदंशका जखम और नरम बाघी; इस अवस्थामें निम्न-शक्ति (३x) का प्रयोग करना चाहिये। पुराने उपदंश रोगीके कितने ही उपसर्ग इस नमकके प्रयोगसे आरोग्य होते हैं। रुका हुआ या ऐसा पुराना सूजाक जिसमें मवाद भी आता हो और उसके साथ ही चर्म-रोग।

ऋतु-सम्बन्धी नाना प्रकारके उपसर्गों में कैलि-म्यूर लाभदायक है; ऋतुस्राव देरसे हो या रुका हुआ रहे। बहुत जल्दी-जल्दी ऋतु-स्राव, बहुत अधिक स्राव, काला जमा हुआ अथवा अलकतरेकी तरह रङ्ग और चमड़ेकी तरह कड़ा ऋतु-स्राव। किसी कारणसे रुककर रजोलोप। प्रदर; दूधकी तरह सफेद, गाढ़ा श्लेष्मा, परन्तु विदाही (जखम करनेवाला) नहीं। जरायु-मुख या जरायु-ग्रीवामें जखम, सफेद गाढ़ा, जलन न करनेवाला स्राव; जरायुमें रक्तकी अधिकता और सूजन, दूसरी अवस्था, गर्भवतियोंका सवेरेके समय वमन, सफेद श्लेष्मा-मिला पदार्थ; यह सूतिका-ज्वरकी प्रधान औषधि है। स्तन-प्रदाहमें सूजनको दबानेके लिये इसका प्रयोग होता है।

श्वास-यंत्र।—सर्दी लगकर स्वर-भङ्ग और सफेद मैल चढ़ी जीभ, पाचन-शक्तिमें विकारके साथ दमाकी बीमारी,

सफेद श्लेष्मा, बड़े कष्टसे श्लेष्मा निकल सकता है; यक्ष्मा-रोगमें खाँसी, दूधकी तरह सफेद, गाढ़ा श्लेष्मा; हूपिङ्ग खाँसी; श्वासनलीका दमा इत्यादि स्थानोंपर भी यदि सफेद गाढ़ा बलगम निकलता हो तो इस दवासे फायदा होता है। क्रूप-रोगमें, बहुत श्वास-कष्टके कारण आँख बाहर निकल पड़नेकी तरह हो जाता है। खाँसी कर्कश, कठिन, उसमें कुत्ता भूकनेकी तरह आवाज रहती है। न्युमोनिया रोगकी दूसरी अवस्था, सफेद लसदार बलगम निकलना; प्लुरिसि-रोगकी दूसरी अवस्थामें लसदार स्राव और संयुति। श्वास-नलीमें गाढ़ा लसदार श्लेष्मा रहनेकी वजहसे खिंचाव, फों-फों आवाज़ या बुद्बुद् शब्द, श्लेष्मा निकालनेमें कष्ट और प्रबल खाँसी।

हृद्-यन्त्र।—शोथके साथ और बहुत अधिक रक्त-सञ्चारकी वजहसे हृत्पिण्डका जोर-जोरसे काँपना; रक्तके थक्के बँधनेकी वजहसे रक्त-प्रवाह या हृद्-यन्त्रका अवरोध हो जाना।

पीठ और हाथ-पैर।—ग्रीवाकी ग्रन्थियाँ फूलीं; वात-ज्वर; सन्धिके चारों ओर सूजन और रस-चरण; हिलने-डोलनेपर और चलनेके समय वातका दर्द होता है और बढ़ जाता है (इसके साथ ही फेरम-फास); रातके समय वातका दर्द और शय्याकी गरमीसे वह दर्द बढ़ जाता है; कमरसे पैरतक एकाएक बिजलीकी लहरकी तरह दर्द; शय्या

छोड़कर उठकर बैठ जाना पड़ता है। पुराना वात-रोग, किसी तरह हिलने-डोलनेपर बढ़ना, देह और पैरके तलवेको पुरानी सूजन, बिना दर्दकी सूजन, पर बहुत खुजलाया करता है। लिखनेके समय हाथ अकड़ जाते हैं; हाथ-पैर अथवा अन्य किसी जगहकी खाल उधड़ना, बिवाई फटना।

स्नायु-विधान।—एकजिमा या और किसी तरहका चर्मका उद्भेद बैठकर या बैठ जाने बाद मृगी-रोग या अपस्मार रोगकी यह प्रधान दवा है; कशेरुका-मज्जाका क्षय-रोग, तन्द्रालुता, क्षय-रोग, बेचैनी, सामान्य आवाजसे ही नींद खुल जाती है।

ज्वर।—रक्तकी अधिकता, प्रदाह इत्यादिमें, ज्वराधिकारकी पहली तेजीके समय, तेजी किसी दूसरी दवासे घट जानेके बाद, यह लवण एक दूसरी उत्तम दवा है। पाकाशयिक, आन्त्रिक या सान्निपातिक (टाइफायड) ज्वर। प्रसवके बादके ज्वरमें और वात-ज्वरमें रस-स्राव होना, सविराम ज्वर, सरदीके बोखारमें जब बहुत अधिक जाड़ा मालूम हुआ करता है, साधारण ठण्डी हवा भी मानो हाथके भीतरतक प्रवेश कर जाती है, आगके पास बैठनेपर भी जाड़ा नहीं जाता है, उस समय इसके प्रयोगसे आश्चर्य-जनक कार्य होता है। सरसे पैरतक शरीर ढककर शय्यामें पड़े रहनेपर आराम मालूम होना।

चर्म।—फोड़ा, कार्बङ्कल इत्यादिमें पीव पैदा होनेके पहले इसका प्रयोग करनेपर सूजन दूर हो जाती है और वह फोड़ा बैठ जाता है, गाढ़ा, सफेद रस-भरे छालेके साथ चर्म-रोग, एकजिमा, व्रण इत्यादि। गो-बीजका दूषित टीका लग जानेकी वजहसे नाना प्रकारके चर्म-रोग और अण्डलालकी तरह स्राव मिला एकजिमा। आगमें जल जानेकी वजहसे पैदा हुए सभी तरहके जख्म, छाले इत्यादि (इसको खाने और लगाने दोनों तरहका ही प्रयोग करना चाहिये)। ऋतुस्राव रुकने या बन्द हो जाने बाद एकजिमा रोगका पैदा हो जाना; चेहरा और गलेमें व्रण, छोटी माताके साथ गहरी खाँसी और ग्रन्थिका फूलना और छोटी माताके बादके सभी उपसर्ग। चेचककी गोटियोंको ठीक रखनेकी श्रेष्ठ दवा है। पैरके नाखूनका कोना घुसना, सूजाककी बीमारीकी यह एक खास दवा है। तलहत्थी और हाथमें बहुतसे मसे; हृद्-रोग, यकृत और शोथ, उपदंशसे पैदा हुए उपसर्ग।

ह्रास-वृद्धि।—घी या चर्बीकी पकी गरिष्ट, जल्द न पचनेवाली चीजें खानेकी वजहसे उदर और पाकाशयके सभी उपसर्गोंका बढ़ जाना; वातका दर्द और अन्यान्य दर्द हिलने-डोलनेपर बढ़ते हैं।

प्रयोग।—३x, ६x और १२x का व्यवहार होता है। डिफ्थीरिया-रोगमें इस नमकका ३x विचूर्ण १५ ग्रेनकी मात्रामें एक गिलास पानीमें गलाकर उससे कुल्ला करनेपर

बहुत फायदा होता है। यदि रोगीमें कुल्ला करनेकी शक्ति न हो, तो "स्प्रे" यन्त्रके सहारे प्रयोग किया जाता है। फोड़ा, कार्बङ्कल, मसा, चर्म-रोग और जली हुई जगहपर इस द्रवमें लिण्ट या साफ मलमलका टुकड़ा भिगोकर प्रयोग किया जाता है।

कैलि-म्यूर लवणके बाद—कैल्केरिया-सल्फका प्रयोग करनेपर बाकीके काम पूरे होकर एकदम आरोग्य हो जाता हैं। होमियोपैथीके सलफरके साथ सुसलरके कैलि-मूरको तुलना करनी चाहिये। इसकी क्रिया बहुत ही गहरी होती है और इससे सभी धातुगत दोषोंका संशोधन हो जाता है। अन्तर देकर अन्य दवाओंका प्रयोग करनेपर, उनकी क्रियामें सहायता पहुँचाता है।

कैलि-फास्फोरिकम।

(Kali-Phosphoricum, Potassium Phosphate Phosphate of Potash)

यह नमक कृत्रिम उपायोंसे तैयार होता है। हाइड्रेट या कार्बोनेट आफ पोटाशके साथ पानी मिला फास्फोरिक एसिड मिलाने पर यह उत्पन्न हुआ करता है। यह लवण सहजमें ही गल जाता है, पर सुरासारमें गलाया नहीं जा सकता। बहुत ही उड़जानेवाला है।

मस्तिष्क, स्नायु, पेशी और रक्तकोषाणुका यह एक ऐसा उपादान है, कि त्यागा नहीं जा सकता। इसके अलावा, सभी जैव-तन्तु और रसमें भी यह रहता हैं। परीक्षा करनेपर मालूम हुआ है, कि यदि किसी द्रव्यमें यह लवण रख दिया जाये तो स्नायुका जैव-गुण बहुत दिनोंतक स्थायी रहता है। कैलि-फासमें सड़ना दूर करनेकी भी एक शक्ति हैं। यह तन्तुओंका क्षय होना रोकता है। निस्तेजता, क्षय—ये दोनों ही कैलि-फासकी क्रिया करनेके क्षेत्र हैं।

अगर जीव-देहके कैलिफास लवणके परमाणु गड़बड़ा जायें, तो नीचे लिखे लक्षण प्रकट होते हैं। जैसे,—

१। मानसिक क्षेत्र—संकुचित भाव, दुश्चिन्ता आतंक, अविश्वास, रुलाई आना, अपने घर लौट आनेके लिये बहुत व्याकुलता, स्मरण-शक्तिकी कमजोरी, मानसिक सुस्ती, इत्यादि।

२। रक्त-प्रवाहकी राहोंके अधिनायक स्नायु (vaso-motor-nerves); नाड़ीकी गति पहले हलकी और तेज रहती है। इसके बाद धीमी हो जाती है।

३। ज्ञान-स्नायु (sensory nerves)—दर्दके साथ पक्षाघातका भाव।

४। गति-स्नायु (motor nerves);—पेशियों या स्नायुओंकी पतनावस्थासे लेकर पक्षाघात तककी सभी अवस्थायें।

५। सहानुभूतिक स्नायु (sympathetic nerves)—पोषण-तन्तु :—किसी एक सीमाबद्ध कोषाणु-क्षेत्रका पोषण या

तो रुक जाता है या एकदम बन्द हो जाता है और इसीका यह परिणाम होता है, कि बाकीके अवशिष्ट स्नायु कोमल पड़ जाते हैं।

साधारणतः स्नायविक शक्तिकी कमीकी वजहसे पैदा हुई अवस्थामें कैलि-फास सबसे ज्यादा फायदा करता है। जैसे,—पतनावस्था, अधिक परिश्रम करना, मानसिक दुर्बलता, सुस्ती, बहुत ज्यादा मानसिक परिश्रम करनेके कारण सुस्ती आ जाना; स्नायविक दुर्बलताके कारण पैदा हुए नाना प्रकारके उपसर्गोंकी यह एक श्रेष्ठ दवा है। किसी नयी बीमारीके बाद स्नायु-शक्तिका घट जाना और इसी वजहसे पेशीकी कमजोरी और दुबलापन, वृद्धोंका दुबले होते जाना, सड़नेवाले जखम और उससे रक्त-स्राव, क्षय करनेवाला उपदंशका जखम, बदबूदार पतले दस्त या अतिसार इत्यादि रोगोंमें इस लवणका व्यवहार बहुत अधिक दिखाई देता है।

विशेष और निर्देशक लक्षण।

मन।—उत्कण्ठा और बिना किसी कारणके ही एक तरहका स्नायविक आतङ्क, भयसे व्याकुल भाव, सब विषयोंकी बुराई ही पहले देखता है; कारबार और धन-सम्पत्तिके सम्बन्धमें हमेशा ही चिन्तित बना रहता है। मनुष्य-समाजमें मिलना नहीं चाहता, किसीके साथ बोलनेकी इच्छा नहीं होती; बहुत अधिक मानसिक परिश्रम करनेकी वजहसे

मस्तिष्कका सुस्त पड़ जाना; उत्साहका न रहना; रूखा मिजाज़, बहुत अधैर्य, लिखनेके समय वर्ण-विन्यासमें भूल करता है, अक्षर या वाक्य छोड़ जाता है, भूल बातें बोल जाता है, अपना भाव प्रकट करनेमें गड़बड़ा जाता है, कोई आवाज होनेसे ही चौंक पड़ता है, किसी विषयकी मीमांसा नहीं कर सकता। जाग्रत अवस्थामें भी स्वप्नमें पड़े रहनेकी तरह अण्ट-सण्ट बकता है। डर जानेके बादके बहुतसे उपसर्ग; ग्रीष्ममें पड़ जानेके बाद नाना प्रकारकी बीमारियाँ।

हिस्टीरिया,—एकाएक मानसिक विकारकी वजहसे—हिस्टीरिया पैदा हो जाती है। पर्याय-क्रमसे हँसना और रोना, मिथ्या धारणाके वशमें पड़ा रहता है; उद्विग्न चित्त, दुःखित चित्त; हिस्टीरियाके कारण बार-बार जम्हाई लेना; हमेशा लम्बी साँसें लिया करना; सुस्ती, सामान्य कारणसे ही अभिमान, मदात्यय, शराबियोंके हाथ और गलेका काँपना, डर, नींद न आना, बेचैनी, सन्देह, भ्रम-भरी बातें, मस्तिष्ककी कोमलताकी पहली अवस्था, छूते ही चौंक पड़ता है।

बालक-बालिकाओंकी मानसिक दुर्बलतामें केलि-फास्फोरिकम उपयोगी है। रूखी प्रकृति, कलह-प्रिय, असन्तुष्ट, सहजमें ही डरसे व्याकुल हो पड़ता है; रुलाई आती है; रातमें भय; बहुत ही लजालु; स्नायविक दौर्बल्यकी वजहसे जरा-सी आवाजमें ही चौंक उठता है; नींदमें बका करता है, जागनेपर गोदमें चढ़कर एक कमरेसे दूसरे में घूमना चाहता है। सहजमेंही जाग उठता है।

मस्तक।—सोये सोये उठकर खड़े हो जानेपर, बैठे रहने के बाद खड़े होनेपर या ऊपरकी ओर देखनेपर सरमें चक्कर आजाया करता है। स्नायविक सुस्ती और कमजोरी की वजहसे सरमें चक्कर आना। मस्तिष्कमें खूनकी कमी; चेतना भी हलकी हुआ करती है। लिखने पढ़नेवाली बालिकाओंका सर दर्द, बहुत अधिक परिश्रमके बाद सर दर्द; धीरे धीरे चलनेपर घट जाता है। माथेके पिछले भाग में दर्द और भार मालूम होना, दोनों आँखें भारी मालूम होना, भोजनके समय घटना; औरतोंको मासिक ऋतुके समय सर-दर्दके साथही साथ ज्यादा भूख लगना, ज्यादा परिश्रम करनेकी वजहसे, स्नायुशूलका सर दर्द, कानमें भों भों आवाज, लेटे रहना या पड़े रहना पर प्रसन्न करनेवाली बातोंसे घटता है। मस्तिष्कमें जल संचय, बायीं शंखास्थि (कनपटी) के स्थानपर भयानक यंत्रणा, चलने और खुली हवामें बढ़ना।

आँख।—दृष्टि शक्ति क्षीण, अनुभव शक्तिका बिगड़ जाना, डिफ्थीरिया रोगके बाद, बहुत परिश्रम करनेके बाद। आँखका डरावना या उत्तेजित भाव, डिफ्थीरियाके बाद वक्र-दृष्टि, पलकें झूल पड़ना, आँखमें बालू और कूड़ा पड़ने की तरह कष्ट, दोनों आँखोंके गोलोंमें दर्द, पलकोंमें दर्द, धुआँ लगनेकी तरह जलन, आँख फड़कना और धुँधली दृष्टि; काले रंगके बिन्दु सब उड़ते फिरते हैं।

कान।—स्नायविक दौर्बल्य और अवसादकी वजहसे स्नायुओंकी अनुभव शक्तिका बिगड़ जाना और उसी वजहसे बहरापन; नींद लगतेही कानमें नाना प्रकारकी आवाजें आने लगना; बदबूदार सड़ा, लाली लिये, रसकी तरह पीवका स्राव; कानमें पीव पैदा होजाना और रस बहना; बुढ़ापेमें कर्णमूल ग्रन्थिका शीर्ण हो जाना, सुखी मैल निकलना, कानमें भों भों आवाज; कर्णकुहरकी खुजली, थोड़ी-सी आवाज भी सहन नहीं होती।

नाक।—कमजोर दुबले मनुष्योंको नाकसे अकसर खून गिरा करता है।—**गाढ़ा पीली आभा लिये श्लेष्मा का स्राव,** बदबूदार पीली पपड़ी जमनेवाला जख्म; पीनस रोग। कण्ठतालुके स्थानपर गाढ़ा पीली आभा लिये श्लेष्मा इकट्ठा होता है और बहुत जोर लगाकर निकालना पड़ता है।

मुखमण्डल।—चेहरा पीला, चेहरा दबा हुआ, गहड़ेमें धसी आँखें, कभी कभी चेहरा लाल, गरम, मुँह और ललाटमें जलन, इसके अलावा कभी कभी रक्तहीन और पीली आभा लिये चेहरा; दाहिने भागका स्नायुशूल, ठण्डे से घटना; ऊपरकी दन्तपंक्तिसे लेकर बायें कानतक फैला हुआ स्नायुशूल का दर्द; जबड़ेमें दर्द, पर खाने, बोलने या दबानेपर घटना; सुखमण्डलकी :कमजोरी की वजहसे चेहरा बिगड़ जाना, दाढ़ी के केशोंमें खुजली, व्रण।

मुँहके भीतर।—ओंठोंपर छाले निकलना; दर्द-भरी पपड़ी जमती है, खाल उधड़ जाया करती है। मुँहके घाव, साँस छोड़नेमें बदबू, मसूढ़ेमें स्पंजकी तरह बहुत से छेद हो जाता है और दाँत कुछ ऊपर चढ़ जाते हैं। मुँहका जखम, धुमैला जखम, बदबू, बहुत ज्यादा, गाढ़ी लसदार लार निकलना।

जीभ।—सवेरे जीभ बहुत सूखी रहती है। ऐसा मालूम होता है, मानो अड़ो हुई है। सफेद, लसदार या जीभ पर ऐसा मालूम होता है, मानो सरसोंका लेप चढ़ा हुआ है। जीभका प्रदाह, बहुत सूखापन, सुस्ती, किनारे लाल और दर्द भरे रहते हैं।

दाँत।—मसूढ़ों के किनारे लाल डोरे, खून निकलने का लक्षण। क्षय हुए या नकली लगवाए हुए दाँतमें बेतरह दर्द; भावप्रवण, क्षोण, रक्त-रहित जैसे, स्नायु प्रधान व्यक्तियोंके दाँतका दर्द। बोली जकड़ी हुई और धीरे धीरे बोलता है। दाँत कड़मड़ाया करता है।

पाकाशय।—पाकाशय के परिपोषक स्नायुकी विशृंखलताके कारण जखम, पाकाशय गह्वरमें एक स्नायविक पतनकी तरह अनुभव होना, भोजनके बादही भयानक भूख, पेट फूलना, डकार, स्नायविक अवसन्नताके साथ अजीर्णकी बीमारी; भय या उत्तेजना की वजहसे उदर-शूल। बहुत ही अधिक प्यास, मिचली और वमन; वमनका स्वाद तीता; खून

मिला और खट्टा ; तीती और खट्टी डकार ; उदरके एक छोटे से स्थानमें लगतार दर्द, मस्तिष्क रोगके साथ घोर हरा या नीले रंगका वमन ; उदर में खालीपन मालूम होनेके साथही साथ मरोड़ ; भोजनके बाद घटना।

तलपेट ।—हृद्‌पिण्डके नीचे बायीं ओर कमजोरी, प्लीहाके कारण पैदा हुई बीमारी ; वायुकी अधिकताकी वजहसे हृत्पिण्ड अथवा उदरमें बायीं ओर दर्द ; पेट फूला ; जीभ सूखी और प्यास। टायफायड ज्वरमें, कमजोरी और इस लवण के लक्षण रहनेपर इसका प्रयोग करना चाहिये। तलपेटमें बहुत दर्द रहने के साथ वृथा ही पाखाना लगना ; सामने की ओर झुकने पर आराम मालूम होना ; शूल के दर्द की वजह से शीत आजाना, भूरे रंगका या पीली आभा लिये चेहरा, नाड़ी की गति बहुत कोमल। इस ढंगके शूलके दर्दमें कैली-फासके साथ मैग्नेशिया फासका प्रयोग करनेपर बहुत फायदा होता है। भय अथवा अन्य सुस्ती लानेवाले कारणोंसे पैदा हुआ बिना दर्दका उदरामय ; पानीकी तरह दस्त। विसूचिकामें चावलके धोये हुए पानीकी तरह दस्त। दस्तमें बहुत बदबू ; दस्त लाल आभा लिये। टाइफायड के साथ बदबूदार पतले दस्त और आमाशय ; बहुत जोरसे पाखाना लगना ; पतला पानीकी तरह दस्त, इसके बाद ही कूथन। ऊँची आवाजके साथ बदबूदार वायु निकलना। पाखाना होने बाद मलद्वार में जलन और दर्द। कब्जियत ; घोर खाकी रंगका मल और इसके साथही पीली आभा लिये हरे रंगका श्लेष्मा लिपटा रहता है। छोटी

आँत और मलद्वारकी शक्तिहीनता ; बवासीर—दर्द भरी ; कुट कुटाया करती है।

मूत्र-यंत्र।—बड़े लड़के लड़कियोंका पेशाब न रोक सकना ; मूत्राशयकी पक्षाघात हो जानेवाली अवस्था। स्नायविक दुर्बलताकी वजह से पेशाबका वेग रोक न सकना ; मूत्रनली से रक्तस्राव, बार बार बहुत ज्यादा मात्रामें पेशाब होना ; इसके साथही अकसर जलन हुआ करती है। "ब्राइट रोग" अर्थात पेशाबमें अण्डलाल निकलना ; मधुमेह (पेशावमें चीनी diabetes) ; स्नायविक दुर्बलता ; राक्षसी भूख, तेज प्यास इत्यादि। प्रमेह रोगके साथ रक्तस्राव ; पेशाब केशरकी तरह पीला ; मूत्रनलीमें खुजली ; मूत्राशय और मूत्रनलीमें काटने की तरह दर्द।

पुं-जननेन्द्रिय।—बहुत अधिक कामोद्रेक ; सवेरेके वक्त लिङ्गमें कड़ापन ; रातमें स्वपनदोषकी वजहसे कष्टकर वीर्य स्खलन ; परन्तु उससे लिङ्गमें कड़ापन नहीं आता ; ध्वजभंग ; संगमेच्छा अधिकांश समय नहीं रहती है। रतिक्रिया के बाद बहुत कमजोरी और देखनेकी शक्तिमें गड़बड़ी आजाना ; क्षय करनेवाला उपदंशका जखम ; लिङ्गमुण्डका प्रदाह।

स्त्री-जननेन्द्रिय।—स्नायविक प्रकृतिकी स्त्रियोंको समय के पहले ही ऋतुस्राव हो जाना ; स्राव परिमाण में अधिक होना अथवा नियमित परिमाणमें थोड़ा और काले रंगका बदबूदार स्राव होना ; मानसिक कमजोरी ; शारीरिक

थकान मालूम होना, स्नायविक दुर्बलताके साथ ही साथ रजोरोध, कमलानीबू की तरह पीली आभा लिये स्राव ; उरु, उदर और अलग बगलके स्थानमें लगकर वहाँकी खाल उधड़ जाती है और जखम पैदा होजाता है। खून कम हो जाना, रोनी, स्नायु-प्रधाना रमणीका ऋतुशूल ; ऋतु होजाना, बहुत अधिक कामेच्छा ; हिस्टिरियामें ऐसा अनुभव होना कि उदरसे कण्ठ तक एक गोलाकार पदार्थ चढ़ रहा है। गर्भस्रावकी आशंका प्रकट करनेवाला लक्षण ; सूतिकोन्माद ; शारीरिक दुर्बलता की वजह से बहुत दिनोंतक स्थायी प्रसवका दर्द ; क्षीण और व्यर्थ प्रसवका दर्द ; स्तनका प्रदाह ; धुमैला ; मैला, बदबूदार पीवका स्राव और बहुत कमजोरी।

श्वास-यंत्र।—थोड़ासा भी खानेपर दमका खिंचाव बढ़ जाता है। कैली-फास ३x के प्रयोग से बहुत जल्द फायदा दिखाई देता है। वात-ग्रस्त या स्नायु-प्रधान मनुष्योंके व्याख्यान देने पर या गाना गानेपर स्वरभंग हो जाता है। गलनलीका उपदाह ; दर्द चिर जानेकी तरह मालूम होता है। कफ गाढ़ा, पीली आभा लिये, बदबूदार और उसका स्वाद नमकीन। हूपिङ्ग खांसी ; फेफड़ेका नया शोथ ; आक्षेपवाली खाँसी और इसके साथ ही फेनभरा लार मिला लसदार बलगम बहुत ज्यादा मात्रामें निकलता है।

वक्ष।—हृद्-यन्त्रकी कमजोरीकी वजहसे सरमें चक्कर आना और बेहोशीकी तरह भाव, स्नायविक उत्तेजना,

भाव-प्रवणता, दुश्चिन्ता या शोककी वजहसे कलेजा धड़कना, नाड़ी अनियमित, पर्यायसे चलनेवाली, स्नायविक स्पन्दनकी मात्रा छोटी होते जाना, रक्त-सञ्चालन क्रियाका घट जाना।

पीठ और हाथ-पैर।—मेरुदण्डमें खूनकी कमी, कशेरुकाकी मज्जाके कोमल पड़ जानेकी वजहसे रोगीकी गति अस्वाभाविक, सहजमें ही ढुलक पड़ता है और झटके खाता है। वातसे पैदा हुआ अथवा पक्षाघातसे उत्पन्न लंगड़ापन, विश्रामके बाद अकड़न और धीरे-धीरे कदम रखनेपर घटना, अंगुलीका अगला भाग सुन्न; तलहत्थी और तलवा खुजलाया करता है। पैरमें जलन, हमेशा पैर हिलाया करता है। दोनों स्कन्धास्थियोंके बीचके स्थानमें दर्द; पीठ और हाथ-पैरमें दर्द, चलनेपर घटना; बैठे रहनेके बाद उठनेपर या अधिक परिश्रमके बाद बहुत दर्द। रोगवाली जगहपर कुचल जानेकी तरह दर्द और इस जगहपर चर्मका रङ्ग बदरङ्ग हो जाता है। नयी या पुरानी वातकी बीमारी, चलने या खड़े होनेके आरम्भमें बढ़ना; नींदके बाद सवेरे उठनेके समय बहुत तकलीफ; रोगवाले अङ्गका अकड़ जाना; कड़ी बीमारीके बादकी कमजोरी; पैरकी अंगुलीकी खाल उधड़ जाना।

ज्वर।—सविराम ज्वर; कमजोर कर देनेवाला; बहुत ज्यादा बदबूदार पसीना। टाइफस (मोह-ज्वर); दूषित, स्नायविक और मस्तिष्क-घटित ज्वर। पाकाशयिक,

आन्त्रिक और टाइफायड ज्वरकी यह श्रेष्ठ दवा है। त्वचापर काला दाग पड़ना, जीभ सूखी और खाकी ; नींद न आना, प्रलाप और बेहोश जैसी अवस्था। ज्वरका बहुत ही तेज उत्ताप, बहुत ज्यादा और कमजोर करनेवाला बदबूदार पसीना ; कमजोर पाचन-शक्ति ; भोजनके समय पसीना ज्यादा होना।

चर्म।—एकजिमा, स्पर्शका एकदम सहन न होना और स्नायविक उत्तेजना ; फोड़ा ; अंगुलहाड़ा ; विष-व्रण (कार्बङ्कल) ; बदबूदार पीव ; नारंगा, छाले, जलभरी या पीव-भरी फुन्सियाँ, चारों ओरका चमड़ा सिकुड़ा और प्रायः सूखा ; चींटी रेंगनेकी तरह अनुभव होना और खुजलाहट। माथेमें जगह-जगहपरके केश उड़कर खल्वाट निकल आता है। दुष्ट-व्रण, चेचक-रोगमें पतनावस्था (शीत आ जाना), हाथ-पैर और कानके पासकी जगहकी खाल उधड़ जाती है ; सुरसुरी होती है और वह जगह खुजलाती है।

तन्तु और कोष।—खूनकी कमी ; धीरे-धीरे कमजोर होते जाना ; कार्श्य-रोग ; नाना प्रकारकी चय करनेवाली बीमारीके साथ बदबूदार मल ; रक्त-स्राव ; खून काला, पतला, जमता नहीं ; सड़नेवाला ; बहुत अधिक विषय आदि करनेके कारण ताकतका घट जाना और बहुत-सी बीमारियाँ पैदा हो जाना ; सड़न और विष-क्रियाकी वजहसे होनेवाला रक्त-स्राव ; वृद्धोंका कार्श्य-रोग, तन्तु

सब सूखते जाते हैं; त्वचा रुखड़ी रहती है और उसपरसे भूँसीकी तरह निकलती है; जीवनी-शक्तिका चय होते जाना; मल-मूत्र सबमें ही सड़े मांसकी तरह बदबू रहा करती है।

ह्रास-वृद्धि।—विश्रामके बाद, बैठे रहनेके बाद उठनेके समय, परिश्रमसे, बहुत देरतक काम करते रहनेपर बढ़ना। सब तरहके दर्द ही ठण्डमें बढ़ जाते हैं। कैलि-फासके रोगीको धीरे-धीरे हिलानेपर, भोजनके समय, उत्ते-जनामें और एक सङ्गीके साथ रहनेपर आराम मालूम होता है; वह अकेला नहीं रहना चाहता।

प्रयोग।—३x, ६x, १२x और इससे भी उच्चतम शक्तियोंका प्रयोग होता है।

——

कैलि-सल्फ्युरिकम।

(Kali Sulphuricum, Potassium Sulphate, Sulphate of Potash)

स्वाभाविक खनिज-पदार्थ; ज्वालामुखी पहाड़से निकली हुई राखसे ही इस लवणका सबसे पहले आविष्कार हुआ था। इसका स्वाद तेज, तीता, नमकीन रहता है। यह अपने दसगुने ठण्डे पानीमें और तिगुनी मात्रामें गरम पानीमें गल सकता है, सुरासारमें यह गलता ही नहीं।

चर्म और अधित्वक (sub-mucous tissue) पर इसकी प्रधान क्रिया होती है। इसकी कमी पड़ जानेपर जीभमें पीली आभा लिये, चिकनी मैल जमती है। श्लैष्मिक-झिल्लीसे पतला, चमकीला, चिकना, पीला अथवा हरा स्राव होता है; चर्मके ऊपरसे एक पतली छाल निकल जाया करती है। शरीरके प्रत्येक कोषाणुकी पुष्टि और वृद्धिके लिये अम्लजान (oxygen) की जरूरत पड़ा करती है। कैलि-सल्फ इसी अम्लजानको पहुँचाता है और रक्त-कणके भीतर लौहके जो परमाणु रहते हैं, वे उसे ग्रहण कर लिया करते हैं। इन दोनों लवणोंकी एकत्र क्रियाके द्वारा सभी कोषाणुओंमें अम्लजान पहुँच जाया करता है।

जब कैलि-सल्फुररिकमके परमाणु घट जाते हैं, तो बहुत तरहके रोग-लक्षण प्रकट हो जाया करते हैं। जैसे,—क्लान्ति, भार मालूम होना, सरमें चक्कर आना, जाड़ा मालूम होना, कलेजा धड़कना; डर; उदासी; दाँतमें दर्द; सर-दर्द; अङ्ग-प्रत्यङ्गमें दर्द; इसके लक्षण ठहर-ठहरकर पैदा होते हैं और बीच-बीचमें जगह बदला करते हैं। बन्द घरके भीतर, गरमीमें और तीसरे पहर इसके लक्षण बढ़ जाते हैं; अम्लजान-पूर्ण खुली हवामें ये घटते हैं।

रातके समय ज्वरका बढ़ना, सन्ध्याके बाद सभी लक्षण बढ़ जाया करते हैं; चर्मके उद्भेद अगर दब जाते हैं, तो बहुतसे दूसरे रोग पैदा हो जाया करते हैं। यदि कैलि-फास पसीना न ला सके तो कैलि-सल्फका प्रयोग करना चाहिये।

विशेष और निर्देशक लक्षण।

मन।—गिर जानेका बहुत भय।

मस्तक।—ऊपरकी ओर देखने और उठकर खड़े हो जानेपर सरमें चक्कर आ जाना; सन्ध्याके समय और गरम घरमें सरका चक्कर बढ़ जाया करता है; ठण्ड और खुली हवामें घट जाया करता है। केश झड़ जाते हैं और जगह-जगह खल्वाट निकल आती है। चर्म तरकी तरह रहता है और लसदार रहता है; बहुत ज्यादा रूसी निकलती है; वातकी वजहसे पैदा हुआ सर-दर्द, सन्ध्याके समय और गरमीमें आरम्भ होता है, अगल-बगलके भावसे या सामने-पीछे सर हिलानेपर बढ़ जाता है।

आँख।—मोतियाबिन्द; पुतली गदली; कनीनिकामें फोड़ा; आँखकी पलकमें पीली आभा लिये पपड़ी जमती है; पीले रङ्गका हरी आभा लिये पीवका स्राव; बच्चोंकी आँखोंका प्रदाह; आँखके भीतर पीव पैदा हो जाना।

कान।—सर्दीके कारण श्रवण-पथका सूख जाना या कर्ण-पटहका गह्वर फूल जानेके कारण बहरापन; कानमें दर्दके साथ पतले रसका स्राव होना या पीले रङ्गका पीव बहना (गाढ़ा स्राव होनेपर—केल्केरिया-सल्फ); कर्ण-मूलके नीचे दर्द; तेज काटनेकी तरह या सुई गड़नेकी तरह दर्द और खिंचाव मालूम होना; बदबूदार स्राव होना।

बहुपाद—अर्बुद (polypoid) निकलकर श्रवण-रन्ध्रका बन्द हो जाना ।

नाक ।—सर्दी, पतला स्राव निकलना अथवा पीले रङ्गका चिकना श्लेष्मा निकलना ; पीले रङ्गका या पीली आभा लिये हरे रङ्गका श्लेष्मा निकलना ; पुरानी सर्दी ; पीले रङ्गका गोंदकी तरह श्लेष्मा ; किसी चीजकी भी गन्ध नहीं आती । सन्ध्याके समय और गरम कमरेमें बढ़ना ; नयी सर्दी, फेरम-फासके प्रयोगके बाद भी यदि शरीर सूखा रहे और पसीना रुका रहे तो इस लवणका प्रयोग करना चाहिये ।

मुखमण्डल ।—खाल निकला करती है, रङ्ग सफेद अथवा लाल आभा लिये चेहरा और देखनेमें चेहरा विकृत दिखाई देता है । चेहरेका स्नायु-शूल ; गरम कमरेमें ; तीसरे पहर,तकलीफोंका बढ़ना ; ठण्डेमें और खुली हवामें घटना ।

मुँहके भीतर ।—निचला ओंठ फूला, सूखा और उसपरसे खाल निकला करती है । कैन्सर, मुँहके भीतर जलन और गरमी मालूम होना ; जीभ पीली, चिकनी मैलसे ढकी और कभी-कभी किनारेपर सफेद मैल चढ़ी रहती है । स्वाद बिगड़ा हुआ ; मसूढ़ेमें पुराना दर्द ; दाँतमें दर्द ; गरमीसे और तीसरे पहर बढ़ना ; ठण्डेसे और खुली हवामें घटना ।

पाकाशय ।—जलन, प्यास, मिचली और वमन ; अजीर्ण, दबाव और भार मालूम होना, दर्द, मुँहसे पानी

निकला करता है। मैग्नेशिया-फासचे फायदा न होनेपर पेटके दर्दमें इस लवणका प्रयोग करना चाहिये। पाकाशयिक ज्वरमें—जब रातमें ज्वर बढ़ जाया करता है और सवेरे घट जाता है, ज्वरके समय प्यास नहीं रहती, गरम पानी पीनेसे डरता है। कामला-रोग हो जाना।

उदर और मल।—पीले रङ्गका चिकना, पतला, बदबूदार मल और इसके साथ ही ऊपर बताये ढङ्गकी जीभ। दर्द, उदरवाली जगह छूनेपर वह ठण्डी मालूम होती है; परिश्रमके बाद ही ठण्ड लगकर पेटमें दर्द हो जाना; उत्तेजना या गरमीके कारण पेटमें वायु होकर दर्द। अधोवायुमें गन्धककी तरह गन्ध रहती है। बवासीर, भीतरी मसा या बाहरी मसा; ऊपर बतायी,—मैल-चढ़ी जीभ और रस बहना; हैजाका लक्षण; मल काले रङ्गका; बहुत पतला और बदबूदार; टाइफायड ज्वर; उदराध्मान (पेटमें वायु होना); पेटका चमड़ा मानो खिंचा रहता है, रातमें ज्वर बढ़ जाया करता है और सवेरे घटता है; छोटी माताके बाद मसानेका प्रदाह।

पुं-जननेन्द्रिय।—सूजाक, पीले रङ्गका या हरे रङ्गका लसदार मवाद आना, पुराना सूजाक; सूजाकका मवाद आना बन्द होकर अण्डकोषका प्रदाह; उपदंश; रातमें तकलीफोंका बढ़ना।

स्त्री-जननेन्द्रिय।—पीले रङ्गका या हरे रङ्गका स्राव; चिकना या पानीकी तरह पतला प्रदरका स्राव

होना। ऋतु बहुत देरकर होता है। स्राव बहुत थोड़ा, तल-पेटमें भार मालूम होना और भरापन अनुभव होना; सर-दर्द; पीली आभा लिये मैल-चढ़ी जीभ; जरायुसे रक्त-स्राव।

श्वास-यंत्र।—दमा, पीले रङ्गका बलगम निकलना, गरमीके दिनोंमें बढ़ना; ब्राङ्काइटिस, बहुत ज्यादा और पतला बलगम निकलना या पीले रङ्गका अथवा हरे रङ्गका चिकना बलगम। नियुमोनिया; श्लेष्मा पीला, घरघराहटकी आवाज मिलती है; पर बलगम निकाल नहीं सकता; घुंडी खाँसी (क्रूप) कड़ी, आवाज बैठ जानेके साथ घर घर करने-वाली खाँसी, बलगम गलेतक आकर फिर उतर जाता है, बल-गम निकाल नहीं सकता, बाध्य होकर निगल जाना पड़ता है। रोगी ठण्डी हवाकी इच्छा करता है। निमोनियाकी और भी एक अवस्था है, जब पीले रङ्गका गाढ़ा श्लेष्मा या पानीकी तरह पतला श्लेष्मा निकला करता है। गरमी सहन नहीं कर सकता; नाड़ी तेज, इतनी क्षीण कि सहजमें अनुभवमें नहीं आती।

पीठ और हाथ-पैर।—पीठ, गला और हाथ-पैरोंमें, स्नायविक और वातसे पैदा हुआ दर्द; गरम कमरेमें, संध्याके समय बढ़ना; ठण्डी हवासे घटना; ग्रन्थियों और अन्यान्य अङ्गोंमें वातका दर्द; इधर-उधर हटनेवाला दर्द; ऊपर लिखे ढङ्गका घटना-बढ़ना; हाथ-पैरमें ऐंठन; हाथके चमड़ेसे भूँसी निकला करती है; गरम पानीका व्यवहार करनेपर अच्छा रहता है।

स्नायु-विधान।—शरीरके कितने ही स्थानोंमें—स्नायविक दर्द, यह दर्द हमेशा ही जगह बदला करता है, ताण्डवरोग; खूब स्पष्ट सपने दिखाई देना।

ज्वर।—तीसरे पहरसे लेकर आधी राततक बढ़ना, इसके बाद ही घट जाना। केलि-फास पसीना लानेवाला नमक है। इसका बार-बार प्रयोग करना आवश्यक है और उस समय रोगीको कम्बल या रजाई ओढ़ाकर रखना चाहिये। सविराम ज्वर, पीले रङ्गकी चिकनी मैल-चढ़ी जीभ। दूषित रक्तके कारण ज्वर, सान्निपातिक ज्वर, पाकाशयकी गड़बड़ीकी वजहसे ज्वर, छोटी माताके ज्वरमें जब भूँसी निकलनी आरम्भ हो जाती है।

चर्म।—चर्म निष्क्रिय, पसीना नहीं होना (ऐसी अवस्थामें रोगीको शय्यामें सुलाकर और कम्बलसे ढँककर गरम पानीके साथ इस दवाका प्रयोग किया जाता है); छोटी माता, एकजिमा या किसी दूसरे उद्भेदके कारण बोखार इत्यादि होनेपर, ठण्ड लगकर या किसी दूसरे कारणसे उद्भेद बैठ जानेपर, छालेके साथ होनेवाले विसर्प रोगमें—इस दवासे बहुत जल्दी पपड़ी उतरने लगती है। तलहत्थीका पुराना मोटा दाद। बालक-बालिकाओंके सन्धि-स्थानकी खाल उधड़ जाना, जखम, पीली आभा लिये पतला स्राव, मसूरिका, इस दवासे बहुत जल्दी पपड़ी उखड़ जाती है और नयी त्वचा आ जाती है; कोमल मर्से और अर्बुद।

ह्रास-वृद्धि।—गरम घरमें और संध्यामें बढ़ना और ठण्डी खुली हवामें घटना; इस दवाका सबसे श्रेष्ठ संकेत है। पीले रङ्गका लसदार, चिकना स्राव, यावत श्लैष्मिक झिल्लियोंसे होना—इसका विशेष लक्षण है।

प्रयोग।—कैलि-म्यूर द्वारा रुका हुआ काम इससे पूरा हो जाता है। ६x और १२x शक्तिका व्यवहार होता है। माथेमें रूसी और माथेके दूसरे-दूसरे चर्म-रोगोंमें भी इसका बाहरी प्रयोग प्रचलित है।

मैग्नेशिया फास्फोरिका।

Magnesia phoshorica, Phosphate of Magnesium, Magnesium Phosphoricum.

फास्फेट आफ सोडा और सलफेट आफ मैग्नेशिया के संयोगसे यह लवण तैयार किया जाता है। पानीमें सहजमें यह नहीं गलता; ३२ गुने परिमाणके पानीमें बहुत देर तक भिंगो रखनेपर कहीं गलता है; आगकी गरमीमें इसे खौला-नेपर यह गल जाता है।

पेशी, स्नायु, अस्थि, मस्तिष्क, दन्त और रक्तकण का यह उपादान है। इसकी मात्रा अथवा क्रिया की शरीर में गड़बड़ी होनेपर खींचन, दर्द और पक्षाघात के लक्षण प्रकट होते हैं।

सुसलर कहते हैं—फेरम फास लवण के साथ इसका विपरीत सम्बन्ध है, **फेरम फास** के परमाणु की क्रिया जब गड़बड़ा जाती है; तो तन्तु सब संकुचित हो जाते हैं; पर **मैग्नेशिया फास** की परमाणु की क्रिया में गड़बड़ी पैदा हो जानेपर, अणु सब संकुचित हो जाते हैं। इसलिये ही अंगोंमें खींचन, अकड़न और दूसरे दूसरे स्नायविक कारणोंसे उत्पन्न रोगोंमें मैग्नेशिया फास्फोरिका फायदा करता है।

स्नायु-सूत्र के कोषाणु और स्नायुके अन्तिम भाग के कन्द (bulb) से उत्पन्न रोग, पेशी, और पेशी तन्तुसे उत्पन्न रोगोंमें यह नमक बहुत फायदा करता है। शूल वेदनाकी तरह अड़कन मिला, छेदनेकी तरह, बिजली की लहर मार जानेकी तरह दर्द और उसके साथही रोगवाले अंगोंमें संकोचन मालूम होना। इसका दर्द जगह बदलनेवाला होता है। अर्थात बीच बीच में जगह बदला करता हैं। गरमी और दबानेपर घटना; इसका विशेष लक्षण है। इसकी क्रिया अकड़न दूर करनेवाली होती है; और एकदम दुर्बल, पतले जीर्ण शीर्ण, बहुत ही स्नायविक और हलके रंगके मनुष्योंके लिये ज्यादा उपयोगी है। इसकी क्रिया शरीर के दाहिने भाग पर ही अधिक प्रकट होती हैं, बहुत पतनावस्था (गहरा शीत आ जाना) और बहुत ज्यादा पसीना होना—इसके प्रयोगका एक दूसरा संकेत है। नये और पुराने दोनों ही तरह के मैग्नेशिया फास के रोगी सुस्त, थके, काहिल, बैठनेमें असमर्थ रहते हैं और लेटे या पड़े रहना चाहते हैं।

विशेष और निर्देशक लक्षण।

मन।—भ्रान्त अनुभूति, बड़ी चीज को भी छोटी समझता है, कुछ भी याद नहीं रहता ; बुद्धिकी जड़ता, किसी बात या विषयको ही अच्छी तरह सोच नहीं सकता ; मानसिक परिश्रमकी इच्छा ही न होना। हमेशा ठण्डी साँसें लिया करता है, हमेशा ही कराहता रहता है, तकलीफसे हमेशा ही कराहता रहता है। इसके साथ ही हिचकी, चिन्तामें भरा भाव, उसी भावमें बैठा रहता है या अपने मन ही मन कुछ बका करता है। चीजें लगातार इधरसे उधर हटाया करता है।

मस्तक।—बालक बालिकाओं की मस्तिष्ककी बीमारी, बेहोशीकी हालतमें अकड़न, सर दर्द,—तीर बेधने की तरह, छुरा घुसानेकी तरह, इधर उधर हटनेवाला ; रुक रुककर होने वाला सर-दर्द, आक्षेप मिला और स्नायविक सर-दर्द। सेंकने पर आराम मालूम होना, सर-दर्दके साथ आँख के सामने आगकी चिनगारियाँ दिखाई देना ; युवक और बलवान मनुष्य, विद्यालयके विद्यार्थी इन सबके मानसिक परिश्रमके बाद अथवा हानिकारक उत्तेजनाकी वजह से पैदा हुए सर-दर्द में बहुत ही तेज दर्द होना, माथेकी बीचकी जगह पर और नीचे दर्द, मेरुदण्ड की राहसे दर्द नीचे उतरा करता है और दोनों कन्धोंके बीचमें तेज़ दर्द मालूम होता है। माथेके पिछले भागसे दर्द आरम्भ होकर, समूचे माथे में फैल जाता है,

इसके साथ ही मिचली और जाड़ा मालूम होना; माथेकी त्वचा रूखी; रूसी; गोटियाँ।

आँख।—आँखसे दिखाई देनेमें गड़बड़ी, आँखके सामने विचित्र विचित्र रंग सब दिखाई देते हैं। आँखके सामने काले बिन्दु सब उड़ते फिरते हैं। रोशनी सहन नहीं होती, चीजें दो दिखाई देती हैं—अर्थात द्वित्वरोग; पलकोंका फड़कना, चक्षुगह्वरका और उसके ऊपरका स्नायविक दर्द; दाहिनी ओर यह दर्द अधिक रहता है; सेंकनेपर घटता है। छूनेपर बेतरह दर्द, दर्दके साथ आँखसे आँसू आना; पलकोंका खुजलाना।

कान।—श्रवणेन्द्रियके स्नायुसूत्रोंकी कमजोरी की वजहसे बहरापन, कानका स्नायविक दर्द, गर्म सेंक देनेपर घटना; कानके पिछले भागमें बेतरह जोरका स्नायविक दर्द; दाहिनी ओर अधिक; ठण्डी हवा और ठण्डे पानीसे मुँह-हाथ धोनेपर बढ़ना।

नाक।—सर्दी न रहनेपर भी घ्राण-शक्ति (गन्ध लेनेकी ताकत) में गड़बड़ी या किसी तरहकी भी गन्ध बिलकुल ही न आना, पर्याय-क्रमसे नाक बन्द और बहुत अधिक श्लेष्माका स्राव होना; बायीं नाककी खाल उधड़ जाती है और वह खुजलाती है। माथेकी सर्दी पर्याय-क्रमसे सूखी और पतली होती रहती है।

मुख-मण्डल।—स्नायु-शूल, बिजलीकी लहरकी तरह दर्द, रह रहकर दर्द, गर्म सेंक देनेपर दर्दका घटना, दाहिनी तरफ, तीसरे पहर दो बजनेके बाद, बिछावनपर, छूनेपर और दबानेपर तथा ठण्ढसे दर्दका बढ़ जाना ; दाहिनी ओरका स्नायु-शूल, चक्षु-गह्वरके नीचेवाली हड्डी तथा दाँततक और धीरे-धीरे समूचे दाहिने अंशमें यह दर्द फैल जाता है। मुँह नहीं खोल सकता ; सर्दीसे और छूनेपर बढ़ता है ; नहाने अथवा पानीमें खड़े रहनेपर बढ़ता है ; उत्तरी हवा सहन नहीं होती।

मुँहके भीतर।—मुँहका कोना सिकुड़ना और अकड़ना, निचला जबड़ा हिलानेपर सङ्कोचन अनुभव होता है और जबड़ा पीछेकी ओर हट जाता है, आक्षेप-मिला तोतलाना, जबड़े अटक जाते हैं।

जीभ।—साधारणतः जीभ साफ रहती है ; अतिसारके साथ सफेद लेप चढ़ी जीभ ; चमकीली लाल जीभ ; बायीं ओर दूषित जखम (कैन्सर), भोजनके समय ऐसा मालूम होता है, मानो जीभ जल गयी है।

दाँत।—छूना और ठण्ढी हवा लगना असह्य मालूम होता है ; ठण्ढे पानीसे मुँह नहीं धो सकता ; दतुवन या ब्रशका व्यवहार नहीं कर सकता ; क्षय हुए दाँत या मरे हुए दाँतमें तेज दर्द ; दाँतके जखमके साथ जीभका फूलना ;

मुँहको, गलेको और कण्ठको ग्रन्थिका फूलना ; दाँत निकलनेके समय बच्चोंको ज्वरके साथ अकड़न।

कण्ठ।—गलनलीमें अकड़न, पतली चीजें निगलनेके समय, अकड़न मिला हुआ सङ्कोचन और ऐसा मालूम होना कि कण्ठ रुक जायगा। कण्ठका दाहिना पार्श्व फूला हुआ, अकड़ा और दर्दसे भरा रहता है।

पाकाशय।—खट्टी चीजें सहन नहीं होतीं, काफी पीनेसे अरुचि, चीनी खानेकी बहुत अधिक इच्छा, दिन-रात हिचकी और बहुत ओकाई आना, अदम्य हिचकीकी वजहसे पेट अकड़ उठता है। खायी हुई चीज़ मुँहमें चली आती है ; जलन-भरी और बिना स्वादकी डकार, गरम पानी पीनेपर घटना। छातीमें जलन, पेटमें दर्द, जीभ साफ, सेंकने और सामनेकी ओर झुकनेपर घटना ; पाकाशयकी अकड़न और ऐंठन, समूची देहमें एक कड़ी डोरी बाँध देनेकी तरह दर्द ; पाकाशयके स्थानको छूनेपर दर्द ; ठण्डा पानी पीनेपर दर्दका बढ़ जाना, पेट फूलना और पाचनमें गड़बड़ी, मिचली और वमन ; वायुकी वजहसे पेटका फूलना और सङ्कोचनकी तरह दर्द।

उदर और मल-मूत्र।—अन्त्र-शूल (आँतोंमें—शूलका दर्द), वायुके बढ़ जानेके साथ दर्द, बाध्य होकर रोगीको झुक जाना पड़ता है। गरम सेंक देनेपर, मलने या दबानेपर दर्द घटता है और डकार आनेपर आराम मालूम होता

है। रुका हुआ वायु, पेट गड़गड़ाना और डकार। नये पैदा हुए बच्चे और बालक-बालिकाओंका वायुकी वजहसे पैदा हुआ पेटका दर्द; पेटका दर्द नाभिकी जगहसे चारों ओर फैल जाता है और उसके साथ ही पानीकी तरह दस्त आते हैं, चित्त होकर सो नहीं सकता, झुक पड़ता है। बहुत बेचैनी, पेटका कपड़ा ढीला कर देना पड़ता है, इधर-उधर टहलना पड़ता है; बार-बार अधोवायु निकलता है, पानीकी तरह दस्त, वमन और पैरकी पोटलीमें ऐंठन; मल बड़े जोरसे और बड़े वेगसे निकलता है; आमाशय; पेटमें ऐंठनकी तरह दर्द और पेशाब रुकना। बवासीरके मसेमें काटनेकी तरह और बिजलीकी लहरकी तरह दस्त; दर्दकी तेजीके कारण बेहोश हो पड़ता है; मल-द्वारमें तेज दर्द। हरेक बार पाखाना होनेके बाद मल-द्वारमें दर्द; बच्चोंकी कब्जियत, पाखाना होनेके समय तेज दर्दकी वजहसे चिल्लाकर रो पड़ना।

मूत्राशयका आक्षेप; आक्षेपिक पेशाबका रुकना; तीव्र-वेग, बच्चा बहुत-सा पेशाब करता है। स्नायविक उत्ते-जनाकी वजहसे शय्यामें पेशाब कर देना। मूत्रशलाका—(कैथिटरका) प्रयोग करनेके बाद मूत्राशयका स्नायु-शूल। पेशाबमें फास्फेटकी अधिकता या कम पड़ जाना। मूत्रा-श्मरी (मूत्र-पथरी); बहुत अधिक रति-क्रियाकी इच्छा।

स्त्री-जननेन्द्रिय।—ऋतु-शूल, स्राव आरम्भ होनेके पहले दर्द; यह दर्द दाहिनी ओर ही अधिक होता

है; रह-रहकर स्राव, गर्म सेंक देनेपर घटना। झिल्ली निकलनेवाला (membranous) बाधकका दर्द; डिम्बाशयमें शूलका दर्द; दाहिनी ओर अधिक डिम्बाशयका प्रदाह; योनिका बाहरी भाग फूला हुआ; योनिका आक्षेप; आगे बढ़कर महीना (ऋतु-स्राव) होना; काला, सूत-तन्तु-मिला; डोरीकी तरह स्राव। प्रसवका आक्षेपिक दर्द; पेरमें ऐंठन; ऐंठनकी तरह प्रसवका दर्द; प्रसवके लिये बहुत ही ज्यादा और तकलीफ देनेवाले ढङ्गसे काँखना पड़ता है। सूतिकाक्षेप रोगमें दूसरी-दूसरी उपयोगी दवाओंके साथ इसका पर्याय-क्रमसे प्रयोग किया जाता है।

श्वास-यंत्र और वक्ष।—पेट फूलनेके साथ ही हाँफना। दमा—श्वासनलीका आक्षेपिक सङ्कोचन, एकाएक तेज स्वरसे चिल्ला उठना, वक्षस्थलका सङ्कोचन; बहुत दिनोंकी स्नायविक खाँसी; सूखी आक्षेपिक खाँसीका आवेग और अधिकता; हूपिङ्ग खाँसी; रातके समय खाँसीका वेग बढ़ जाता है; सो नहीं सकता। वक्षकी तकलीफ, श्वास-कष्ट; कलेजेमें दर्द; स्नायविक अकड़न। इन उपसर्गोंके लिये गर्म पानीमें दवाका प्रयोग करनेपर ज्यादा फायदा होता है; आक्षेप-मिला स्नायविक हृद्-कम्पन (कलेजा काँपना)।

पीठ और हाथ-पैर।—ग्रीवा और कमरमें दर्द; मेरुदण्डके नीचेके स्थानमें दर्द और छूनेपर दर्द होना; पंजरेमें दर्द; दाहिना बाहु और कन्धेमें तीर बेधनेकी तरह

दर्द ; सन्धि-स्थानमें दर्द ; इच्छा न रहनेपर भी हाथका काँपना, कपकपीवाला पक्षाघात (paralysis agitans); रातके समय दोनों पैरोंका स्नायु-शूल और पेशियोंका आक्षेपिक सङ्कोचन; शय्यामें सोनेपर पैरमें ऐंठन होती है। पैरकी पोटलीमें अकड़न, साइटिक स्नायु-शूल ; चलनेकी शक्तिकी बीमारी ; दोनों पैरोंके तलवेमें बहुत दर्द ।

स्नायु ।—यह नमक स्नायुओंका पोषण और उसकी क्रियाको बढ़ा देता है। सारे शरीरकी दुर्बलता, सुस्ती, थकावट और बैठ नहीं सकता। बहुत अधिक शराब पीनेके बाद मदात्ययकी बीमारी ; अत्याचारकी वजहसे उत्पन्न हुई मूर्च्छा और मृगी-रोग ; अकड़न ; दाँती लग जाना और मुट्ठी बन्द हो जाना ; हिचकी ; ताण्डव रोग ; लेखक ; पियानो और बेहाला बजानेवाले और सितार बजानेवाले तथा किरानियोंकी कलाई और अंगुलीका अकड़ जाना ; धनुष्टङ्कार, दाँती लग जानेपर यह दवा मसूढ़ेमें घस देना चाहिये। ज्यादा परिश्रम करनेकी वजहसे अनिद्रा, तन्द्रालुता, आक्षेपिक जम्हाई, दुःस्वप्न और सर-दर्दकी वजहसे नींदमें गड़बड़ी ।

चर्म्म और तन्तु ।—फेफड़ेमें दर्द और जलन, दाढ़ी बनवाने बाद दाने और उद्भेद निकलना, दाद, सादी छाल निकला करती है। घुटने, कोहनी और एँड़ीमें मच्छड़ काटनेकी तरह उद्भेद ।

ज्वर ।—संध्याके ७ बजे, रातमें भोजनके बाद, शीत और कम्प, शीत मानो मेरुदण्डकी राहसे चढ़ा-उतरा करता है। सवेरे ८ बजे तेज जाड़ा मालूम होता है, पित्त ज्वर। सविराम ज्वर, पैरकी पोटलोमें ऐंठन, बहुत ज्यादा पसीना।

ह्रास-वृद्धि ।—सर्दीसे, ठण्डी हवासे, ठण्डा पानी व्यवहार करनेपर और छूनेपर बढ़ना। रगड़ने, दबाने, सामनेकी ओर शरीर झुकाने और गरम सेंक देनेपर घटना।

प्रयोग ।—अधिकांश स्थानोंमें ६x क्रमका ही व्यवहार होता है। गरम पानीमें गलाकर पिलानेसे ज्यादा फायदा होता है। जिन सब स्थानोंमें निम्न-शक्तिसे फायदा नहीं होता वहाँ ३०, २०० या और भी उच्च शक्तिसे आश्चर्य-जनक फायदा दिखाई पड़ता है।

कैलि-फास्फोरिकमके साथ तुलनीय।

नेट्रम-म्युरियेटिकम ।

(Natrum Muriaticum, Sodium Chloride)

साधारण नमक। तीनगुने ठण्डे पानीमें गला लिया जा सकता है। शोधित सुरासार (dilute alcohol) में नहीं गलता।

यह लवण शरीरके सभी तरल और कठिन अंशोंका उपादान है, इसका काम है, कोषाणुओंको तर रखना। इस-

लोगोंके खाये-पिये पदार्थों से जलीय अंशको लेकर कोषाणुओंको तर कर रखता है। इससे कोषाणु बढ़ते हैं और टुकड़े-टुकड़े होकर संख्यामें बढ़ा करते हैं।

अगर कोषाणुओंमें लवणका पैदा होना बन्द हो जाता है, तो यह जल कोषाणुओंके भीतरी रसके भीतर इकट्ठा होकर रक्तके जलीय अंशको बढ़ाता है। इस समय रोगीकी आकृति पानी-भरी और फूली दिखायी देती है; तन्द्रालु, सुस्त, आँखोंमें आँसू और मेरुदण्ड तथा हाथ-पैरोंमें शीतका भाव दिखाई देता है। इस समय उसकी नमकीन पदार्थ खानेकी लालसा बढ़ जाती है; पर ज्यादा परिमाणमें नमक खिलानेपर भी कोई फायदा नहीं होता; इसका कारण यह है, कि लवणके परमाणुओंका जबतक खूब सूक्ष्म-रूपसे विभाजन नहीं कर दिया जाता, तबतक लवणके परमाणु तन्तु और कोषाणु ग्रहण नहीं करते।

इसके विपरीत कोषाणुओंके अन्तर्वर्त्ती रसके भीतर लवणके परिमाणकी अधिकता होनेपर कण्ठनाली और जिह्वाके अनुशासक स्नायुके उपदाहकी वजहसे रोगीके मुँहका स्वाद हमेशा नमकीन बना रहता है और श्लैष्मिक झिल्ली तथा जखमसे खाल उधेड़नेवाला स्राव निकलता है, इस अवस्थामें सूक्ष्म मात्रामें नमक का प्रयोग करनेपर वे कोषाणु फिर उस क्षय हुए रसको सोख ले सकते हैं।

अश्रुनली, ग्रन्थि और लालास्रावी ग्रन्थिकी उपलचापर यदि इस लवणकी प्रक्रिया रुक जाती है तो इच्छा न रहनेपर

भी आँखसे आँसू और मुँहसे लार बहा करती है। अगर इस लवणकी क्रियामें ज्यादा गड़बड़ी आ जाती है तो पाकाशय में रक्ताम्बु (serum) का स्राव होकर पाचन-क्रियामें विकार पैदा हो जाता है। इसीलिये मुँहमें पानी भर आया करता है। उपत्वचाके नीचे अगर इस लवणके कण की कमी हो जाती है, तो उन सब स्थानोंमें जितनी चाहिये; उतनी नहीं रहती; अतएव; सफेद पानी भरे छालेकी तरहकी उपत्वचा निकला करती है; आँखके सफेद अंशमें भी ऐसा ही हुआ करता है।

शरीरमें इस लवणकी क्रियामें विकारकी वजहसे; बहुतसे स्थानोंमें रस-स्राव की कमी या अधिकता दिखाई देती है। जैसे पाकशयके श्लैष्मिक चरणकी वजहसे पानी की तरह या श्लेष्माकी तरह वमन अथवा बड़ी आँतमें श्लेष्माकी कमी की वजहसे कब्जियत का होना।

पुराने कण्ठमाला दोषकी वजहसे ग्रन्थियाँ, उदर और चर्म-सम्बन्धी बहुतसे रोगोंमें इसका प्रयोग किया जाता है। रक्त, लसिका, यकृत, प्लीहा और पाचन स्थानोंके श्लैष्मिक आवरणके ऊपर इसका प्रभाव दिखाई देता है। क्विनाइनके अधिक सेवनकी वजहसे बिगड़े हुए मलेरिया ज्वरकी तरह एक धातुविकार; पोषणकी कमी; दुबलापन; खूनकी कमी; रक्तमें जलकी मात्राकी अधिकता; रक्तमें सफेद कणोंकी अधिकता; हरितरोग (chlorosis); शीतांग (scorbutus), स्वच्छ पानीकी तरह, कर्कश और फेन भरा श्लेष्माका स्राव होना; जलभरे छाले फट जानेके बाद पतली पपड़ी जम जाती है।

नेट्रम-म्युरियेटिकमकी जीभ—साफ चमकीली, या दोनों तरहकी, बुलबुलेकी तरह फेनभरी लार लिपटी रहती है, अथवा; चौड़ी; सफेद; मोटी और लेप चढ़ी जीभ रहती है।

लम्बर्ग निवासी डाक्टर लियो रोजिनबुश (Leo Rosen-busche) ने इस लवणका द्रव पिचकारीकी सहायतासे त्वचाके नीचे प्रयोग कर रक्तसंचालनकी भीषण पतनावस्थामें बहुत लाभ होते देखा है, इस सम्बन्धमें उनकी बहुदर्शिताकी अभिज्ञता प्रकाशित हुई थी। नीचे उसका सार-मर्म दिया जाता है:—

१। एकाएक पतनावस्था (sudden collapse) इस नमकके सैंकड़े ६ भाग द्रवका (6% solution) पाँचसे आठ ड्राम परिमाण।

२। नयी तेज बीमारीमें, हृद्पिण्डकी पेशियोंका पक्षाघात होनेकी तैयारी; पहली मात्रामें ५ से ७ ड्राम परिमाण इसके बाद नित्य १ या २ ड्राम परिमाण।

३। उदर और आँतोंका नया प्रदाह; दस्त और कैके कारण बहुत कमजोरी; एक हजार भाग पानीमें ६ भाग लवण को गलाकर कुछ गर्मकर ७ से २० आउंस परिमाणमें प्रयोग करें।

४। फेफड़ा, पाकाशय या आँतमें रक्तस्राव, पहली मात्रा में पाँच ड्राम; इसके बाद नित्य डेढ़ ड्राम मात्रामें।

५। अजीर्ण-रोग और धातुदोषकी वजहसे हृत्पिण्डकी पतनावस्था ; कई दिनोंतक नित्य दो ड्राम।

विसूचिका रोगकी आधुनिक चिकित्सामें स्वाभाविक लवण द्रव (Normal saline solution) शिराकी राहसे बराबर प्रयोग हो रहा है। इससे प्रायः सर्वत्र ही फ़ायदा दिखाई देता है।

विशेष और निर्देशक लक्षण।

मन।—भविष्यके सम्बन्धमें एकदम आशा-रहित मालूम होता है, उत्साह-शून्य, सहानुभूति दिखलानेपर और भी निरुत्साह हो पड़ता है। कब्जियतके साथ चित्तकी उन्मत्तता ; शराबियोंका कम्प-प्रलाप या मदात्यय (delirium tremens) ; जवानी आनेके समय विमर्षता ; मस्तिष्ककी थकान ; उत्तेजना ; अत्यन्त हँसी-दिल्लगी ; नाच-गानेकी ओर आसक्ति ; क्रोध-प्रवणता ; कभी-कभी भयानक क्रोध आ जाता है।

मस्तक।—गर्दनकी पेशीकी कमजोरीकी वजहसे माथा सामनेकी ओर हिलता रहता है ; माथेमें भार मालूम होता है और आँखसे पानी गिरा करता है ; तन्द्रालुता, नींदसे आराम नहीं मिलता, कब्जके साथ सर-दर्द : सर-दर्दके साथ स्वच्छ श्लेष्मा या पानीकी कै ; "अध-कपाली" का सर-दर्द ; तकलीफसे बेहोश हो जाता है। सर-दर्द,—मानो कोई

हथौड़ीसे मार रहा है, सवेरेके समय ही अधिक होता है। विद्यालयकी बालिकाओंकी ऋतुके साथ सर-दर्द, प्रत्येक मास ऋतु-स्राव होनेके साथ सर-दर्द। सर्दी-गर्मी या लू लग जाना और उसकी वजहसे पैदा हुए उपसर्गोंकी यह श्रेष्ठ दवा है। गर्दनके पिछले भागकी ओर केशोंके किनारे-किनारे छोटी-छोटी फुन्सियाँ, ये फुन्सियाँ बहुत खुजलाती हैं और उनसे लसदार रस गिरता है। रूसी, सफेद छाल निकलती है, कभी-कभी मुँह, नाक और आँखसे पानी गिरता है, केश झड़ जाना।

आँख।—धुँधली दृष्टि, कनीनिकाके ऊपर छाले; सफेद बिन्दु, पढ़नेके समय अक्षर सब सट जाते हैं; ऐसा मालूम होता है, मानो जालके भीतरसे देख रहा है। शुक्ल-मण्डलका प्रदाह, सफेद श्लेष्माका निकलना, खाल उधेड़ देनेवाला आँसू, पलकोंका प्रदाह, पलक मोटी और लाल, खुजलाती और जलन होती है, खाल उधेड़नेवाला ऋतु-स्राव। आँखकी पेशियोंकी कमजोरीकी सबसे श्रेष्ठ दवा है। आँखमें पर्यायशील स्नायविक दर्द, आँसू बहना, आँखका सफेद अंश लाल। पलकोंका स्नायविक दर्द, सूर्योदयके साथ आरम्भ होता है और सूर्यास्तके साथ गायब होता है।

कान।—कर्ण-कुहरमें गम्भीर आवाज हुआ करती है, कर्ण-विवर फूला, इसीलिये बहरापन; कर्ण-कुहर और कण्ठ-कर्णी-नाली (eustachian tube) से स्राव; पीब-मिला स्राव; चबानेके समय कानमें खट-खट आवाज।

नाक।—पुरानी नाक और कण्ठकी सर्दी, सूँघने और स्वाद लेनेकी शक्तिका गायब हो जाना। सर्दीके साथ पानी-भरी फुन्सियाँ निकलना, दाने फटकर पानी निकलने बाद पतली पपड़ी जम जाती है। इन्फलुएंजा, सर्दी, साफ पतला स्राव या पर्यायक्रमसे सूखी सर्दी और पतला स्राव, किसी चीजकी गन्ध या स्वाद नहीं मिलता। सर्दी सवेरेके वक्त ही ज्यादा रहती है। सामनेकी ओर झुकने या खाँसने-पर रक्त-स्राव होता है, नाकका एक किनारा सुन्न हो जाता है, नाक लाल, दर्द-भरे दाने या छाले।

मुखमण्डल।—सफेद चेहरा, क्विनिन सेवनके बाद चेहरेका पर्याय-क्रमसे पैदा होनेवाला स्नायु-शूल और इसके साथ ही आँखसे आँसूका स्राव होना, चर्म देखनेमें तेलकी तरह मालूम होता है; प्रमेह-दूषित धातु, मूछोंके केश झड़ जाते हैं, इसके साथ ही बहुत खुजलाहट, ओठोंपर बोखारके दाने, ललाटपर पीव-भरे दाने, भोजन करनेके समय चेहरेपर बहुत अधिक पसीना होता है।

मुँहके भीतर।—चेहरेपर मोतीकी तरह दाने सब निकलते हैं, ओंठके कोनेमें खून बहनेवाला जखम हो जाता है, मुँहमें जखम और लार बहना, उप-जिह्वा लटकी (कण्ठ बढ़ना); कण्ठनालीमें दानेकी तरहके उद्भेद और बलगम भरा रहता है। **जीभ**—चिकनी, साफ, तर; बल-गम ढीला और दोनों किनारोंपर फेन-भरी लार लगी रहती है,

जीभकी नोकमें छाले, नक्शेकी तरह लेप-चढ़ी जीभ, सुन्न और अकड़ी हुई जीभ, ऐसा मालूम होता है, कि **जीभपर मानो केश लगे हुए हैं।** जीभ और मुँह तर रहनेपर भी सूखा रहनेकी तरह मालूम होना। नेट्रम-म्यूरका बच्चा देरसे बोलना सीखता है। दाँत निकलनेके समय बहुत लार बहती है, मसूढ़ेमें फोड़ा, टपक और बेधनेकी तरह दर्द, मसूढ़ेमें जखम, उससे सहजमें ही रक्त-स्राव, छूना सहन नहीं होता, असमयमें ही दाँत गिर जाते हैं।

गर्दन और कण्ठ।—गर्दन पतली, डिफ्थीरिया-रोगमें चेहरा सफेद और फूला हुआ, औंघाई, पानीकी तरह दस्त, लार बहना या पानीकी तरह वमन, डिफ्थीरियाके बाद कण्ठकी पक्षाघात-ग्रस्त अवस्था, भोजनकी सामग्री श्वासनलीमें चली जाती है, केवल पतली चीज निगल सकता है। कण्ठमें दर्द, तालुमूलपर सफेद बलगम लगा रहता है; गलेका पुराना दर्द, हमेशा ऐसा मालूम होता है, कि कण्ठमें ढेलेकी तरह एक पदार्थ है, बीड़ी, सिगरेट पीनेवालोंका दाने-भरा गलकोष-प्रदाह या कास्टिक लोशन लगाने बाद इस उपसर्गका पैदा हो जाना; पानीका स्राव होनेके साथ-ही-साथ गल-गण्ड रोग; तालुमूल, ग्रीवाकी ग्रन्थि, ओंठ और जबड़ेके नीचेकी ग्रन्थिका फूलना। कर्णमूल-ग्रन्थिका प्रदाह (mumps), लार बहना, बार-बार खाँसी और श्लेष्माका स्वाद नमकीन, उप-जिह्वा बड़ी, प्रदाहसे भरी, साँस निकलनेमें बदबू।

पाकाशय।—अजीर्ण, फेन-भरा या साफ पानीकी तरह वमन या लम्बी डोरीकी तरह लारका वमन अथवा पेटमें दर्द और लार बहना, पेट भारी मालूम होना और भरा-भरा-सा अनुभव होना, गलेतक पानी भर आता है, पर यह पानी खट्टा नहीं रहता। नमकीन और तीती चीजें खानेकी इच्छा, प्रबल प्यास, तेज भूख, खानेके बाद छातीमें जलन; मुँहका खट्टा स्वाद; धूम्रपानसे अरुचि; रोटी खानेसे अरुचि, कामला (नेबा) और इसके साथ ही तन्द्रा; उदर-प्रदेशमें चर्मके ऊपर लाल बिन्दुकी तरह उद्भेद।

उदर और मल-मूत्र।—आँतें आदिका रस-शून्य भाव, इसीलिये कब्जियत बनी रहना, मल इतना सूखा रहता है, कि मलद्वार फट जाता है और जलन तथा दर्द होता है; मल टूट-टूटकर निकलता है। फटा हुआ मल-द्वार, सुई गड़नेकी तरह यन्त्रणा; पानीकी तरह फेन-भरा पतला मल, पर्याय-क्रमसे कब्ज और अतिसार; उदरकी पेशी और यन्त्रोंकी कमजोरी; अनजानमें पतला पाखाना निकल जाना, समझ नहीं सकता कि वायु निकल रहा है या मल। बहुमूत्र—इसके साथ ही अजीर्णकी वजहसे मुँहमें पानी भर आना, शरीर बहुत दुबला होता जाता है; खाँसनेके साथ और चलनेके समय इच्छा न रहनेपर भी पेशाब हो जाना; स्कर्वी रोगके साथ खूनका पेशाब, पेशाबके बाद जलन और काटनेकी तरह दर्द; अनजानमें पेशाब निकल

जाना ; दुबले-पतले बालक-बालिकाओंको शय्यामें पेशाब हो जाना ।

पुं-जननेन्द्रिय ।—अण्डकोष और शुक्ररज्जुमें दर्द पैदा हो जाता है, सूजन और रस इकट्ठा होता है ; मूत्राशय मुख-शायी ग्रन्थिसे स्राव (prostatic fluid) ; प्रमेह, सूजाक—इसके स्रावमें जलन रहती है ; पुराना सूजाक ; साफ पानीकी तरह ; चिकना स्राव ; बहुत खुजली ; मूत्रनाली को दबानेपर दर्द होता है ; पेशाब हो जाने बाद काटनेकी तरह दर्द ; वीर्यस्खलन हो जाने बाद सर्दी मालूम होना और सुस्ती होना पर रमणकी इच्छा बढ़ जाती है, पुराने उपदंशमें, रस निकलना ; लिङ्गकी जगहके केश झड़ जाते हैं ; अण्डकोषका फूलना ; ध्वजभंग ।

स्त्री-जननेन्द्रिय ।—पेशाब हो जाने बाद योनिमें जलन और दर्द ; योनिस्थानके केश झड़ जाते हैं ; योनिमें खुजली, मासिक ऋतुस्रावके समय बहुत चिड़चिड़ापन, पानीकी तरह प्रदर ; बहुत ज्यादा रज स्राव होना ; चिकना और खाल उधेड़ देनेवाला प्रदरका स्राव ; ऋतु होनेके पहले अथवा दो ऋतुओंके बीचमें पानीकी तरह अधिक ऋतुस्राव ; ऋतुके पहले विषाद और चितमें उन्मत्तताका भाव पैदा हो जाना ; इसके अलावा ऋतुके समय और बाद सरमें दर्द ; योनिपथ बहुत सूखा ; योनि भ्रंश, वाध्य होकर बैठे रहना पड़ता है, जरायुकी गड़बड़ीकी वजहसे रोग होनेपर आराम

मालूम होता है। हरित रोग, त्वचाका रंग मैला हो जाता है और महीना देरसे होता हैं। सवेरे योनिमें और भीतरसे धक्का देनेकी तरह दर्द मालूम होता है। गर्भावस्थामें सवेरेके वक्त मिचली; फेनभरे और पतले बलगमकी कै होती है। प्रसवके बाद और स्तन पिलानेके समय योनिस्थानके केश झड़ जाते हैं।

वक्ष और श्वास-यंत्र।—हृत्पिण्डका काँपना और धड़कना, नाड़ीकी गति तेज और सविराम (रुक रुक कर) हो जाती है, बाईं करवट सोनेपर बढ़ना; रक्तकी अधिकता और पोषणकी कमी की वजहसे पैदा होनेवाली बीमारियोंमें, नाड़ीका स्पन्दन समूचे शरीरमें; खासकर पाकाशय प्रदेशमें अनुभवमें आता है। हृद्पिण्डका आयतन बढ़ जाता है; हमेशा सोया रहना चाहता है। हाथ पैर ठण्डे और सुन्न मालूम होते हैं। **श्वासनलीका** नया प्रदाह; सफेन फेनभरा पानीकी तरह श्लेष्मा निकलता है; पर कभी कभी ढीला श्लेष्मा भी निकलता है, जिसे निकालनेमें तकलीफ होती है। श्वासनली प्रदाह (ब्राङ्काटिस), वक्षके भीतर वक्षोस्थि के पीछे सुरसुरी होकर खाँसी आती है; खाँसीके साथ माथेमें तेज दर्द; इच्छा न रहनेपर भी पेशाब होजाना; पैरमें और अण्डकोषकी शिरामें दर्द; दमा; बहुत ज्यादा पतला बलगम निकलता है; पुराना श्वासनली प्रदाह, जाड़ेके दिनोंमें बढ़ना; खाँसीके साथ माथेमें तेज दर्द; गालतक आँसू बह

आता है; इच्छा न होनेपर भी पेशाब। फुसफुस प्रदाह (pneumonia) वक्षमें पतले श्लेष्माकी आवाज सुन पड़ती है; फिर भरे रसकी तरह श्लेष्मा; उसे निकालनेमें तकलीफ होती है। प्लुरिसि रोगमें रसक्षरण आरम्भ होनेपर इससे फायदा होता है; वक्षमें दर्द, स्वरभंग और श्वास कृच्छ्रता।

पीठ और हाथ पैर।—पीठमें दर्द; पर कड़ी चीजपर सोनेसे आराम मालूम होना; मेरुदण्ड और पैरमें स्पर्श अधिक अनुभव होना; हमेशाही कमजोरी और थकावट मालूम होना; पीठमें सर्दी मालूम होना; नखका घुसना; हाथकी अंगुलीमें छाला और जखम; गाँठोंका पुराना वात; बैठकर उठनेके समय कमरके नीचे दर्द, नितम्बमें दर्द।

सायटिका।—(गृध्रसी वात); मेरुदण्डके निचले भागमें दर्द, चलनेके समय सन्धि-स्थानोंमें खट-खट आवाज होती है, दोनों पैरकी अंगुलियोंमें फटा घाव, सन्धि-स्थानोंमें आमवात।

स्नायु।—मेरुदण्डमें दर्द, यहाँतक कि स्पर्श भी सहन नहीं होता। हिस्टिरियाकी वजहसे पैदा हुआ आक्षेप और कमजोरी, सवेरे कमजोरीका बढ़ना, ताण्डव-रोग; सहजमें ही थक जाना; पक्षाघात। मस्तिष्कमें आर्द्रता या तरीका बढ़ जाना और इसी वजहसे बहुत नींद आना। स्वाभाविक मात्रामें अगर नींद आती है, तो उसे शान्ति और आराम नहीं मालूम होता और सवेरे सोकर उठते ही थकावट और क्लान्ति

मालूम होने लगती है; निद्रितावस्थामें बार-बार चौंक उठता है, घरमें चोर घुस आनेके सपने देखता है, बहुत चेष्टा करनेपर कहीं नींद आती है।

ज्वर।—सविराम ज्वर, क्विनिनका अपव्यवहारके कारण पैदा हुआ दूषित ज्वर; तर, सीड़-भरी जगहमें या नवीन हल चलाया हुआ अथवा नयी मिट्टी डाली हुई जगहपर रहनेकी वजहसे ज्वर। सवेरेसे लेकर दोपहरतक जाड़ा मालूम होना, ज्वर दिनके १० बजे आता है, तेज ताप और प्यास और बहुत अधिक सर-दर्द रहता है; पसीनेमें खट्टी गन्ध आती है और बहुत कमजोरी मालूम होती है, ओठोंपर बोखारके छाले या दाने निकल आते हैं। टाइफायड (सान्निपात) तथा दूसरे-दूसरे अरिष्टोंके लक्षण, बेहोशकी तरह भाव, पानीकी तरह वमन।

चर्म।—पुराना चर्म-रोग, आमवात और घमौरीकी तरह दाने, एकजिमा, सूक्ष्म त्वचाका निकलना (रूसी निकलना) या ऊपर जल-भरे दाने निकलना, यदि किसी बीमारीके साथ दादकी तरह दाने निकल आयें और छाले पड़ जायें, कोहनी और घुटनेके गासेमें चर्म-रोग, साफ जल-भरे छाले, ऊपर पपड़ी जमना, पपड़ी और खाल निकल आती है और फिर उसी समय पैदा हो जाती है। नारंगा। किसी भी सन्धि-स्थानके गासेमें चमौंड़ेदार निकलना। कोड़े काटनेके बादके उपसर्ग, बहुत ज्यादा नमक खानेकी वजहसे

बीमारियाँ। भवें और कानके पीछे एकज़िमा ; तलहत्थीमें भसे निकलना ; सविराम ज्वरके साथ सञ्जके आकारवाले अर्बुद होना।

पुष्ट भोजन मिलनेपर भी रोगी दुबला ही होता जाता है ; जलोदर (उदरी) या बहुतसे स्थानोंका शोथ, जालकी तरह झिल्लियोंमें (areolar tissues) में जल-सञ्चय हो जानेकी वजहसे शोथ ; मैलेरिया और क्विनिनसे उत्पन्न धातु दोष ; लसिका बसा-स्रावी (sebaceous) ग्रन्थि-स्थानोंका पुराना शोथ।

नेट्रम-म्यूरियेटिकमके सभी क्षरण और स्राव ही साफ, लसदार या सिझाये हुए आरारूटकी तरहकी आकृतिके होते हैं।

ह्रास-वृद्धि।—पर्यायशीलता, सवेरेके समय ही बढ़ना, शीत ऋतुमें और समुद्रके किनारे रहनेपर रोगका बढ़ना ; पीठ और कमरका दर्द, कड़ी जगहमें सोनेपर घटना ; पेशाबके बाद जलन प्रभृति उपसर्ग ; नाइट्रेट आव सिलवरका द्रव (कास्टिक-लोशन) और क्विनिनके व्यवहारके बादके तथा उससे पैदा हुए उपसर्ग।

प्रयोग।—सुसलरने ६x शक्ति व्यवहारका उपदेश दिया है, पर इस नमककी ३० और २०० तथा इससे ऊँचा शक्तिसे बहुत ज्यादा फायदा होता है।

कीड़ा काटनेवाले स्थानमें इस लवणका द्रव लगानेसे तुरन्त फायदा होता है। सर्दीमें, नाकके भीतरके उपसर्ग और गलेके भीतरके उपसर्गोंमें इस द्रवका कुल्ला या "स्प्रे" के सहारे इसका व्यवहार होता है।

युवतियोंको मासिक ऋतु-स्रावके समयके सर-दर्दमें, इसके साथ पर्याय-क्रमसे कैल्केरिया-फास और फेरम-फास फायदा करता है।

कीड़ा काटनेकी पहली अवस्थामें फेरम-फास और कैलि-फासके प्रयोगसे जलन आदि दूर हो जानेपर, नेट्रम-म्यूरसे बादके सभी उपसर्ग आरोग्य हो जाया करते हैं।

नेट्रम-फास्फोरिकम।

(Natrum phosphoricum, Sodium phosphate, Sodii phosphas)

कार्बोनेट-आव-सोडा और आर्थोफास्फोरिक एसिडके संयोगसे यह लवण प्रस्तुत होता है। यह हड्डीके भस्मसे भी तैयार किया जाता है। दूनी मात्रामें गर्म पानीमें और छःगुने ठण्डे पानीमें गल जाता है। सुरासारमें नहीं गलता।

रक्त, पेशी, स्नायु, मस्तिष्क-कोषाणु और कोषाणुओंके भीतरी रसमें यह लवण रहता है। यह लवण—दुग्धाम्ल (lactic acid) को विघटितकर कार्बोनिक-एसिड और

पानीमें परिवर्त्तित कर देता है। इसके बाद इस लवणका प्रत्येक कण अपनी दूनी मात्रामें कार्बोनिक-एसिडको अपने साथ फेफड़ेमें ले जाता है। वहाँ श्वासके साथ आये हुए आक्सिजनसे वे अलग हो पड़ते हैं। कार्बोनिक-एसिड प्रश्वासके साथ शरीरसे निकल जाता है और रक्त-कणके लौह-परमाणु द्वारा अम्लजान खिंच जाता है।

शरीरमें अगर दुग्धाम्ल (lactic acid) बढ़ जानेके कारण कोई बीमारी हो जाये तो नेट्रम-फास फायदा करता है। पैरका वात, सन्धिवात, नया और पुराना हटनेवाला वात इत्यादि **अम्लसे दूषित धातु-प्रकृतिवाले रोगमें यह फायदा करता है।** नेट्रम-फासमें नमकके परमाणु कम हो जानेपर, दुग्धाम्ल विघटित न होकर, शरीरमें सञ्चित होते रहनेकी वजहसे वात लक्षणवाले नाना प्रकारके उपसर्ग पैदा हो जाते हैं। ऐसे रोगोंमें नेट्रम-फासकी सूक्ष्म मात्रा प्रयोग करनेकी वजहसे शरीरकी अम्लकी अधिकताकी अवस्था दूर होकर सभी वात-लक्षण हट जाते हैं।

इसके अलावा, इयुरिक-एसिड नामक तन्तु-ध्वंससे बचा हुआ पदार्थ, यह लवण रहनेके कारण तथा रक्तके स्वाभाविक उत्तापकी सहायतासे, रक्तके भीतर द्रवीभूत अवस्थामें बहा करता है। पर अगर नेट्रम-फास लवण घट जाता है, तो यह मूत्राम्ल (uric acid) शरीरके क्षारके साथ मिलकर न गलनेवाले "युरेट आव सोडा" के रूपमें परिणत हो जाता है और यह सन्धि-स्थानोंमें सञ्चित होकर सन्धिवात और

नया व्यापक वातज-प्रदाह पैदा कर देता है। इसीलिये वात रोगाधिकारमें रोगीके पेशाबके साथ यूरिक-एसिडका निकलना घट जाता है।

जो मनुष्य घी आदि मेदवाले पदार्थ पचा नहीं सकते या उन पदार्थोंके खानेसे अम्लकी अधिकता और अजीर्णकी वृद्धि हो जाती है, उनके लिये नेट्रम-फास बहुत ही उपयोगी है।

ज्यादा दूध पीने या चीनी खानेकी वजहसे बच्चोंका सर-दर्द, अम्लकी अधिकतासे पैदा हुए रोग, अस्थि, ग्रन्थि, फुस-फुस और उदर-सम्बन्धी रोग, जीभपर पतला तर लेप, तालुमें पीले रङ्गका दूधकी तरह क्लेद, खट्टी डकार आना, खट्टा वमन, हरे रङ्गका उदरामय, दर्द, अकड़न, ज्वरके साथ अम्लकी अधिकताके लक्षणमें इसके व्यवहारसे आशासे अधिक फायदा दिखाई देता है।

विशेष और निर्देशक लक्षण।

मन।—दुश्चिन्ता और आशङ्का, स्थूल बुद्धि और ऊँची अभिलाषासे रहित; रातके समय नींद खुलनेपर, घरकी चीजोंको मनुष्य समझ लेता है; थोड़ेमें ही घबड़ा उठता है; जरा-सेमें ही क्रोधित हो जाता है और बहुत सामान्य कारणसे ही चिढ़ उठता है।

मस्तक।—माथेके बीचके स्थानमें दर्द, खासकर सवेरे नींद खुलनेके बाद, इसके साथ ही तालुमें दूधकी तरह क्लेद तथा तर और पीली आभा लिये जीभ रहती है। बहुत

भयानक सर-दर्द, ऐसा मालूम होता है, मानो माथा दो टुकड़े हो जायगा। मन्दाग्निके साथ सरमें चक्कर आनेकी बीमारीमें सर-दर्दके साथ मुँहमें खट्टा फेन-भरा पानी भर आता है।

आँख।—अभिष्यन्द अर्थात आँख उठनेकी बीमारी, शुक्ल-मण्डलका प्रदाह, पीली आभा लिये पीबका स्राव, सवेरे आँखकी पलकें सट जाती हैं; जलन-भरा आँसूका स्राव होता है, बालक-बालिकाओंको क्रिमिकी वजहसे डेरी दृष्टि; गण्डमाला धातुकी वजहसे आँखकी बीमारी; ऐसा मालूम होता है, कि आँखके सामने आगकी चिनगारियाँ सब उड़ रही हैं, धुँधली दृष्टि, मानो एक जालके भीतरसे देख रहा है।

कान।—कानमें दर्द, बाहरी भाग अकड़ा रहता है, जलन और खुजली होती है। अजीर्ण रोग और अम्लकी अधिकताके साथ एक तरफका कान लाल; गरम और बार-बार खुजलाया करता है।

नाक।—नाक खोंटा करता है, इसके साथ ही अम्ल-रोग और क्रिमि; नाक खुजलाती है; हमेशा ही एक तरहकी बदबू आया करती है।

मुख-मण्डल।—अम्लकी अधिकताके साथ चेहरा लाल हो जाता है और धब्बे पड़ते हैं; नाक और मुख-गह्वरके चारों ओर सफेद दाग; स्नायु-शूल। तीर या सुई

गड़नेकी तरह दर्द ; दाहिनी ओरके निचले जबड़ेमें दर्द, सफेद या नीली आभा लिये चेहरा।

मुँहके भीतर।—तालुमें, खासकर तालुके पिछले भागमें गाढ़ा पीली आभा लिये क्लेद ; मुँहका स्वाद हमेशा खट्टा रहता है, ताम्बेकी तरह स्वाद। **जीभके** पिछले भागमें पीले रङ्गका गाढ़ा लेप, जीभ तर ; छाले ; ऐसा मालूम होता है, कि जीभकी नोकमें केश अड़ा हुआ है ; बोली जकड़ी हुई ; नींदमें बच्चोंका **दाँत कड़कड़ाना।**

कण्ठ।—तर, पीली आभा लिये लेप ; उपजिह्वा, तालुमूल और तालु-स्थानमें पीले रङ्गके लेपके साथ कण्ठका सभी प्रदाह ; इस उपसर्गके साथ अकसर अम्ल और अजीर्णकी बीमारी लगी रहती है। ऐसा मालूम होता है, मानो गलेमें हमेशा एक ढेला अड़ा हुआ है। तरल पदार्थ निगलनेके समय बढ़ जाता है ; नाकके पिछले छेदमें गाढ़ा पीली आभा लिये श्लेष्मा निकलता है, रातमें बढ़ना।

पाकाशय।—दुग्धाम्लकी अधिकताकी वजहसे अम्ल-रोग और खट्टी कै ; काफीके चूरकी तरह पदार्थका वमन ; खट्टी कै ; भूख न लगना ; मुँहमें ठण्डा पानी भर आना ; पेट फूलना और खट्टी डकार ; बच्चोंमें अम्लकी अधिकताके कारण उदर-शूल ; हरे रङ्गका और खट्टी गन्ध मिला मल ; छानाकी तरह वमन। क्रिमिके कारण पेटमें दर्द ; छातीके

अग्रखण्डमें दर्द, पेट हमेशा ही खाली मालूम होना, पित्त-विकारकी वजहसे पोषणकी कमी।

उदर और मल।—कब्जियतकी प्रकृतिवाले बच्चोंको कभी-कभी पतले दस्त आना; दस्तमें खट्टी गन्ध, उसका रङ्ग हरा; गोंदकी तरह श्लेष्मा-मिला, छानेकी तरह मल; बार-बार सामान्य मल; दाहिनी ओरके पुट्ठेमें दर्द; आँतोंमें लम्बी लम्बी क्रिमि, इसके साथ ही नींदमें बेचैनी, नाक खोंटना, पेटमें दर्द, तिर्यक दृष्टि (डेरा देखना); कामला रोग, मलद्वारमें खाल उधड़ जानेकी तरह दर्द और खुजली।

मूत्र-यन्त्र।—यकृतकी गड़बड़ी या दोषकी वजहसे मधुमेह (diabetes); हमेशा ही पेशाबका वेग, पेशाबकी धार बीच-बीचमें रुक जाती है, खूब काँखना पड़ता है; बच्चोंकी अम्लकी अधिकताके साथ शय्यामें पेशाब; वात-रोगमें पेशाबका रङ्ग घोर लाल रहता है। मूत्राशयकी कमजोरी और बार-बार पेशाब लगना।

पुं-जननेन्द्रिय।—स्वप्न देखे बिना ही वीर्य-स्खलन हो जाना, वीर्य पतला, पानीकी तरह; रमणकी इच्छाका बिलकुल ही न रहना या रमणकी इच्छाका बढ़ जाना और लिङ्गमें कड़ापन; अण्डकोष और शुक्रनलीमें खींचन मालूम होना।

स्त्री-जननेन्द्रिय।—नियमित समयके पहले ही फीके रङ्गका मासिक ऋतु-स्राव होना, तीसरे पहर आँखोंमें

दर्दके साथ सर-दर्द आरम्भ हो जाता है; ऋतुके बाद बढ़ जाता है, ऐसा मालूम होता है, कि जंघाकी सौत्रिय-पेशी छोटी हो गयी है। जरायु-भ्रंश, पाखाना होने बाद बहुत कमजोरी; वातका दर्द, बन्ध्यात्व (बाँझपन) के साथ योनिसे खट्टी गन्धका स्राव; जरायुसे खट्टी गन्ध मिला स्राव। प्रदर, गाढ़े दूधकी तरह या मधुकी तरह अथवा पानीकी तरह और खट्टा स्राव। ऋतुके पहले कामोच्छ्वास और नींद न आना, गर्भावस्थामें मिचली और खट्टी कै, सवेरे बढ़ना।

वक्ष और श्वास-यंत्र।—हृत्पिण्डके पास कम्पन, पैरके अंगूठेका या अन्यान्य अङ्गोंका वातका दर्द दबकर हृत्-पिण्डके मूलदेशमें चला आता है। हृद्-कम्पन, शरीरके कितने ही स्थानोंमें नाड़ीका स्पन्दन अनुभवमें आता है। ऐसा मालूम होता है, मानो धमनीके भीतर एक गोली लुढ़क रही है। जवानीमें ही यक्ष्मा होनेका उपक्रम; ठण्डी साँस लेनेका जन्मार्जित और वंशानुक्रमिक अभ्यास, खासकर ऋतु-स्रावके समय। यक्ष्मा-रोग; पंजरास्थि-मध्यस्थ पेशीमें दर्द, वक्षोस्थिके निचले अंशमें दर्द; छातीमें दर्द; दबाने या गहरी साँस लेनेपर बढ़ना।

स्नायु।—आँतोंमें कृमि रहनेकी वजहसे स्नायविक उत्तेजना, वक्र-दृष्टि, मुख-मण्डलकी पेशीका फड़कना; थकन मालूम होना; पेटमें खालीपन मालूम होना; गर्दन हिलाने-

पर खट-खट शब्द ; कम्पन ; बेचैन नींद ; सहजमें ही नींद खुल जाती है। रति-सम्बन्धी सपने ; स्वप्न-दोष ।

पीठ और हाथ-पैर ।—ग्रीवा-ग्रन्थिका फूलना ; घेघा (गलगण्ड), पीठ, हाथ, पैरमें ताकत नहीं मालूम होना ; चलनेके समय पैरमें ताकत नहीं मिलती , चलनेके समय ढुलक पड़ता है। घुटना, पैरकी गांठ, एँड़ी, पैरका तलवा, सामनेकी हड्डी, सबमें ही दर्द ; घुटना हिलानेसे ही खट-खट आवाज होती है। दोनों बाहु मानो थके ; बाहुके पिछले भागमें प्रसारक-पेशीकी अकड़न ; कलाईमें दर्द ; लिखनेके समय हाथमें ऐंठन ; अंगुलीकी सन्धियोंमें वातका दर्द , बीच-बीचमें हृदयमें स्थानान्तरित हो जाता है।

ज्वर ।—सविराम ज्वर और उसके साथ ही खट्टी कै ; अत्यन्त खट्टी गन्ध-मिला पसीना ; दोनों पैरके तलवे दिनभर बरफकी तरह ठण्डे रहते हैं, पर रातके समय जलन होती है ; रोज़ तीसरे पहर उत्तापका उच्छ्वास और सर-दर्द।

चर्म ।—सहजमें ही खाल उधड़ जाती हैं। अम्ल-रोगके साथ एकजिमा ; रस गिरता है, रस गाढ़ा, शहदकी तरह रङ्गका ; चर्मोद्भेद ; लाल आभा, उसमें पीली आभा लिये पपड़ी जमती है ; आम-वात ; सारे शरीरमें कीड़े काटनेकी तरह खुजली ।

अस्थि-रोगमें यह लवण फास्फेट आफ लाइमके सञ्चयमें सहायता करता है। लसिका-ग्रन्थिकी सूजनमें ग्रन्थि कड़ी

होनेके पहले प्रयोग करना चाहिये। बालक-बालिकाओंकी सुखण्डीकी बीमारीमें—(rickets), कण्ठमाला ; ग्रन्थियोंके ऊपर इस दवाकी विशेष क्रिया होनेकी वजहसे दूषित पदार्थ सब गल जाते हैं। रक्तमें श्वेत-कणोंका ज्यादा हो जाना।

ह्रास-वृद्धि।—रज-सम्बन्धी उपसर्ग तीसरे पहर और संध्यामें बढ़ जाते हैं; कितना ही दर्द बादलकी गरज और वज्रपातसे बढ़ जाता है।

प्रयोग।—६x का ही साधारणत: प्रयोग किया जाता है; परन्तु ३० और उससे भी उच्चतर शक्तिसे भी आश्चर्य-जनक फायदा दिखाई देता है। क्रिमिकी चिकित्साके लिये ६x द्रव पिचकारी द्वारा मल-द्वारमें प्रयोग किया जाता है।

शिशु-चिकित्सामें, वात-रोगाधिकारमें और अम्लके कारण उत्पन्न हुई सभी बीमारियोंमें नेट्रम-फास्फोरिकमका स्मरण रखना चाहिये।

नेट्रम-सल्फ्युरिकम ।

(Natrum-Sulphuricum, Sodium Salphate, Glauber's Salt)

समुद्रके पानीमें, झरनेके नमकीन पानीमें, रूस देशकी नमककी झीलमें यह बहुत ज्यादा प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त खानेके साधारण नमकके साथ सल्फ्युरिक-एसिड मिलाकर भी यह तैयार होता है। यह ३३ डिगरी सेण्टि-मेटरकी गरमीवाले पानीमें गल जाता है।

नेट्रम-फासके साथ मिलकर लैक्टिक-एसिड (दुग्धाम्ल) विघटित होकर, जो जरूरतसे ज्यादा पानी उत्पन्न हो जाता है तथा शोथ-रोगका पानी इत्यादि नेट्रम-सल्फ्यूरिकमसे निकल जाता है। इस लवण-परमाणुकी क्रियामें गड़बड़ी होनेपर पानी निकलना रुक जाता है।

इसकी क्रिया नेट्रम मूरियेटिकमके ठीक विपरीत होती है। ये दोनों ही लवण पानीको आकर्षण तो करते हैं, पर उनका उद्देश्य और परिणाम अलग-अलग ही होता है। नेट्रम-मूर पानीको खींचकर उसे शरीर-यन्त्रके काममें ही लगा देता है; परन्तु नेट्रम-सल्फ पानीको खींचकर शरीरके बाहर निकाल देता है।

इन दोनों लवणोंमें और भी एक प्रभेद है, नेट्रम-मूर जैव-कोषोंको विभक्तकर उनकी संख्या बढ़ा देता है, पर नेट्रम-

सल्फ जीर्ण श्वेत-कणिकाओंसे पानी खींचकर उन्हें विघटित कर देता है। **नेट्रम-सल्फ** उपत्वक और स्नायु-कोषोंके उपदाह (irritation) उत्पन्न कर दिया करता है। यह नीचे लिखी क्रियावलीसे प्रकट होता है:—

मूत्रवाही नलीकी राहकी झिल्लीमें रहनेवाले कोषोंपर यह प्रभाव पहुँचाकर जैव-पदार्थ-पूर्ण निष्प्रयोजन जलीय अंशको मसानेकी राहपर भेज देता है और वहाँसे वह पेशाबके रूपमें मूत्राशयको पार करता हुआ निकल जाता है।

पित्त-नली, क्लोम-ग्रन्थि (pancreas) और आँतोंकी उपत्वचाके कोषोंपर अपना प्रभाव पहुँचाकर, इन सब यन्त्रोंके स्वाभाविक रस निकलनेमें सहायता पहुँचाता है। इन सब स्थानोंके स्नायुओंको भी उत्तेजित कर देता है।

मूत्राशयके अनुभूति उत्पन्न करनेवाले स्नायुके ऊपर नेट्रम-सल्फका प्रभाव अगर किसी तरह नहीं होता तो चेतना-स्थानपर पेशाब होनेकी अनुभूति नहीं पैदा होती ; इसीलिये अनजानमें पेशाब होता है। प्रक्षेपक-पेशीके स्नायुमें अगर इस लवणका प्रभाव घट जाता है, तो पेशाब होना रुक जाता है।

पित्त-कोषके स्नायुमें यदि इस लवणका प्रभाव बन्द हो जाता है, तो पित्तका निकलना या तो बढ़ जाता है या घट जाता है।

वृहदन्त्रके प्रक्षेपक स्नायुमें यदि इस लवणका क्षय हो जाता है तो कब्जियत और आध्मानकी वजहसे शूलका दर्द हुआ करता है।

नेट्रम-सल्फ परमाणुकी क्रियाकी गड़बड़ीकी वजहसे, कोषाणु-क्षेत्रका भीतरी वह पानी जो जरूरतसे ज्यादा इकट्ठा हो जाता है, ठीक-ठाक नहीं निकलता; इसीलिये रक्त-प्रवाहका जलीय अंश बढ़ जाता है। यह रोग जिन रोगियोंको रहता है, उनकी बीमारी बरसातमें, जलाशयके पास रहनेपर, तर, सीड़-भरे घरमें, पानीमें खड़े होकर काम करनेपर बढ़ जाती हैं; सूखी पारि-पार्श्विक अवस्थामें वह अच्छी रहती है।

सविराम और पैत्तिक ज्वर, इन्फ्लुएंजा, पित्त-वमन, पैत्तिक उदरामय, शोथ, विसर्पसे पैदा हुआ शोथ, फोड़े-फुन्सियाँ, छाले-भरे त्वचापरके उद्भेद, पीले रङ्गका रस-स्रावी चर्म-रोग, सूजाक-दोषके कारण मसे और चर्मका बढ़ जाना, पीली आभा लिये हरे रङ्गका अथवा हरे रङ्गकी श्लेष्मा-स्रावी (हरा बलगम निकलनेवाली) सर्दी इत्यादि नाना प्रकारके लक्षण, पित्त-निवारक यन्त्रमें इस नमककी क्रिया गड़बड़ी हो जानेके कारण और रक्त-भाण्डारमें जलांशकी अधिकताकी वजहसे पैदा हो जाते हैं।

Hydrogenoid Constitution अर्थात—श्लेष्मा-धातु-वालेके शरीरमें और प्रमेह विषसे दूषित धातुवालेके लिये नेट्रम-सल्फकी विशेष क्रिया दिखाई देती है।

विशेष और निर्देशक लक्षण।

मन।—दुर्विनीत और क्रोधी, आत्महत्या करनेकी प्रवृत्ति, बड़े कष्टसे अपनेको रोक रखता है; पित्त-प्रकोपकी

वजहसे असहिष्णुता ; सवेरे बढ़ना ; विषाद प्रकट करनेवाले सुरकी आवाज, सुननेपर चित्तका विकार बढ़ जाता है ; निराशा ; गिरने अथवा माथेमें किसी तरहकी चोट लगकर मानसिक विकार पैदा हो जाता है।

मस्तक।—भयानक टपकका दर्द, ब्रह्मरन्ध्रकी जगहपर तकलीफकी अधिकता ; पाचन-विकारके साथ सरमें चक्कर आना ; पित्तकी अधिकता ; जीभपर पित्तका मैल या मुँहका स्वाद तीता ; माथेके पिछले भागमें दर्द ; गिरने अथवा किसी दूसरे कारणसे माथेमें चोट लगनेके बादके उपसर्ग और इसी वजहसे पैदा हुआ मानसिक रोग ; ब्रह्मरंध्रके स्थानपर जलन ; ऐसा मालूम होता है, मानो मस्तिष्क शिथिल हो गया है ; माथेकी त्वचामें स्पर्श सहन नहीं होता ; कंघी करनेके समय दर्द मालूम होता है।

आँख।—सफेद अंश—श्वेत-मण्डल पीली आभा लिये ; छालेकी तरह गुटिकाएँ ; आँख उठनेकी पुरानी बीमारी ; पलकोंके नीचे बहुतसे दाने निकलते हैं, हरे रङ्गका पीव निकलता है ; भयानक रोशनीका सहन न होना। सवेरे पलकें सट जाती हैं, कनीनिकापर तिलकी तरह दाग पड़ना।

कान।—कर्ण-शूल, दर्दके समय ऐसा मालूम होता है, मानो भीतरसे कोई पदार्थ धक्का देकर बाहर निकला चला आता है। बरसातके दिनोंमें बढ़ना ; कानमें बिजलीकी

लहर लगनेकी तरह झटका देने जैसा दर्द ; कानमें घण्टा बजनेकी तरह आवाज।

नाक।—ऋतुके समय नाकसे रक्त गिरना ; उपदंशकी वजहसे पीनस रोग, आकाशमें बादल रहनेपर रोगका बढ़ना ; नाक बन्द रहना ; नाकके भीतर सूखापन और जलन ; नाककी दीवारें बहुत खुजलाया करती हैं ; श्लेष्मा, पिछले तालुसे नमकीन श्लेष्मा निकालकर फेंकना पड़ता है। पीवका स्राव, कुछ देरतक रोशनीमें रहनेपर यह पीलापन हरा हो जाता है।

मुखमण्डल।—चेहरा उतरा हुआ या पित्तकी अधिकताकी वजहसे पीला रङ्ग ; चेहरेपर व्रण और छाले ; कनपटीके पास दर्द।

मुँहके भीतर।—मुँहका स्वाद तीता, हमेशा थूक भर आता है, सफेद गाढ़ा लसदार ऋतु स्राव ; गलनली और पाकाशयसे जोरसे निकालना पड़ता है। मुँहके भीतर जलन, दोनों ओंठ और मुँहको घेरकर बहुतसे छाले निकलते हैं ; तालुदेशमें दर्द।

जीभ।—गदली, भूरी आभा लिये हरे रङ्गका मैल चढ़ी जीभ ; लसदार लेप चढ़ी जीभ ; जीभमें दर्द ; ठण्ढी चीज़ खानेपर आराम मालूम होता है। जीभ लाल, जीभकी नोकमें जलन-भरे छाले।

दाँत।—दाँतमें दर्द ; धूम्रपान और ठण्डी हवामें घटना, मुँहके भीतर ठण्डा पानी रखनेपर घटना। मसूढ़ेमें जलन ; मसूढ़ेपर छाले।

कण्ठ।—डिफ्थीरिया रोगमें जब बीच-बीचमें हरे रङ्गका वमन होता है, उस समय अन्यान्य दवाओंके साथ ऐसे लवणकी जरूरत पड़ती है। गलनलीका जखम, कण्ठसे बहुत ज्यादा सफेद गाढ़ा लसदार बलगम निकला करता है।

पाकाशय।—फूला, भार मालूम होता है, हमेशा ही मिचली बनी रहती है। तीसरे पहर प्यास अधिक हो जाती है ; तीती और खट्टी पित्तकी कै होती है ; हरे रङ्गके नमकीन स्वादके पानीकी कै ; इस तरहके वमनके साथ पित्त-शूल और काला मल ; बहुत क्रोध या विरक्तिके बाद कामला रोग हो जाना। सीसक शूल, अर्थात जो सीसेकी धातुको लेकर काम किया करते हैं, उनका इस धातुकी विष-क्रियाके कारण शूलका दर्द। छातीमें जलन, मुँहमें खट्टा पानी भर आना ; आध्मान। सबेरे भोजनके पहले खाली पेट रहनेके समय स्थूलान्त्रके गांसेके पास (sigmoid flexure) आध्मानकी वजहसे शूलका दर्द। यकृतके पास दर्द और काटनेकी तरह दर्द ; यकृतकी रक्तकी अधिकता ; बायीं ओर सो नहीं सकता। बायीं कोखमें दर्द, इसके साथ ही खाँसी और पीव-युक्त श्लेष्मा-क्षरण।

निम्नोदर और मल-मूत्र।—कमर में कसकर कपड़ा नहीं सह सकता; पित्त-ज्वरके साथ पेट फूलना; आध्मान-शूल; दाहिनी ओरके पुट्ठेके पास आरम्भ होकर समूचे पेटमें फैल जाता है। तलपेटमें उत्ताप और हरे रङ्गका पतला दस्त; वृद्धा रमणियोंका वंशानुक्रमिक अतिसार; बहुत अधिक पढ़ने या मानसिक परिश्रमकी वजहसे यकृतका उपदाह; छूनेपर, चलनेपर, धक्का लगनेपर दर्द मालूम होना और सुई गड़नेकी तरह तेज यन्त्रणा। **एपेण्डिसाइटिस**—सवेरे पतले दस्त, बरसातमें बढ़ जाता है। मलद्वार और दोनों उरुके बीचके स्थानमें मसे; प्रमेह धातु-दोष। **पेशाब**—बहुत ज्यादा पित्त निकलना; बार-बार बहुत ज्यादा पेशाब, बहुमूत्र; **डायबिटिस रोगकी प्रधान दवा।** पुराना मसानेका प्रदाह; मूत्रनलीसे पीली आभा लिये हरे रङ्गका स्राव; पेशाब होनेके समय जलन; वात-रोगीके पेशाबमें ईंटके चूरकी तरह पदार्थ; पेशाबमें चूनेकी तरह तली जमती है। पथरी-रोग; मुत्रशायी ग्रन्थि बढ़ी हुई, पेशाबमें पीव और श्लेष्मा।

पुं-जननेन्द्रिय।—सूजाक, नया और पुराना; धातुगत प्रमेह-दोष; लिङ्गकी अग्र-त्वचा और अण्डकोषकी सूजन; छिपा हुआ सूजाक; कोमल मांसांकुर सबसे हरे रङ्गका स्राव; उपदंशके-दोष; लिङ्गमें खुजली।

स्त्री-जननेन्द्रिय।—योनिमें प्रदाह, सूजन और रस-भरी गुटिकाएँ ; बहुत ज्यादा रस-स्राव ; खाल उधेड़नेवाला ; कब्जियत और उदर-शूल और सवेरेके समय अतिसार और शीत मालूम होना ; खाल उधेड़नेवाला प्रदरका स्राव, योनिप्रदाहित। गर्भिणियोंका सवेरेके समयका वमन, उसका स्वाद तीता ; पेरका फूलना और शिराका प्रदाह। भगोष्ठोंमें दादकी तरह उद्भेद।

श्वासयंत्र और वक्ष।—दमा रोगकी यह श्रेष्ठ दवा है। तर हवामें और बरसातमें दमा बढ़ जाता है। स्वर-भङ्ग ; छातीमें घड़घड़ आवाज होती है, ढीला श्लेष्मा निकलना ; ब्राङ्काइटिस रोगके बाद दमा। कलेजेमें दर्द ; दबानेपर आराम मालूम होना। खाँसनेके समय रोगी दोनों हाथोंसे छाती दबा रखता है ; गाढ़ा, डोरीकी तरह, हरे रङ्गका पीवकी तरह श्लेष्मा निकलना। बायें वक्षमें तीर बेधनेकी तरह यन्त्रणा ; तर हवामें श्वास-कष्ट ; श्वासनलीकी सर्दी, सवेरे खाँसी बढ़ जाया करती है। हृत्पिण्डकी जगहपर दबाव और बेचैनी मालूम होना, आराम मिलनेके लिये दौड़कर खुली हवामें चले जाना पड़ता है।

पीठ और हाथ-पैर।—नितम्ब और मेरुदण्डके नीचेके स्थानमें कुचलनेकी तरह दर्द, कशेरुका-घटित झिल्ली-प्रदाह (spinal meningitis), गर्दन पीछेकी ओर खिंच जाती है, पीठमें अकड़न, इस अवस्थाकी नेट्रम-सल्फ एक

बहुत ही श्रेष्ठ दवा है। कांक-विडाली, बगलकी ग्रन्थियाँ फूली और पीव-भरी। अंगुल-हाड़ा; बायीं ओरके चूतड़में सुई गड़नेकी तरह यन्त्रणा; दोनों हाथोंका काँपना; थका हुआ भाव, पेरका फूलना; पैरकी अंगुलीमें खुजली; नखका कोना मांसके भीतर घुस जाना; नखकी जड़के चारों ओर प्रदाह हो जाता है और पीव भर जाता है। नखके भीतर जखम हो जानेकी तरह दर्द और चिलक मार उठना। सायटिका, बैठे-बैठे उठनेपर या शय्यामें करवट बदलनेपर दर्द बढ़ जाता है; किसी भी अवस्थामें आराम नहीं मालूम होता, नितम्बसे लेकर घुटनेतक दर्द। पाकाशयकी लक्षणा-वलीके साथ वात-रोग; सन्धि-स्थानके हिलते ही खट-खट आवाज होती है। दोनों पैरोंका सन्धि-वात, नया और पुराना वात; पैरके तलवेसे लेकर घुटनेतक जलन। मेरु-मज्जाके जखमकी वजहसे चलनेमें पैरका लड़खड़ाना (loco-motor ataxia) या गति-शक्ति-राहित्य, मतवालोंकी तरह चलनेका ढङ्ग।

स्नायु।—सुस्ती और थकावट मालूम होती है; घुटनोंमें शक्ति नहीं रहती; सारे शरीरमें कम्पन; लिखनेके समय हाथ काँपते हैं। निद्रित अवस्थामें हाथ और पैरकी पेशियोंका फड़कना; कम्पके साथ ताण्डव-रोग; तीसरे पहर और किताब पढ़नेके समय तन्द्रा, नींद आने लगना; गहरे और दुश्चिन्तासे भरे सपने, नींद खुलनेपर दमाका दौरा हो जाना; प्रायः प्रत्येक रातमें सपने देखता है। सोनेके लक्षण-

भर बाद ही डर जाता है और चौंक उठता है। पेटमें वायुकी वजहसे दर्द होकर जाग उठता है।

ज्वर।—पित्त-ज्वरकी सभी अवस्थाओंमें ही लाभ करता है। पित्त-वमनके साथ होनेवाला बोखार, पित्तके कारण रेमिटेण्ट ज्वर। जाड़ा मालूम होना; सन्ध्याके समय शरीर बरफकी तरह ठण्डा हो जाता है। मूर्द्धामें उत्ताप मालूम होता है। पसीनेवाली अवस्थामें प्यास नहीं रहती। यकृत-प्रदेशमें दर्द, इधर-उधर हटनेवाला वायु और पतले दस्त आनेका लक्षण।

चर्म और तन्तु।—माथा, आँख, मुख-मण्डल, वक्षस्थल, मलद्वार प्रभृति स्थानोंमें मसे। एकज़िमा, रस-भरे दाने या उद्भेद, पीले रङ्गका पानीकी तरह स्राव। तलहत्थी रूखी, दर्द-भरी, उससे पानी बहना। अंगुलियाँ सब फूलीं और अकड़ीं। छाला, दाने, गुटिकाएँ, चकत्तेकी तरह दाने, पीले रङ्गका पानीकी तरह रस-स्राव होना। चर्मका सूजनकी तरह प्रदाह; सूजाकके दोषकी वजहसे सब तरहके उद्भेद। बहुत दिनोंका नासूरवाला फोड़ा, नासूर भीतरकी ओर बढ़ा करता है, चारों ओर एक चौड़ी नीले रङ्गकी रेखा; पतला पीव निकलना। सारे शरीरमें शोथ, जालकी तरह झिल्लीमें जल-सञ्चय; बलगमी धातुवाले रोगी; यक्ष्माधिकार; पीव-विष-दूषित रक्त।

ह्रास-वृद्धि।—बायीं करवट सोनेपर साधारणतः सभी लक्षण बढ़ जाते हैं। गर्मीके दिनोंमें, सूखी आबहवामें

और खुली जगहमें इसका रोगी अच्छा रहता है। तर हवामें, बरसातमें, तर जगहमें, सीड़-भरे घरमें, मछली खानेपर और पानीमें या पानीके पासकी जगहमें उत्पन्न अन्न या तरकारी खानेपर रोग बढ़ जाते हैं।

प्रयोग।—सुस्लरके मतसे २x और ६x शक्ति व्यवहार करनी चाहिये। पर हेरिङ्ग वगैरह भिषगाचार्यगण ३० और २०० शक्ति व्यवहार करते थे।

साइलिसिया।

(Silicea, Silicic oxide, Silica, Silex, Acidum silicicum, Flint)

यह एक स्वाभाविक पदार्थ है। उद्भिदोंमें घास, शस्य, ताड़ प्रभृति द्रव्योंमें बहुत अधिक पाया जाता। दूर्बामें बहुत अधिक साइलिसिया रहता है। यह कृत्रिम उपायोंसे भी तैयार किया जा सकता है। कार्बोनेट-आव-सोडा और सिलिकाको एकत्रकर जलाकर, उस दग्धावशिष्ट (भस्म) को गला और छानकर, इसके बाद हाइड्रोक्लोरिक एसिड (लवण-द्रावक) के साथ मिलाकर, तलौं जमने देनेपर, जो तली बैठती है, उसीसे यह नमक तैयार होता है। इसमें किसी तरहका न तो स्वाद रहता है, न गन्ध। यह एक सफेद चूर्णकी तरह होता है।

रक्त, पित्त या मूत्रमें यह थोड़ा-थोड़ा मिलता है, पर अण्डलालमें उससे अधिक दिखाई देता है। पर संयोजक-तन्तु, त्वचा, केश और नखके दग्धावशिष्ट (भस्म) में कुछ ज्यादा मिलता है।

अस्थि, सन्धि, ग्रन्थि, त्वचा, श्लैष्मिक झिल्ली, इन सब स्थानोंमें साइलिसियाकी क्रिया प्रत्यक्ष दिखाई देती है। पुष्ट न होना या कण्ठमाला धातुकी तरह अवस्थाकी उत्पत्तिमें यह लाभदायक है। इसकी क्रिया गभीर और दीर्घकालतक स्थायी रहती है।

पीव पैदा होना और नासूर होनेवाले रोगोंमें इसकी आरोग्यकारिणी क्रिया बहुत अधिक दिखाई देती है। कण्ठ-माला धातुमें तथा पीवका टीका लेनेके बाद, उनके दोषसे यदि शरीर विषैला होकर शारीरिक अवस्था खराब हो जाये तो यह उसकी श्रेष्ठ दवा है। पीवकी दूषित अवस्थामें कैल्के-रिया-सल्फके साथ साइलिसियाका प्रभेद दिखाई देता है। साइलिसिया फोड़ा पका देता है, जल्दीसे पीव पैदा कर देता है; पर कैल्केरिया-सल्फ्युरिका पीव निकलना रोककर जखमको सुखा देता है। प्रदाहके बाद, जबतक रस निकला करता है, तबतक साइलिसियाका प्रयोगकर प्रदाहसे उत्पन्न रस-चरणका रोध करना होगा। इसके बाद उसे सुखानेके लिये कैल्केरिया-सल्फका प्रयोग करना आवश्यक है।

अस्थि-आवरक झिल्लीमें (periosteum) पर साइ-लिसियाकी क्रिया दिखाई देती है। शरीर कृश और प्रकृति

क्रोधी, स्नायु सब सहजमें ही उत्तेजित हो जानेके बाद अवसन्न हो पड़ते हैं। ऐसे क्षेत्रमें साइलिसिया विशेष उपयोगी है। इसके विपरीत स्नायुओंको निद्रित अवस्थामें यह फ़ायदा नहीं करता। सारे शरीरकी स्पर्शानुभूति और पेशी वगैरह क्रियाकी अधिकता, मलद्वारका प्रसारण; हृत्पिण्डका आयतन बढ़ जाना तथा हृद्-पिण्डमें उत्तेजना होना; प्रसवके बाद तथा अन्यान्य कारणोंसे सारे शरीरमें कमजोरी इत्यादि अवस्थाओंमें भी यह उपयोगी है।

साइलिसियाके प्रयोगसे रक्त, रस और अण्डलाल निकलनेकी वजहसे पैदा हुई सूजन लसिकाओं द्वारा सोख ली जाती है।

साइलिसियाके प्रयोगसे वात-रोगमें इकट्ठा हुआ युरेटस, संयोजक तन्तुके कोषाणुओंको उत्तेजितकर, लसिकाओंकी राहसे निकलनेमें सहायता पहुँचाता है।

पैरके तलवेका पसीना रुककर तिमिर-दृष्टि, मोतियाबिन्दु, पक्षाघात इत्यादि उपसर्ग सब साइलिसियाका प्रयोग करनेपर पैरका पसीना जारी होकर एकदम आराम हो जाते हैं।

किसी स्थानके संयोजक तन्तुमें साइलिसियाके परमाणु अगर घट जायें, तो वह जगह पतली पड़ जाती है।

विशेष और निर्देशक लक्षण।

मन।—किसी विषयमें मन नहीं लगा सकता, चिन्ता-शक्ति रुक जाती है; यदि किसी तरह जागरित भी

होती है, तो सहजमें ही शान्त हो जाती है। शरीरकी अपेक्षा मनका तेज अधिक, निराशा, रूखी प्रकृति, जीवनसे उदासीन, गड़बड़ी सहन नहीं कर सकता। आलपीन, सूई इत्यादिसे खेलनेमें बहुत समय बिता देता है।

मस्तक।—ग्रीवा-देशसे ब्रह्मरन्ध्रकी राहसे जानेवाला सर-दर्द, दाहिनी ओर यह दर्द अधिक रहता है; परिश्रम, गोलमाल, रोशनी और पुस्तक पढ़नेपर बढ़ जाता है। गरम सेंक देनेपर घटता है। सरमें चक्कर आना, सामने या बायीं ओर गिर जानेका उपक्रम हो जाना। अपस्मार (मृगी) का दौरा होनेके पहले दाहिनी कनपटीमें सुई गड़नेकी तरह तेज दर्द, बाहुमें भार मालूम होना और ऐंठनकी तरह दर्द, बच्चोंके माथेमें ज्यादा पसीना होना, पर माथा गरम कपड़ेसे ढका रखना पसन्द करता है। माथेकी आकृति बड़ी, ब्रह्मरंध्रकी सन्धि आपसमें मिलती नहीं; माथेमें बतौड़ी; अर्बुद; केश झड़ जाना।

आँख।—अश्रु-स्रावी ग्रन्थि और यन्त्रोंकी बीमारीकी यह एक श्रेष्ठ दवा है। आँसू बहनेकी राहमें नासूर, गुहौरी, आँखके चारों ओर पलकोंमें फोड़ा और कोषमय अर्बुद—(cystic tumors); पलकोंके भीतरी भागका अर्बुद; कनीनिकामें छाले, गुटिका प्रभृति उद्भेद निकलना; चेचककी बीमारीके बाद कनीनिकाका गदला रह जाना; पैरका पसीना रुककर तिमिर-दृष्टि (डेरा देखना) या मोतियाबिन्द,

पलकोंका स्नायुशूल, खासकर दाहिनी आँखमें; लिखने-पढ़नेके समय अक्षर सब मानो जुड़े हुए दिखाई देते हैं; पलकोंका अनैच्छिक कम्पन या फड़कना।

कान।—नहाने बाद कानमें प्रदाह हो जाना; कानमें पीव और दर्द; पतला बदबूदार पीवका स्राव; जबड़ेकी हड्डीमें जखम हो जाना; कानसे पुराना पीवका स्राव; कर्णनली और गह्वर फूले हुए, दर्द-भरे; श्लेष्मा-स्राव और श्रवण-शक्तिका बिगड़ जाना। बहरापन, कभी-कभी कानमें एक भीषण शब्द होकर फिर सुनाई पड़ने लगता है और श्रवण-शक्ति खुल जाती है।

नाक।—सर्दी, छींक, श्लेष्माका स्राव; नाककी ठोर लाल रङ्गकी; नासारंध्रमें खुजली; पीनस रोग; बदबूदार स्राव; श्लैष्मिक झिल्लीके नीचेवाले संयोजक तन्तुमें या अस्थि-आवरक तन्तुमें रोगका फैल जाना। पुरानी सर्दी, श्लैष्मिक झिल्ली फूली हुई, सूखी, फटी, पपड़ी-जमी और घ्राण-शक्तिका घट जाना। उपदंश या कण्ठमालासे उत्पन्न अस्थिका क्षय। नासा-रंध्रमें दुरारोग्य जखम, विदाही स्राव; नासा-रंध्रके चारों ओर और ओंठमें विसर्पकी तरह या दादकी तरह उद्भेद निकलना।

मुखमण्डल।—दर्द-भरी गोटियाँ, मसूढ़ेमें फोड़ा होनेके बाद मुख-मण्डलके तन्तु और कोषका कड़ा हो जाना; प्रमेह-दोषकी वजहसे पैदा हुआ—व्रण, जखम, नीचेवाले

मसूढ़ेकी पेशीकी बीमारी; ओंठके ऊपर अर्बुद; चेहरा उतरा हुआ; मिट्टीके रङ्गका।

मुँहके भीतर।—लाला-स्रावी ग्रन्थिमें पीव पैदा हो जाना; सड़े घाव; तालु-मूलमें छेद-भरा जखम; मुँहके कोनेमें जखम; कब्जके साथ गल-कोषका पुराना प्रदाह। जीभमें कड़ापन, जीभमें जखम; जीभमें केश लगा रहनेके कारण जखमकी तरह मालूम होना। रातमें दाँतमें भयानक दर्द, पैरमें ठण्डक लगनेकी वजहसे; उत्तापसे या सर्दीसे न घटना। दाँतकी जड़में फोड़ा, नासूर; बच्चोंको बड़ी तकलीफसे दाँत निकलना; मसूढ़ेमें दर्द और छाले; फोड़ा।

कण्ठ।—थाइरायड ग्रन्थिका बढ़ना; गलगण्ड—(घेघा)। तालुमूल-ग्रन्थिसे पीव निकलना, उसके सूखनेमें देर लगना; बीच-बीचमें गलेमें जखम और टानसिलाइटिस (तालुमूल-प्रदाह)। टेटुआ, तालुमूल और अलिजिह्वा—पक्षाघात हो जानेकी तरह सुन्न पड़ जाती है।

पाकाशय।—स्तन पीनेके बाद ही बच्चा के करने लगता है। शराब पीना बिलकुल ही सहन नहीं होता। मांस तथा गरम खाद्यसे अरुचि। पाकाशयके निचले प्रान्तके पथका कड़ापन; पुराना डिस्पेप्सिया (मन्दाग्नि); खट्टी डकार, छातीमें जलन और सर्दी मालूम होना। दोपहरके पहले मिचली और वमन।

उदर और मल-मूत्र ।—बच्चोंका पेट बड़ा रहता है ; पुट्ठेकी गाँठ भी बड़ी ; मल-द्वारकी निकालनेकी शक्ति घट जाती है, इसीलिये कब्जियत बनी रहती है। कड़ा मल थोड़ा-सा निकलकर फिर भीतर घुस जाता है। यकृतमें कड़ापनके साथ फोड़ा। बच्चोंका अतिसार, सड़ी बदबूसे भरा मल ; उदर-प्रदेश गरम, कड़ा और स्थूल आकृतिका ; माथेका पसीना खट्टी गन्ध लिये। पेटमें इधर-उधर हटनेवाला वायु ; क्रिमिकी वजहसे उदर-शूल ; बेहद तकलीफ देनेवाला बवासीर। मलद्वारमें फटा घाव या नासूर ; मसानेवाली ग्रन्थिमें पीव पैदा हो जाना ; पेशाबमें पीव और श्लेष्मा। मूत्राम्ल (uric acid) और लाल रङ्गकी बालूकी तरह पदार्थ पेशाबमें छिटककर निकल पड़ता है, क्रिमिकी वजहसे शय्यामें पेशाब कर देना।

पुं-जननेन्द्रिय ।—पुराना उपदंश-दोष, कितनी ही जगहोंका कड़ापन और पीव पैदा हो जाना। पुराना प्रमेह-दोष, गाढ़ा बदबूदार पीव-मिला स्राव। अण्डकोषमें ज्यादा पसीना होना और खुजली ; वीर्य-स्खलन ; जल-दोष ; कामोच्छ्वास ; विषय करनेकी अदम्य इच्छा ; बार-बार स्वप्न-दोष ; कितने ही स्थानोंमें पक्षाघात रोगमें ये सब उपसर्ग दिखाई देते हैं।

स्त्री-जननेन्द्रिय ।—मासिक ऋतु-स्रावके समय सारा शरीर बरफकी तरह ठण्ढा, कब्जियत और तलवेमें बदबू-

दार पसीना। योनिके बाहरी स्थानपर खुजली और जलन। नियमित समयके पहले ही ऋतु-स्राव हो जाना ; ऋतु-स्राव परिमाणमें थोड़ा, शायद ही कभी अधिक मात्रामें होता है। कामातुरता, प्रदर, बहुत ज्यादा स्राव, इसके साथ ही दाह और खुजली ; स्तन पिलानेके समय रज निकलना। योनिमें रस भरे अर्बुद, बन्ध्यात्व ; भगोष्ठमें फोड़ा ; नासूर हो जानेका उपक्रम। पानीमें खड़े होकर काम करनेकी वजहसे जरायुसे रक्त-स्राव।

गर्भावस्थामें स्तन बहुत कड़े और दर्दसे भरे हो जाते हैं। स्तन-प्रदाहकी यह एक उत्कृष्ट दवा है। इसके द्वारा पीव बन्द होकर सूजन और कड़ापन आराम हो जाता है। स्तनका कैन्सर। स्तनकी घुण्डीमें फटे घाव और जखम हो जाते हैं ; स्तनमें नासूर ; स्तनमें कड़ा ढेलेकी तरह फोड़ा ; पकनेका उपक्रम। गर्भावस्थामें तलवेमें दर्द और लँगड़ापन।

वक्ष और श्वास-यंत्र।—स्थिर-भावसे बैठे रहनेके बाद या ज्यादा परिश्रम करनेकी वजहसे कलेजा काँपना। हृत्पिण्डकी पुरानी बीमारी ; कलेजा धड़कना। नुमोनिया-रोगमें पीव पैदा होना ; ढीला श्लेष्मा और पीव ; बहुत ज्यादा पीली आभा लिये हरे रङ्गका गाढ़ा बलगम निकलना ; इसके साथ ही विलेपी ज्वर। ठण्डा पानी पीते ही गला जकड़ जाता है (स्वर-भङ्ग)। खाँसी, कण्ठ और वक्षके ऊपरी भागमें खुजलीकी वजहसे तङ्ग करनेवाली खाँसी। जीभमें

केश लगी रहनेकी तरह अनुभव होना ; रातमें सोनेके बाद खाँसीका बढ़ जाना। यक्ष्माधिकार। फेफड़ेमें फोड़ा और पीव। साबूदानेकी तरह छोटे-छोटे श्लेष्मा-खण्ड (बलगमके ढेले) खाँसीके साथ निकलते हैं, उसमें बड़ी बदबू रहती है।

पीठ और हाथ-पैर।—दोनों कन्धोंके बीचके स्थानोंमें दर्द। रिकेट्स-रोग, मेरुदण्डका उपदाह, मेरुदण्डका टेढ़ापन, पीठका फोड़ा ; कमर या नितम्बका फोड़ा ; कुल्हेकी सन्धि (hip-joint) का प्रदाह ; साइलिसियाके द्वारा पीव होना बन्द हो जाता है या अगर पीव पैदा हो जाता है, तो भी वह दब जाता है। गहरा जखम, गाढ़ा, पीली आभा लिये पीवका स्राव। अंगुलहाड़ा, अंगुलियोंके अगले भागमें—टपकका दर्द ; इस दवासे पीव होना बन्द होकर नया नख पैदा हो जाता है। अस्थि-क्षय रोगमें, नासूर और अस्थियोंके टुकड़े तथा पीवका स्राव होना, नखके कोने धँस जानेकी बीमारी। नख टूटनेवाले और क्षय होते रहते हैं, नखपर सफेद दाग पड़ते हैं। तलवा और बगलमें बदबूदार पसीना ; तलवा और एँड़ीमें दर्द ; बहुत दूरतक चलनेपर तलवा और पैरकी अंगुलियाँ सब अकड़ जाती हैं। मेरुदण्डमें चोट लगनेके बाद बहुतसे स्नायविक उपसर्ग, पहले ठण्डी हवा लगकर नाना प्रकारके उपसर्ग, लिखनेके समय हाथ अकड़ जाते हैं। बाहु और हाथ भारी और पक्षाघात-ग्रस्त मालूम होते हैं। रातके समय कन्धा और बाहुमें दर्द, गरम कपड़ा लपेट रखनेपर घटना।

स्नायु।—रातके समय मृगी आ जाती है, कलेजेके अग्र-खण्डके पाससे एक उच्छ्वास-सा उठा करता है। मल-मूत्र-द्वारमें आक्षेपके साथ रुकावट। हिस्टिरिया और दुःसाध्य स्नायु-शूल; बहुत कमजोरी, हमेशा ही सोये रहनेकी इच्छा। मेरुदण्डका क्षय-रोग। सामान्य कारणसे ही चौंक उठता है और अकड़न पैदा हो जाती है। थकावट और सुस्तीके साथ उत्तेजना; रक्तोच्छ्वासकी वजहसे नींद न आना, निद्रित अवस्थामें बात करना; बुरे-बुरे सपने देखना; निद्रित अवस्थामें सब अङ्गोंमें झटका लगना।

ज्वर।—बहुत दिनोंतक पीव आनेकी वजहसे बिलेपी ज्वर, उत्तापकी कमी, हमेशा सिहरावन मालूम होते रहना; ठण्डी हवा सहन नहीं कर सकता। ज्वरका ताप तीसरे पहर आरम्भ होकर रातभर रहता है। पैरके तलवेमें जलन, रातमें बहुत पसीना होना; भूख न लगना और बहुत ही अधिक कमजोरी मालूम होना; माथेमें बहुत अधिक पसीना होना।

चर्म।—सहजमें ही सामान्य कारणसे जखम हो जाता है और आराम होनेमें देर होती है। फोड़ा, कार्बङ्कल, दूषित-फोड़ा, अँगुलहाड़ा, नखके कोने घुसना इत्यादिकी श्रेष्ठ दवा है। चेचक-रोगमें गोटियोंकी पकनेवाली अवस्थामें यह फायदा करता है। दूषित-टीका लगनेके कारण व्याधियाँ, एकज़िमा, छाल निकला करती हैं, नखके चारों ओर जखम।

कुष्ठ-व्याधि, नाकका जखम, गुटिकाएँ, ताँबेके रङ्गका चकत्ता निकलना या दाग पड़ना। अर्बुद, शोथ, ग्रन्थि-योंका फूलना, उपास्थिका अर्बुद, अस्थिसे उत्पन्न क्षय-रोग।

ह्रास-वृद्धि।—रातके समय, पूर्णिमा तिथिको, खुली हवामें, ठण्डी हवामें, पानीमें भींजनेपर, तलवेका पसीना बैठ जानेपर बढ़ना—गर्म प्रयोगसे, गरम घरमें, माथेमें गरम वस्त्र लपेट रखनेपर।

प्रयोग।—६x और १२x प्रचलित हो रहा है, पर उच्च-शक्तिसे भी बहुत अधिक फायदा दिखाई देता है। कार्ब-ङ्कल, दूषित जखम, पिनस-रोग, जरायुका जखम इत्यादि क्षेत्रोंमें इसके बाहरी प्रयोगसे भी फायदा रहता है। कड़ा फूला हुआ फोड़ा, जिसमें पीव नहीं हुआ करता, ग्रन्थियोंका बढ़ना या कण्ठमालाकी वजहसे उपसर्ग, निम्न-क्रमके बार-म्बार प्रयोगसे फायदा है। पीव पैदा होनेके बाद ऊँचे क्रमका प्रयोग करना चाहिये।

———

रोग और चिकित्सा।

पहले ही कहा जा चुका है, कि जीव-देहके रक्तके भीतर अजैव-लवणोंका परमाणु घटने या अनुपात गड़बड़ा जानेपर और उसी वजहसे उत्पन्न हुए एक या एकसे अधिक लवणका अभाव या कमी हो जानेपर बीमारी पैदा होती है। भिन्न-भिन्न अजैव-लवणके साथ विभिन्न प्रकारके और प्रकृतिके जैव-पदार्थोंका घनिष्ट सम्बन्ध है। इसीलिये, जैव-तन्तु और कोषोंके द्वारा शारीरिक क्रिया नियमित और शृङ्खलित रहकर मनुष्यका स्वास्थ्य ठीक-ठीक अवस्थामें रहता है।

मनुष्य अपने रोजके खान-पानसे पार्थिव तथा अजैव-लवण संग्रह करता है। स्वाभाविक रूपसे जीवन बितानेपर अटूट स्वास्थ्यके भोग करनेके उदाहरण मानव-जातिके इतिहासमें कम नहीं पाये जाते हैं; परन्तु अपनी कपोल-कल्पित सभ्यताके फेरमें पड़कर जितना ही स्वाभाविक पथको वह यत्नसे छोड़ता जाता है और कृत्रिम उपायोंको बड़े आग्रहके साथ ग्रहण करता जाता है, उतना ही उसके स्वास्थ्यका भण्डार खाली होता चला जाता है और रोग सब रोज नयी-नयी मूर्त्तियाँ धारणकर पैदा होते और मानव-जातिको ध्वंस करते जाते हैं। मनुष्य अपनी उस भीतरी दीनताको ढकनेके लिये नित्य नये-नये उपाय खोजनेमें अपनी बुद्धि लगाता रहता है।

रातका पहला पहर बीत जानेपर सोना और ब्राह्म-मुहूर्त्तमें बिछावन त्यागकर उठ बैठना, प्रकृतिका नियम है। पर सभ्यताने उस नियमको छुड़वाकर रोजाना आमोद-प्रमोदका उपभोग करनेके लिये रात जागनेका प्रबन्ध कर दिया है। प्रकृति बदला लेना नहीं छोड़ती अतएव चेहरेपर जब उच्छृ-ङ्खलताका धब्बा आ पड़ता है, तो गड्ढेमें धसी आँखोंके किनारे सुरमा, दोनों रक्त-शून्य ओठोंमें झलक या "लिप्-सल्व" मुर्देकी तरह चेहरेपर "स्नो", सिकुड़े हुए गालोंके "रूज" प्रभृति वैज्ञानिक उपायोंसे निकाले हुए प्रसाधन द्रव्योंके व्यवहारकी सभ्य-नीति प्रचलित हुई; पर इनसे स्वाभाविक स्वास्थ्यका लालित्य किसी तरह भी लौट नहीं आता। मनुष्य कागजपर छपी तसवीर जरूर हो गया; पर मनुष्य न हो सका।

खान पानमें भी वैसी ही कृत्रिमता दिखाई देती है। धान्य गेहूँ आदिका स्वाभाविक व्यवहार तथा अन्न तरकारी इत्यादि का स्वाभाविक व्यवहार त्यागकर सभ्यताकी उद्भावनी शक्तिने अनगिनती खान पान प्रणाली और चाल पैदा कर दी हैं और इस वजहसे रोज़ नये नये ऐसे खाद्य पदार्थोंका प्रयोग होता है, जिनका पहले नाम भी न सुना गया था। जीभकी तृप्तिके उपयुक्त पाक प्रणालीमें खाद्यसार एक दम विनष्ट हो गया। इससे शरीरके पोषणके लिये आवश्यक और अपरिहार्य जैव-पदार्थ और अजैव लवणोंका अभाव हो रहा है; और इसीका यह परिणाम हो रहा है, कि शारीरिक क्रियामें गड़बड़ी पैदा होकर, मनुष्य रोगसे ग्रस्त होते जा रहे हैं।

अब आगे रोग और चिकित्सा प्रसंगमें अजैव लवणको कमीको पूराकर आरोग्य साधनका उपाय बताया जायगा।

फोड़ा।

(Abscess)

फोड़ा शरीरके किसी भी स्थानमें हो सकता है। खासकर खाद्य पदार्थोंमें जब यथोचित मात्रामें "कैलि-म्यूर" लवण नहीं रहता, शरीरके रक्तमें इस नमककी कमी हो जाती है और उसके अण्डलाल और कोमल तन्तु विचुयत और निश्चेष्ट हो जाते हैं। प्रकृतिके नियमके अनुसार, शरीरमें कोई भी अनावश्यक पदार्थ नहीं रह सकता; इसीलिये इन दोनों ही जैव-पदार्थोंको जब चमड़ेकी राहसे जीवनी-शक्ति निकाल बाहर करनेकी चेष्टा करती है, उस समय वे फोड़ेका आकार धारणकर चर्मके ऊपर निकलते दिखाई देते हैं।

किसी अङ्गमें जोरसे चोट लगकर उस स्थानके तन्तु और कोषाणु अगर नष्ट हो जाते हैं, तो आस-पासके सजीव तन्तु उस ध्वंस-प्राप्त जैव-पदार्थोंको बाहर निकालनेके लिये घबड़ा पड़ते हैं। ऐसी अवस्थामें चोटवाली जगहपर फोड़ा निकलता दिखाई देता है।

Boils अर्थात छोटे आकारके फोड़े, Carbuncles—कार्बङ्कल। अर्थात—बहुतसे मुँहवाले फोड़े, दूषित फोड़े

इत्यादि सहज साध्य या दुःसाध्य बहुत तरहके फोड़े दिखाई देते हैं।

"फोड़ा" निकलनेके समय चमड़ा कड़ा हो जाता है और धीरे-धीरे नोकदार होकर ऊपर उठ आता है। प्रदाहके बाद पकनेपर उसमें पीव पैदा हो जाता है। फोड़ा फटनेपर,—पहले खून-मिला पतला स्राव होता है, इसके बाद गाढ़ा पीव निकलता है और सबके अन्तमें फोड़ेके बीचकी "खील" (core) निकलकर सूख जाती है।

"कार्बङ्कल" ऊपर उठकर नोकदार नहीं होता है, पर पहलेसे ही कड़ा थक्का बाँधता है, गरमी रहती है, बैंगनी रङ्गका हो जाता है, जलन रहती है; परन्तु इसमें खील नहीं रहती और बहुतसे मुँह हो जाते हैं। अगर रोगीमें पेशाबकी गड़बड़ी रहती है, तो यह प्रायः मारात्मक हो जाता है।

चिकित्सा।

फेरम-फास।—छोटा या बड़ा फोड़ा, कार्बङ्कल, अंगुलहाड़ा इत्यादि किसी तरहके भी फोड़ेके प्रदाहकी पहली अवस्थाकी श्रेष्ठ दवा हैं। रोगवाली जगह लाल, गर्म; रक्तकी अधिकता; ज्वर। इस लवणके साथ पर्याय-क्रमसे कैलि-म्यूरका प्रयोग करनेपर, रोग आगे नहीं बढ़ पाता; दूषित जैव-पदार्थ उसी स्थानसे सोखा जाकर दूसरी राहसे निकल जाता है।

कैलि-म्यूर।—प्रदाहकी दूसरी अवस्थामें जब रोग-वाली जगहपर सूजन आ जाती है, पर उस समय भी पीव नहीं पैदा हुआ रहता है। यदि इस समय भी रोगवाले स्थानमें गरमी रहे, तो इस नमकके साथ कई मात्रा फेरम-फास देना चाहिये। स्तनके फोड़ेकी इस तरहकी सूजनवाली दूसरी अवस्थामें यह ज्यादा फायदा करता है। इससे सूजन बहुत जल्द दूर होकर एकदम आरोग्य हो जाता है। इसके भीतरी प्रयोगके साथ, इस लवण-जातीय जलीय द्रवमें लिण्ट या साफ कपड़ेका टुकड़ा भिंजाकर फोड़ेके ऊपर लगा देना चाहिये और सूखनेपर बार-बार तर कर देना चाहिये।

साइलिसिया।—यदि ऊपर कही दवाका प्रयोग करनेपर भी पीव पैदा होने लगे, तो उस अवस्थामें साइ-लिसिया फायदा करता है। इससे फोड़ा बहुत जल्द पक जाता है और फट जाता है। नश्तर लगवानेकी जरूरत ही नहीं पड़ती। फोड़ा फट जानेके बाद पीव निकलता रहनेपर इसका भीतरी और बाहरी प्रयोग करना चाहिये। अंगुलहाड़ा रोगमें भी इस लवणके भीतरी और बाहरी प्रयोगसे पीव निकल-नेमें सहायता प्राप्त होती है और सड़ा हुआ नख गिर जाता है तथा उसकी जगहपर नया नाखून पैदा हो जाता है; क्योंकि साइलिसिया लवण नखका प्रधान उपादान है। अंगुलहाड़ा-की साइलिसियासे बढ़कर दूसरी दवा नहीं है। रोगकी पहली अवस्थासे ही प्रत्येक दो घण्टेका अन्तर देकर प्रयोग करनेपर प्रायः २४ घण्टोंमें सभी उपसर्ग आरोग्य हो जाते हैं।

कैल्केरिया-सल्फ।—फोड़ेके पासवाले तन्तु और कोषोंकी निस्तेज अवस्थाकी वजहसे अगर बहुत दिनोंतक पीवका स्राव होता रहे और सूखनेमें विलम्ब हो तो यह लवण फायदा करता है। फोड़ा, कार्बङ्कल, स्तनका पकना, अंगुलहाड़ा इत्यादि सभी क्षेत्रोंमें पीव सम्बन्धी—ऐसी अवस्था देखकर कैल्केरिया-सल्फका प्रयोग करनेमें विलम्ब न करना चाहिये। साइलिसिया लवण फोड़ा पकाकर और फाड़कर पीव निकाल देता है; पर कैल्केरिया-सल्फ पीव निकलनेकी क्रियाको रोककर पीवको सुखा देता है। इस लवणमें साइलिसियाकी तरह बदबूदार स्राव नहीं रहता। मलद्वारके बगलमें बहुत ही दर्द-भरा फोड़ा होनेपर भी कैल्केरिया-सल्फ विशेष उपयोगी है। पर किसी अङ्गके गभीरतम स्थानमें फोड़ा होनेपर, "साइलिसिया" उस फोड़ाको चर्मके ऊपर निकाल देता है और पका डालता है; किसी दूसरे लवणमें ऐसा नहीं होता।

नेट्रम-सल्फ।—बहुत दिनोंका स्थायी नासूरका घाव, खासकर अगर यह निम्नाङ्गकी किसी जगहपर हो जायें, तो नेट्रम-सल्फसे आराम हो जाता है। पानीकी तरह पीव, तथा जखमके चारों ओर एक नीला घेरा इसमें बना रहता है।

कैल्केरिया-फ्लुयोरिका।—अस्थि-रोगकी वजहसे फोड़ा, पीवका स्राव होनेके साथ छोटे-छोटे हड्डीके टुकड़े सब निकलते हैं। अस्थि-दोषके कारण पैदा हुआ अस्थि-

प्रदेशका फोड़ा और उसमें नासूर पड़ जानेका लक्षण या नासूर ही हो जाना ; जखमके किनारे कड़े, एकदम लचीले रहना। स्तनमें बहुत दिनोंका नासूरका घाव मिला स्तनका प्रदाह होनेपर इस नमककी अद्भुत आरोग्यकारिणी-शक्ति दिखाई देती है।

कैलि-फास।—फोड़ा, अंगुलहाड़ा, कार्बङ्कल—इत्यादि पीवका स्राव होनेवाले फोड़े और जखमकी वजहसे कमजोरी तथा इसके साथ ही अगर दूषित पीवका स्राव भी होता हो, तो यह लवण एक उत्कृष्ट दवा है। सड़ा, बदबूदार, खून-मिला, गदला पीव, भूरे रङ्गका, गो-मूत्रकी तरह और गदला ; बदबूदार पीवका स्रावहोनेवाले स्तनके प्रदाहमें यह दवा बहुत उपयोगी है।

रोगी-विवरण।

श्रीयुत पूर्णचन्द्र चट्टोपाध्याय, उमर ७१ वर्ष। इन्हें दाहिनी चूतड़पर बहुतसे मुँहवाला एक बहुत बड़े आकारका कार्बङ्कल हुआ। बहुत जलन और दर्द था, यहाँतक कि कपड़ेका स्पर्शतक सहन न होता था। साइलिसिया १२x नित्य तीन बार प्रयोग करनेके बाद, दूसरे दिन फटकर सब मुँह एक हो गया और एक बहुत बड़ा गड़हा बन गया ; बहुत दिनोंतक गाढ़ा पीव निकलता रहा। यह देखकर कि आराम होनेमें देर हो रही है, रोज दो मात्रा कैल्केरिया-

सल्फका प्रयोग किया गया और उसीसे एक हफ़्ते में ही फोड़ा आराम हो गया।

मुँहासा।

(Acne)

चर्मके नीचेवाली मेद-स्रावी ग्रन्थि और केशोंके भीतरके स्थानीय प्रदाहकी वजहसे पैदा हुए फोड़ेकी तरहके एक खास तरहके उद्भेद होते हैं, ये चेहरेके ऊपर ही निकलते हैं। जवानीके साथवाले चर्म-रोगमें बहुत संस्थानोंमें यह पुराना भावापन्न हो पड़ता है। यह साधारणतः दो श्रेणीका दिखाई देता है :—

(क) कमल व्रण।—(Acne vulgaris) इसको (Acne simplex) भी कहा जाता है। पहले एक कड़ी फुन्सी होती है; उसमें फिर रस हो जाता है, कभी कभी पीव होता भी दिखाई देता है; इस फुन्सीके बीचमें छेद रहता है और उसमें काले रङ्गका बिन्दु (तिलकी तरह) दिखाई देता है। किसी किसीको घमौरीकी तरह बहुत छोटे छोटे व्रण एक साथ निकलते हैं; इसको milia (मिलिया) कहते हैं। किसी किसी युवकके कन्धे और वक्षस्थलतक कमल व्रण फैल जाते दिखाई देते हैं। ये व्रण छूनेपर कोमल मालूम होते हैं, और ऐसा मालूम होता है कि उनपर घी

लगा हुआ है। आराम हो जानेपर किसी तरहका दाग नहीं रह जाता।

(ख) काष्ठ व्रण।—(Acne Indurata) बहुत बड़े आकारको रस भरी फुन्सी, इसका तलदेश गहरा और रस भरा रहता है, बैंगनी रङ्गका ढेलेकी तरह ; छोटे दाल के आकारसे लेकर एक बड़े मटरके आकारका होता है। अपेक्षाकृत अधिक उमरमें और जवानीके अन्तिम भागमें निकलता है; आराम हो जाने बाद जखमका चिन्ह रह जाता है।

चिकित्सा।

कैलि-म्यूर।—चेहरा और गर्दनपर व्रण; छूनेसे दर्द ; चर्बी मिले खाद्य पदार्थ सहन नहीं होते; गुरुपाक चीजें खानेपर व्रण अधिक निकलते हैं ; व्रण सूख जानेपर, गेहूँकी भूसी की तरह उसपर से छाल निकला करती है।

साइलिसिया।—दोनों तरहके व्रणोंको ही यह श्रेष्ठ दवा है। कब्जियत, व्रण पकने और दाग पड़नेकी तैयारी ; रति लिप्सा बहुत अधिक ; आँखमें बार बार अँजनी या गुहीरी हुआ करती है; काष्ठव्रणमें यह ज्यादा फायदा करता है। इसकी निम्न-शक्तिका प्रयोग कर आराम होनेके बाद, उच्चतम शक्तिकी एक मात्रा प्रयोग करदेनेसे भविष्यमें मुँहासे निकलनेकी सम्भावना नहीं रहती और रोगीका धातु-दोष संशोधित हो जाता है।

कैल्केरिया-सल्फ।—पीव भरे व्रण; एक एक मुँहासा बहुत दिनों तक कष्ट दिया करता है।

नेट्रम-म्यूर।—विद्यार्थी और विद्यार्थिनियोंके चेहरे-पर, खासकर गालमें और कपालमें बार बार मुंहासे निकलना और इसके साथ ही सर दर्द।

अपथ्य।—मांस, पकी मछली, प्याज, लहसुन और गरम मसाला।

एडिसन रोग।

(Addison's disease)

इस रोगका आविष्कार एडिसन साहबने किया है।

मूत्रग्रन्थि (मसाना) के ऊपर, दोनों पार्श्वोंकी ग्रन्थिका Suprarenal glands) या उसके पासवाली अर्द्धचन्द्राकार स्नायुग्रन्थिका (Semilunar ganglia) के क्षयकी वजहसे बीमारियाँ। यह यक्ष्माके कारणसे पैदा हुआ उपसर्ग है। इसमें धीरे धीरे लक्षण सब बढ़ा करते हैं; चर्मका ताँबेके रङ्गका हो जाना—यह लक्षण इस रोगमें पहले पहल दिखाई देता है, क्रमसे बढ़नेवाली कमजोरी और थोड़ी खूनकी कमी भी दिखाई देती है; पर शरीर दुबला होता नहीं दिखाई देता।

थोड़े भी शारीरिक या मानसिक परिश्रमसे थकावट आ जाना; हृत्पिण्डकी कमजोरीकी वजहसे नाड़ीका आयतन छोटा

और क्षीण हो जाता है; सरमें चक्कर आना और अपस्मार (मृगी); अन्तवाले लक्षणोंकी वृद्धिकी वजहसे मृत्यु हो सकती है।

सर-दर्द और कमरमें दर्द, रोगके आरम्भ से ही मौजूद रहता है। सारे शरीरके चमड़ेके रङ्गका बदल जाना इसका विशेष उल्लेखनीय उपसर्ग है, पीली आभा लिये रङ्गसे लेकर घोर भूरा रङ्ग, और तांबेके रङ्गकी तरह दिखाई देता है; चेहरा, हाथ, पेर आदि खुले अङ्गोंका रङ्ग अधिक गहरा होता है; दाँतके मसूढ़ेमें गहरी भूरे रङ्गकी रेखा दिखाई देती है; ओठ, जीभ और मुँहके भीतरकी श्लैष्मिक झिल्ली, आँखकी पलक इस रङ्गकी दिखाई देती है पर आँखके शुक्लमण्डल पर यह रङ्ग शायद ही कभी दिखाई देता है, कमरके जिस स्थानपर कसकर कपड़ा पहना जाता है और जिस जगह पर हमेशा दबाव ज्यादा पड़ता है, उन उन स्थानोंका चमड़ा घोर लाल रङ्गका दिखाई देता है। त्वचा चिकनी और स्थितिस्थापक; उस जगह खुजली नहीं रहती।

बीच बीचमें एकाएक और क्रमसे बढ़नेवाला वमन और दस्त हुआ करता हैं। क्रमसे बढ़नेवाली मन्दाग्नि, भूख न लगना; माँसाहारसे एकदम अरुचि; पाकाशयके पास दर्द, यह दर्द ऐसा मालूम होता है, मानो अजीर्ण हुआ हो।

थकावट, बेहोशी, अवसाद, नींद न आना, भयानक सर-दर्द और कमरमें दर्द; वार बार मूर्च्छा।

खूनमें दबावका घट जाना; नाड़ीका आयतन छोटा पड़

जाना और कोमल ; श्वासमें कष्ट ; सामान्य परिश्रमसे ही कलेजा काँपना।

अगर उपसर्गोंमें जटिलता पैदा हो जाय ; या अन्तिम अवस्थामें रक्ताल्पता उपस्थित हो जाती है तो यह रोग धीरे धीरे पुराना या जीर्ण भाववाला हो जाता है। पर बालक बालिकाओंकी यह बीमारी बहुत दिनोंतक जारी रहती नहीं दिखाई देती।

चिकित्सा।

लक्षणोंकी बहुत विचित्रताकी वजहसे इस रोगकी शृङ्खला-बद्ध चिकित्सा सम्भव नहीं है। जिस समय जिस लक्षणकी प्रधानता या वृद्धि होती है, उस समय उसके अनुरूप दवाका प्रयोग कर रोगकी गति तोड़ देनी पड़ती है। एकदम विश्राम और व्यक्तिगत प्रयोजनके अनुसार पुष्ट पदार्थोंके पथ्यकी व्यवस्था करना उचित है।

अधिकांश स्थानोंमें "नेट्रम-म्यूर" के प्रयोगसे रोग आरोग्य हो जाता है।

नेट्म-म्यूर।—शरीरके पोषणकी बहुत कमी ; मूत्रग्रन्थि (मसाने) की जगहपर खींचन मालूम होना और गरमी ; चेहरेका रङ्ग पीली आभा लिये या उतरा हुआ अथवा मिट्टीकी तरह ; तलहत्थीकी पीठ (करभ) पर बून्दकी तरहके सब चिन्ह ; शारीरिक और मानसिक क्लान्ति और सुस्ती ;

दोनों पैर इतने कमजोर रहते हैं कि शरीरका भार सहन नहीं कर पाते, खड़े होने या चलनेपर पैर काँपा करते हैं; धुँधली दृष्टि; मिचली, वमन, पाकाशयमें दबावकी तरह दर्द; कब्जियत, भूख न लगना, उदरमें और उपपर्शुकाओंमें दर्द; हिलने डोलने और परिश्रम करनेकी इच्छा न होना; हाथ पैर ठण्डे; मानसिक सुस्ती, चिड़चिड़ा स्वभाव; बार बार जम्हाई और अँगड़ाई पर नींद नहीं आती। उठ कर खड़े होने या चलनेकी चेष्टा करनेपर सरमें चक्कर आया करता है।

अण्डलाल-मिला पेशाब।

(Albuminuria)

इस रोगका दूसरा नाम है—Brights disease (ब्राइट्स-रोग); ब्राइट साहबने इस रोगका आविष्कार किया था; इसी वजहसे इसका नाम Brights disease पड़ा है। इसके बहुतसे प्रति-शब्द हैं। जैसे,—Acute desquamative nephritis. Acute tubal nephritis. Acute catarrhal nephritis; Acute parenchymatous nephritis; यह नया और पुराना दो श्रेणीका होता है।

नया रोग।

बहुतसे स्थानोंमें, बहुत अधिक सर्दी लगकर मसाने—(मूत्र-ग्रन्थि—kidney) का नया प्रदाह पैदा हो जाता है

और इसका परिणाम यह होता है, कि पेशाबके साथ अण्ड-लाल निकलता है; ऐसा कारण रहनेपर, रोग एकाएक आक्रमण करता है, पहलेके किसी लक्षणसे रोगका आगमन समझमें नहीं आता।

आरक्त ज्वर (Scarlet fever), डिफ्थीरिया, चेचक, खसड़ा इत्यादि स्पर्शाक्रामक और संक्रामक रोगके बादकी उप-सर्गके रूपमें यह रोग पैदा हो जाता है। इसके अलावा कैन्थरिस, कोपेवा, टरपेण्टाइन प्रभृति कितनी ही मसानेमें उत्तेजना पैदा करनेवाली दवाएं बहुत ज्यादा सेवन करनेसे ही यह रोग हो सकता है।

थोड़ा बहुत बोखार, कमरमें धीमा धीमा दर्द, मिचली और लगातार वमन, इन लक्षणोंके साथ रोग पैदा हो जाता है। मसानेमें दर्द होकर वह मूत्रनलीकी राहसे नीचेकी ओर उतरता रहता है; पेशाब परिमाणमें थोड़ा और गाढ़े रङ्गका होता है; पहले चेहरेपर शोथ दिखाई देता है और वह जल्द ही सारे शरीरमें फैल जाता है। इसके बाद श्वासकृच्छ्रता पैदा हो जाती हैं और रोगकी गति यदि रोकी नहीं जाती तो विकार, बेहोशी लिये नींद, अकड़न आदि अरिष्टके लक्षण सब दिखाई देने लगते हैं; पेशाबके साथ "युरिया—मूत्रक्षार" निकलना बन्द होकर ये सब उपसर्ग पैदा होते हैं।

निद्रित अवस्थामें रोगीका शोथ बढ़ जाता है। नाड़ी तेज हो जाती है, और उसका खिंचाव ऊँचा रहता है। हृत्पिण्ड की दूसरी आवाज ऊँची सुन पड़ती है, इसके बाद प्लुरिसि

(वक्षावरक झिल्ली प्रदाह) और निमोनिया (फुसफुस प्रदाह) होकर बीमारी बहुत ही जटिल हो जाती है ; हृद्वेष्टन-प्रदाह (pericarditis) और हृदावरक झिल्लीका प्रदाह (endo-carditis) प्रभृति उपसर्ग रहनेपर रोगीको बहुत तकलीफ हुआ करती है। कितने ही रोगियोंको संन्यास होकर उनकी मृत्यु हो जाया करती है। अथवा धीरे धीरे रोग पुराने भावका हो जाता है। प्रति सप्ताह पेशाबकी रासायनिक परीक्षा करनी चाहिये।

पुरानी बीमारी।

यह दो श्रेणियोंमें विभक्त है :—

(क) Chronic Interstitial Nephritis—मूत्रपिण्ड के भीतरी क्षेत्रका प्रदाह ; इसमें संयोजक तन्तु सब बढ़कर मसानेका आयतन घटा देते हैं और वह पतला पड़ जाता है।

खासकर सन्धिवात, सारे शरीरका बात, मदात्यय और उपदंशकी वजहसे यह पैदा हुआ करता है ; यह बीमारी पौढ़ावस्थामें ही होती दिखाई देती है।

इसमें अकसर शोथ नहीं दिखाई देता, इसीलिये इसको "Dry form" अर्थात शुष्क रूपी कहा जाता है। यह एकदम अलक्षित भावसे आक्रमण करता है। कलेजा काँपना, श्वास में कष्ट और रह रह कर सर दर्द—ये ही प्राथमिक लक्षण प्रकट देते हैं।

एकाएक अन्धापन पैदा हो जाना, इस रोगका एक विशेष लक्षण है। रातके समय पेशाब बढ़ जाता है; परन्तु वह परिमाणमें अधिक रहनेपर भी पेशाबका आपेक्षिक गुरुत्व बहुत ही कम (१००२) दिखाई देता है। पेशाबमें अण्ड-लालकी मात्रा भी बहुत थोड़ी रहती है। पर hayline casts नामक कुछ सफेद झिल्लियाँ प्राप्त होती हैं। रोग जब बढ़ा रहता है तो शरीरमें अम्लरसकी अधिकता हो जाया करती है; हृत्पिण्डका आयतन बढ़ना और मस्तिष्कमें रक्तस्राव, इन दोनों भयानक उपसर्गोंकी वजहसे तुरन्त मृत्यु होती है।

रक्तपरीक्षा द्वारा युरिया (मूत्रक्षार), यवक्षारजान, इयुरिक एसिड और क्रीटिनिन (Creatinin) प्रभृति पदार्थोंका अस्तित्व उसमें है या नहीं; इसका पता लगाना बहुत ही जरूरी है और बहुत जल्द ही इनको दूर करनेका उपाय भी करना चाहिये।

(ख) Chronic Parenchymatous Nephritis—मूत्रपिण्डके अवयव और तन्तुओंका प्रदाह; मसाना साक्षात रूपसे प्रदाहित हो जाता है, पेशाबमें अण्डलाल निकलता है और सारे शरीरमें शोथ पैदा हो जाता है।

इस रोगका असली कारण आजतक जाना नहीं जा सका; अगर नयी बीमारी बहुत दिनोंतक रह जाये तो यह अवस्था हो जा सकती है। नारीकी अपेक्षा पुरुषोंपर अधिक आक्रमण होता है। प्रौढ़ावस्थाके आरम्भमें ही ये रोग लक्षण सब प्रकट होते हैं; बहुत अधिक शराब पीना, उपदंश, यक्ष्मा-रोग,

सोसेका विष प्रवेश कर जाना, पारा सेवन करनेकी वजहके दोष, इस रोगके पैदा होनेमें सहायता करते हैं।

पेशाब और लवणका निकलना घटकर सारे शरीरमें शोथ हो जाता है ; इसीलिये इस श्रेणीको wet form अर्थात "आर्द्र रूपी" कहा जाता है। चेहरा मोमकी तरह उजला, भावशून्य हो जाता है। त्वचा रूखी और सूखी, लगातार कमजोरी और दुबलापन बढ़ता जाता है ; पहले चेहरेपर शोथ होता है, और बहुत जल्द सारे शरीरमें फैल जाता है ; हृत्पिण्डका आयतन बढ़ जाता है और चक्षुपट (retina) में प्रदाह हो जाता है। ये सब लक्षण एक वर्ष तक बने रहनेके बाद मसानेका संकोचन प्रकट करनेवाले लक्षण सब प्रकट हो जाते हैं।

पहली अवस्थामें पेशाबमें बहुत अधिक अण्डलाल, दानेदार पदार्थोंका तलछट पड़ना, आपेक्षिक गुरुत्वका बढ़ना, बहुत ज्यादी सादी झिल्ली निकलना प्रभृति लक्षण दिखाई देते हैं ; दूसरी अवस्थामें—मसानेका संकोचन हो जानेपर पेशाबका परिमाण बढ़ जाता है, अण्डलालका परिमाण घटता है, और आपेक्षिक गुरुत्व घट जाता है।

इस श्रेणीकी पुरानी नेफ्राइटिस बीमारीमें भी uremia अर्थात मूत्राशय विकार पैदा हो जानेकी आशंका रहती है। मेनिञ्जाइटिस (मस्तिष्क झिल्ली प्रदाह); निमोनिया (फुस-फुस-प्रदाह) और अन्त्रावरण प्रदाह (peritonitis), होनेपर आराम होना दुःसाध्य हो जाता है।

बीच बीचमें लक्षणोंकी बहुत प्रबलता पैदा हो जाती है। इसके अलावा बहुत दिनोंतक बीमारी धीमी भी रहती है, पर सभी अवस्थाओंमें पेशाबकी परीक्षा करने पर कुछ न कुछ अण्डलाल मिलता ही है। प्रत्येक सप्ताह पेशाबकी परीक्षा कराते रहना चाहिये।

चिकित्सा।

पानी खूब अधिक पीना चाहिये। अभ्यासके अनुसार नहाना चाहिये। नहानेके समय सूखी तौलिया या झाड़नसे शरीरको खूब घसना चाहिये। चर्मके ठीक ऊपर ही लानेल या पशमी वस्त्र पहनना चाहिये और शरीरको हमेशा गर्म कपड़ेसे ढके रखना चाहिये; जिसमें शरीरका उत्ताप नहीं घट जाये। शारीरिक और मानसिक परिश्रम एकदम त्याग देना चाहिये।

प्रधान पथ्य गायका दूध है; सम्भव हो तो केवल गायका दूध पीना चाहिये। किसी किसीको छानाके पानीसे भी फायदा होता है। उत्तेजक खाना-पीना, मांस, मुर्गी या हँसका अण्डा इत्यादि यवक्षारजान मिले पदार्थ खाना एकदम मना है।

फेरम-फास।—मसानेमें प्रदाहके कारण दर्द और ज्वर-इस दवासे दब जाता है।

कैल्केरिया-फास।—गहरे रङ्गका पेशाब; बहुत अधिक पेशाब और उसमें अण्डलालकी अधिकता; इस

नमकके साथ पर्याय-क्रमसे "कैलि-फास" प्रयोग करनेपर बहुत जल्द आरोग्य होता है। कैल्केरिया-फास्फोरिका लवणके साथ जीव-देहके अण्डलालका सम्बन्ध रहता है और इस लवणके परमाणु और क्रिया कम हो जानेपर, अण्डलाल अलग होकर पेशाबके साथ शरीरसे निकला करता है।

कैलि-सल्फ।—छोटी माता, खसड़ा, आरक्त ज्वर प्रभृति चर्म-रोगके बादवाले अण्डलालवाही मूत्र-रोगमें इस लवणसे बहुत अधिक फायदा होता है। हजारों स्थानोंमें इससे फायदा होता देखा गया है।

नेट्रम-म्यूर।—मसानेमें दर्द और खोंचन मालूम होना। ईंटके चूरकी तरह तली जमा करती है; खून-मिला पेशाब। इस दवामें पेशाबसे अण्डलालका निकलना घटाने और युरिया बढ़ानेकी शक्ति है। बहुतसे जानकार चिकित्सक अन्यान्य औषधोंके साथ पर्याय-क्रमसे नियमित रूपसे इसका प्रयोग किया करते हैं।

कैलि-फास।—स्नायविक दुर्बलताके साथ, परिमाण और संख्यामें पेशाबकी अधिकता, मूत्राशय पेशीकी कमजोरीकी वजहसे पेशाबको रोक न सकना; फिफड़ेका शोथ; हृत्पिण्डका सविराम स्पन्दन।

नेट्रम-फास।—पाचन-क्रियामें विकार, अम्लकी अधिकता; बार-बार पेशाब: पेशाबका वेग रोक न सकना; पथरी।

नेट्रम-सल्फ ।—यह लवण पेशाब बढ़ा देता है और पथरी बाहर निकाल देता है।

———

रजःरोध ।

(Amenorrhoea)

रजःलोप और रजःरोध दो विभिन्न अवस्थाएँ हैं ; जब किसी बाहरी कारणकी वजहसे नारीका स्वाभाविक मासिक ऋतु-स्राव रुक जाता है उस समय वास्तवमें उसे **रजःरोध** कहा जाता है। पर जब शारीरिक क्रियाकी गड़बड़ीकी वजहसे ऋतु-स्रावका होना स्थायी रूपसे बन्द हो जाता है, तब उस अवस्थाको **रजःलोप** कहा जाता है।

"ऐमोनोरिया" साधारणतः दो श्रेणियोंमें विभक्त किया जाता है। **परमलुप्त रजः**, इसमें रजःस्राव होना एकदम बन्द हो जाता है और **आपेक्षिक** लुप्त-रजः, इसमें स्त्री गर्भवती होनेके समय जिस नियम और परिमाणसे हर महीने ऋतुमती होती है, वह रुक जाता है अर्थात—ऋतु-स्राव परिमाणमें बहुत थोड़ा होता है और समयमें भी कम हो जाती है।

(क) शारीरिक-क्रिया-घटित रजःरोध ।—नीचे लिखे कारणोंसे स्त्रियोंका ऋतु-स्राव होना रुक जाता है :—

१। पहली बार ऋतु-दर्शनमें विलम्ब।— गर्भवती होनेके बाद और समय और परिमाणकी भी शृङ्खला नहीं रहती।

२। गर्भावस्था; बच्चा जब माताके स्तनका दूध पीता रहता है, बहुत जगह ऐसा होता है, कि जबतक बच्चेका स्तन पीना नहीं रोक दिया जाता है, तबतक महीना जारी नहीं होता। स्तन-पिलानेवाली माताके स्तनका दूध बन्द होनेपर, इस बातका सन्देह किया जा सकता है, कि फिर गर्भवती हुई हैं।

३। वयः परिवर्त्तन; अर्थात—प्रौढ़ावस्थाके अन्तिम भागमें ऋतुका एकदम बन्द हा जाना। इसे Menopause कहते हैं।

४। डिम्बाशयमें नश्तर लगाना। नश्तर लगवाकर डिम्बाशय काट देने बाद सैंकड़े ३० स्त्रियोंको उसी समय ऋतु होना बन्द हो जाता है और बाकी स्थानोंमें २ महीनेसे ६ महीनेके भीतर धीरे-धीरे लोप होता है।

(ख) आमयिक रजःरोध।—वास्तवमें यही असली रजोरोध है।

नीचे लिखे कारणोंसे यह अवस्था होती है:—

१। शैत्याधिक्य—एकाएक सर्दी लगकर ऋतु-स्राव रुक जा सकता है।

२। सारे शरीरकी कमजोरीकी अधिकता।

३। सब तरहकी रक्ताल्पता, खासकर chlorosis हरित्-पाण्डु-रोग।

४। यक्ष्मा-रोग।

५। मनके ऊपर कोई जोरका आघात, शोक, दुश्चिन्ता।

६। अन्त-स्रावी ग्रन्थिका (ductless glands) रोग।

७। योनि, जरायु प्रभृति जनन-यन्त्रकी विकलता या अपूर्णता।

८। जरायु-मुख या योनि-पथकी निश्छिद्रता ; बिना टूटा सतीच्छद ; रोकनेवाला अर्बुद, प्रभृति आदि-भौतिक रुकावटें।

चिकित्सा।

ज्यादा सर्दी लग जानेकी वजहसे रजोरोध हो जानेपर, ऋतु-कालके कुछ दिन पहलेसे ही रोगिनीको रोज़ गर्म पानीसे भरे टबमें कमरतक डुबोकर आध घण्टे तक बैठा देना चाहिये, इस पानीमें थोड़ी-सी राईकी बुकनी मिला देनी चाहिये। जब खूनकी शरीरमें कमी आ जाये और कमजोरी आ जाये, तो पौष्टिक भोजनकी बहुत अधिक जरूरत होती है। चित्तमें आनन्द बनाये रखना बहुत जरूरी है।

नेट्रम-म्यूर।—यह युवती स्त्रियोंके लिये बहुत ही फायदेमन्द दवा है। पहली बार ही मासिक ऋतु-स्राव होनेमें देर या बहुत थोड़ा स्राव और बहुत देरसे मासिक

ऋतु-स्राव होता है। किसी-किसी स्थानपर दो-दो तीन-तीन महीनेका अन्तर देकर ऋतु होता है।

कैल्केरिया-फास।—रक्तकी कमीके कारण रजोरोध; दुबली-पतली स्त्री; प्रेमके बदलेमें प्रेम न प्राप्त करनेके कारण मनका सुस्त पड़ जाना; अण्डलालकी तरह स्राववाला प्रदर।

कैलि-म्यूर।—यकृतका क्रिया-विकार; सफेद लेपचढ़ी जीभ; ग्रन्थियोंका निश्चेष्ट बना रहना।

कैलि-सल्फ।—बहुत थोड़ा या रुका हुआ मासिक ऋतु-स्राव, तलपेटमें भार और भरापन मालूम होना।

कैलि-फास।—रजोरोध, चित्तकी सुस्ती, कमजोरी, आलस्य; रजोरोधकी वजहसे कलेजा धड़कना और श्वासमें कष्ट हो जाता है। प्रौढ़ावस्थामें ऋतुका एकदम बन्द हो जाना और इसी वजहसे नाना प्रकारके स्नायविक और शारीरिक उपसर्ग पैदा हो जाना।

रक्ताल्पता।

(Anæmia)

शरीरमें खूनकी मात्राका घट जाना या उसके श्रेष्ठ उपादान लाल कणोंका घट जाना। रक्ताल्पता दो प्रकारकी दिखाई

देती है।—(क) क्रमसे बढ़नेवाली मुख्य रक्ताल्पता और (ख) गौण रक्ताल्पता।

(क) मुख्य और क्रमसे बढ़नेवाली रक्ताल्पता ।—यह बीमारी अधिककर पुरुषोंको होती है; पर स्त्रियोंमें गर्भवती स्त्रियोंको भी होती देखी जाती है। पुरुषोंको ३४ से ४० वर्षकी उमरमें यह बीमारी आरम्भ होती है और एकाएक ही पैदा हो जाती है। कमजोरी तो दिनो-दिन बढ़ती जाती है, पर शरीरमें मांस रहता है और वह शिथिल तथा थुलथुला दिखाई देता है। इसीलिये, रोगीके सगी-सम्बन्धियोंको रोगका प्रभाव समझमें नहीं आता ; इसका परिणाम इतना बुरा है, कि इसको pernicious anemia (मारात्मक रक्ताल्पता) कहते हैं।

शरीर, मन और पेशियोंकी कमजोरी ; कलेजा काँपना—इस रोगका बहुत साधारण लक्षण है। लगातार शरीरकी आकृति सफेद पड़ती जाती है, कुछ पीली आभा लिये कागजी नीबूकी तरह रङ्ग हो जाता है। सौमें—७५ रोगियोंको कुछ-न-कुछ बोखार बना रहता है। गरमी १००—१०० डिगरीतक चढ़ती है। रोगकी गति विराम-शील अर्थात रुक-रुककर बढ़नेवाली होती है, पर इस विरामावस्थामें भी megoblast नामक बड़ी रक्त-कणिकाओंकी एकदम कमी हो जाती है।

नाड़ी कोमल, लचीली, उछलती हुई और सहजमें ही उत्तेजित हो जाती हैं।

भूख न लगना,—इस बीमारीका एक बहुत बड़ा लक्षण है—रोगी बिलकुल ही खाना नहीं चाहता; वमन और पाकाशयमें दर्द होता है; किसी-किसी रोगीको वमन नहीं होता; हाथ-पैरमें झुनझुनी होती है; असह्य स्नायु-शूल। हृत्पिण्डका आयतन बढ़ना और पाकाशयका आयतन घट जाना; ये दोनों उपसर्ग प्रकट होनेपर रोग जटिल हो पड़ता है।

(ख) गौण (Secondary) रक्ताल्पता।

—पुष्ट भोजनकी कमी, बहुत ज्यादा खूनका निकल जाना; शुक्रका क्षय, सान्निपातिक या टाइफायड ज्वर और अन्यान्य कड़ी बीमारियोंके बादके उपसर्ग, प्रसवके बादके उपसर्ग; पेटका अर्बुद इत्यादि इस बीमारीकी उत्पत्तिके कारण है। बहुत दिनोंतक मैलेरिया भोगनेके कारण भी रक्ताल्पताकी बीमारी पैदा हो जाती है।

क्रमसे बढ़नेवाली कमजोरी और दुबलापन, सरमें चक्कर आना, नींद न आना, कानमें नाना प्रकारकी आवाजें, पाचनका विकार, कब्जियत या पतला दस्त आना, हृत्पिण्डकी क्षीण आवाज, तलहत्थी और जीभका खूनसे रहित और सफेद रङ्गका हो जाना, नखका सफेद नीली आभा लिये रङ्ग, हाथ-पैरकी ठण्डक और चरमावस्थामें मुख-मण्डल और हाथ-पैरोंमें शोथ पैदा हो जाता है।

चिकित्सा ।

विश्राम, लघु और पुष्ट भोजन, खुली हवामें घूमना, स्वास्थ्यकर स्थानमें रहना, आबहवाका बदलना, चित्त सदैव प्रसन्न रखना, नदीका पानी या गरम पानी ठण्डाकर कुछ सुसुम रहते ही उस पानीसे या धूपमें गरमाये पानीसे नहाना, साफ-सुथरे रहना—इस रोग-चिकित्साका प्रधान अवलम्बन है। शरीर हमेशा ढके रहना चाहिये, जिसमें सरदी न लग जाये।

गर्भिणी और अन्य रोगियोंकी चरमावस्था आ जानेके पहले ही transfusion of blood अर्थात स्वस्थ और बलिष्ठ व्यक्तिका रक्त लेकर रोगीके शरीरमें प्रवेश करा देनेपर बहुत ज्यादा फायदा होता है।

इस रोगमें बार-बार रक्तकी परीक्षा करानेकी जरूरत पड़ती है।

रक्ताल्पताका मुख्य कारण है,—कैल्केरिया-फास और फेरम-फास, इन दोनों लवणके परमाणुओंका घट जाना और इसीसे क्रमसे दूसरे-दूसरे लवणके परमाणु भी ध्वंस-प्राप्त हो जाते हैं; शरीरमें रक्तके कणका (red blood cells) की कमीके कारण साक्षात-रूपसे कैल्केरिया-फासकी कमी ही जवाबदेह है। इसके अलावा शरीरमें हिमोग्लोबिन (जिससे रक्तका रङ्ग लाल होता है) पदार्थकी कमी हो जानेकी वजह,—फेरम-फास लवणका कम हो जाना है। अगर लक्षणके

अनुसार उपयुक्त लवणका प्रयोग किया जाये तो बहुत जल्द रक्त स्वाभाविक अवस्थामें आ जा सकता है।

कैल्केरिया-फास।—नये रक्त-कोषके बननेमें यह सहायता करता है। सफेद या हरित्पाण्डु रोग, पोषणकी कमीके कारण रक्ताल्पता; रक्तके उपादानोंमें श्वेत-कणकी अधिकता हो जानेपर; कोई क्षय करनेवाली बीमारी या कमजोरी लानेवाले रोगके बाद यह लवण बहुत ज्यादा काम करता है। सांघातिक (pernicions) रक्ताल्पतामें, बैठे-रहनेके बाद उठनेकी चेष्टा करनेपर ही सरमें चक्कर आ जाता है; आँखोंके आगे धुँधलापन छा जाता है; चेहरेपर पसीना ज्यादा होता है; शरीर ठण्डे पसीनेसे तर रहता है; स्वाद बिगड़ा और मुँहमें बदबू रहती है। पेशाबमें रूईकी तरह तली जमती हैं। उदरामय, दिन या रातके समय पाखाना होनेके बाद, कूथनका वेग रहता है। जरायुसे रक्त-स्राव, हृत्कम्पन, सुस्ती।

फेरम-फास।—ऊपर लिखे लवणका प्रयोग करनेके बाद विशेष लाभदायक—कैल्केरिया-फासके द्वारा रक्त-कोष तैयार हो जानेके बाद, फेरम-फास, रक्तकी उस कमीको पूरा कर देता है, जो रक्तमें हिमोग्लोबिनकी कमीके कारण पैदा हो जाती है। खासकर, इस फेरम-फास लवणके द्वारा ही फेफड़ा और तन्तुओंसे कार्बोनिक-एसिडका निकालना और आक्सिजनको भरनेका काम हुआ करता है।

नेट्रम-म्यूर ।—हरित्पाण्डुकी अवस्था ; पानीकी तरह रक्त पतला हो जाता है, जमता नहीं है। युवतियोंकी जवानी आनेके समयकी रक्त-हीनता (क्लोरोसिस—हरित्पाण्डु रोग), ऋतु-दर्शनमें विलम्ब या पुष्पवती होनेके बाद अनियमित मासिक ऋतु ; त्वचाका रङ्ग मैला ; मुर्देकी तरहका रङ्ग ; जीभ साफ अथवा चिकना लसदार लेप-चढ़ी ; अगले भागमें छोटे-छोटे छाले ; कब्जियत और मनकी सुस्ती बनी रहना।

कैलि-फास ।—बहुत दिनोंतक मानसिक परिश्रम करनेके बाद मनकी सुस्ती आ जाना और खूनकी कमी, कड़ी कमजोरी लानेवाली बीमारीके बाद ही कशेरुकाओंसे उत्पन्न (spinal) खूनकी कमी। मस्तिष्ककी रक्ताल्पतामें भी यह फायदा करता है।

कैलि-म्यूर ।—रक्ताल्पताके साथ एकजिमा, खुजली, खसड़ा प्रभृति चर्म-रोग। कैल्केरिया फासके साथ पर्याय-क्रमसे इसका व्यवहार करना चाहिये।

नेट्रम-सल्फ ।—कफ-धातुवाला रोगी ; प्रमेह दोष ; शोथ हो जानेका लक्षण ; तर जगहमें रहना या जलीय भूमिके पास रहनेकी वजहसे बीमारीका पैदा होना या बढ़ना।

नेट्रम-फास ।—रक्ताल्पताके साथ अजीर्ण-दोष, अम्लकी अधिकता ; इसके द्वारा खाने पीनेकी सामग्री पचने

और शरीरकी बाढ़में सहायता मिलती है। पर्यायक्रमसे केल्केरिया-फासका व्यवहार करना आवश्यक है।

साइलिसिया।—बच्चोंकी पोषणकी कमीके कारण रक्ताल्पता; दुबले, कमजोर और खर्व आकृतिवाले रोगी। इस लवणके साथ पर्यायक्रमसे लक्षणके अनुसार अन्यान्य लवणोंका प्रयोग करना उचित है।

रोगीका विवरण।

रोगिनी एक कालेजमें पढ़ती थी; उमर २१ बरस, १९२५ ईस्वीमें I. S. C. परीक्षा देनेके बाद इलाज करानेके लिये आयी। बहुत दुबली, पीली, बहुत ज्यादा सर-दर्द और कब्जियत। रजस्राव अनियमित होता था, दो दो तीन तीन महीने तक वह रहता था और फिर एकाएक बहुत ज्यादा स्राव होने लगता था। आँखके निचले अंशमें काली रेखा। कमरमें तीन चार जगह रुपयेके आकारका सूखा एकजिमा।

पहले एक पक्षतक पर्यायक्रमसे फेरम-फास और केल्केरिया फासका प्रयोग किया गया। इससे बहुत फायदा हुआ। इसके बाद फेरम-फास बन्दकर, उसकी जगहपर केलि-म्यूरका प्रयोग किया गया। इसीसे रोगिनी एकदम आरोग्य हो गयी।

धमनीका प्रसारण या सूजन।

(Aneurysm)

धमनी गात्रके एक या एकसे अधिक प्राचीर तन्तु फैल जाते हैं और इसी वजहसे सूजन पैदा हो जाती है। कमजोरी, चोट या चर्बीका घटना प्रभृतिकी वजहसे धमनी फट जाती है या धमनी गात्रमें छेद हो जाता है, पासके तन्तुओंकी जगहपर खून रुक जाता है, और इसीलिये इस जगह पर सूजन पैदा हो जाती है।

हमेशा कितने ही विशेष स्थानोंकी धमनियोंमें ऐसी अवस्था उत्पन्न हो जाती दिखाई देती है, जैसे—हृत्पिण्डकी वृहद्धमनी (aorta), घुटनेके पीछेके ओरके गासेके बीचकी धमनी (popliteal aneurysm), पुट्ठेकी धमनी (femoral aneurysm); कण्ठास्थिके निम्न-प्रदेशकी धमनी (sub-clavian aueurysm); बगलकी धमनी (axillary aneurysm)

एक साथ बहुत देरतक घुड़सवारी करना या साइकिलपर चढ़ना; भारी चीज उठाना; बहुत अधिक व्यायाम; तेज क्रोध; बहुत ज्यादा शराब पीना; उपदंश दोष; पारा मिली दवाके द्वारा चिकित्सा; धमनीके प्राचीर तन्तुकी बहुत ज्यादा सूक्ष्मता; विशिष्ट धातुगत प्रवणता; इन कारणोंसे रोग उत्पन्न हो जाता है। पुरुषोंको ही यह बीमारी होती दिखाई देता है।

चिकित्सा ।

कठिन परिश्रमवाले काम, मानसिक उद्वेग, उत्तेजना और दुश्चिन्ता एकदमसे त्याग देना चाहिये । किसी तरहका उत्तेजक पानीय सेवन मना है, जलीय पतले पदार्थ बहुत कम पीना उचित है; श्वेत-सार मिले खाद्य, शस्यका चूर्ण, आंटा, मैदा, चीनी और मिठाई खाना मना है। रक्तके सौत्रिक तन्तु (febrin) को बढ़ानेवाली भोजन सामग्रीका खाना ही इस रोगमें सबसे अच्छा पथ्य है ।

फेरम-फास ।—इसमें रक्त-प्रवाहकी गति स्वाभाविक हो जाती है, हृद्पिण्डके बहुत अधिक संचालनकी वजहसे पैदा हुए नाना प्रकारके उपसर्ग इस लवणसे दूर हो जाते हैं। इस लवणका रोगके प्रारम्भमें ही प्रयोग करना उचित है।

कैल्केरिया-फ्लुयोरके साथ पर्यायक्रमसे प्रयोग करनेपर ज्यादा फायदा होता है ।

कैल्केरिया-फ्लुयोरिका ।—अगर ऐलोपैथिक मत से पोटासियम आयोडाइडका सेवन न कराया गया हो, तो यह नमक रोगके आरम्भमें ही प्रयोग करनेपर रोगकी गति रूक जाती है, और फैलना और सूजन घट जाती है, इस रोग की चिकित्साकी यह सबसे उत्तम दवा है। ऊपर कही दवा के साथ पर्यायक्रमसे प्रयोग करना चाहिये ।

———

हृत्शूल ।

(Angina Pectoris)

हृदयन्त्रकी महा धमनीके गात्रसे उत्पन्न coronary arteries नामक दोनों धमनियोंकी बीमारीकी वजहसे कभी कभी गहरी यन्त्रणाके साथ शूलका दर्द दिखाई देता है। प्राय: ४० वर्षकी उमरके बाद इस बीमारीका आक्रमण होता है। इसके पहले होनेपर, उपदंश दोषकी खोज करना आवश्यक है।

इसका आक्रमण तीन श्रेणीका दिखाई देता है। जैसे—

(क) हलका आक्रमण ।—मृदुभाव, वक्षोस्थिके (sternum) नीचे बेचैनीकी तरह मालूम होना, दबाव मालूम होना, तकलीफ, उद्विग्नता, चेहरा कुछ हलका पीलापन लिये या मूर्च्छाका भाव। इस अवस्थामें ठीक शूलका दर्द नहीं होता, वक्षोस्थिके नीचे एक खिंचावकी तरह मालूम होता है, रोगी अपनी तकलीफकी जगह ठीक ठीक नहीं बता सकता, और इनमें दर्दका ठीक ठीक स्थान और उसका फैलना समझमें नहीं आता। बहुत ज्यादा शारीरिक या मानसिक परिश्रमकी वजहसे शरीरका क्षय होना आरम्भ हो गया है—इस बातकी यह आरम्भिक सूचना है।

(ख) लघुशूल ।—(angina minor) बहुत ज्यादा जर्दा और तम्बाकू खानेवाले या बहुत ज्यादा धूम्रपान

करनेवालोंको यह बीमारी होती है। स्नायु-प्रधान मनुष्योंपर ही इसका आक्रमण होता है और ज्यादाकर स्त्रियों को होता है। एकाएक कलेजेमें दर्द उठता है, और बायें बाहुमें फैल जाता है; यह लघु शूल मारात्मक नहीं होता।

(ग) कठोर शूल।—(angina major) इसमें दो कारण आशंकाके रहते हैं :—(१) हृत्पिण्ड और धमनियोंकी यान्त्रिक बीमारी; (२) एकाएक मृत्यु की सम्भावना। इसका उत्तेजक कारण सहजमें ही पकड़में नहीं आता; ज्यादा परिश्रम, उद्वेग, उदरमें वायुकी अधिकता इत्यादि।

आक्रमणके लक्षण :—

वक्षस्थलमें भयानक यन्त्रणादायक दर्द; ऐसा मालूम होता है, मानो कोई हृत्पिण्डको चिमटेसे दबा रहा है।

गर्दन और बाँएँ बाहुमें दर्द फैल जाता है।

चेहरा पीला और बहुत ज्यादा पसीना होता है।

उद्वेग और बेचैनी; तुरन्त मृत्यु हो जानेका भय।

नाड़ीका तनाव बहुत थोड़ा बढ़ता है।

कई क्षण ही यह भाव रहता है; इसके बाद डकार; बार बार पेशाब और सुस्ती पैदा हो जाती है।

चिकित्सा।

एकदम विश्राम करना चाहिये। वक्षमें, गर्दनमें और पैरकी पोटलीमें सरसोंकी पट्टी (mustard plaster) का प्रयोग किया जाता है। रोगीका बोलना बन्द कर देना चाहिये,

उसको इशारेसे अपनी बातें रोगीको बतानी चाहियें; रोगीके कमरेमें सेवा करनेवाले और चिकित्सकके सिवा और किसीको न जाना चाहिये। शूलका दर्द दब जानेके बाद भी रोगीके लिये सीढ़ी चढ़ना, ऊँचे स्वरसे बोलना, गाना, बाजा बजाना, टाइपराइटर यन्त्रमें काम करना, बाइसाइकल पर चढ़ना, बैल गाड़ीपर चढ़ना या घुड़सवारी करना, पहाड़ी जगहोंमें भ्रमण, दौड़ना, भारी चीजें उठाना, बहुत तेजीसे कोई काम करना, तेजीसे चलना त्याग देना चाहिये। रोगीको कभी भारी चीजें न खाना चाहिये। शराब आदि उत्तेजक पदार्थ सेवन न करना चाहिये, धूमपान यथासम्भव घटा देना चाहिये, तम्बाकू या जर्दा खाना छोड़ देना चाहिये, मांस, अण्डा, पकी मछली, मिर्चा, गरम मसाला, चाय, काफी इत्यादिसे बहुत हानि होती है, हलकी और सहजमें पचनेवाली चीजें देना चाहिये, खुली हवामें बैठना चाहिये, जी लगनेके लिये ऐसी पुस्तकें पढ़नी चाहियें जिसमें मस्तिष्कमें ज्यादा जोर न पड़े, पर नाटक या उपन्यास न पढ़ना चाहिये। जितना सहन हो उतना स्नान करना चाहिये।

मैग्नेशिया-फास।—स्नायविक आक्षेप; तेज दर्द। वक्षमें संकोचनकी तरह दर्द, यह नमक गर्म पानीमें गलाकर १० मिनिटके अन्तरसे प्रयोग करना चाहिये।

कैलि-फास।—ज्यादा कमजोरी; हृत्पिण्डकी क्रिया क्षीण और हृद्स्पन्दनका ठीक ठीक न होना; बेहोशी

आ जानेका लक्षण। मैग्नेशिया फासके साथ पर्यायक्रमसे प्रयोग करना चाहिये।

फेरम-फास।—शूलके दर्दके साथ चेहरा लाल, माथेमें रक्तकी अधिकता, ज्वालामय उत्ताप। मैग्नेशिया फास के साथ पर्यायक्रमसे प्रयोग करना चाहिये।

———

स्वर-लोप।

(Aphonia)

[स्वरभङ्ग—Hoarseness देखिये]

गायक, वक्ता, और कत्थकोंको यह बीमारी अकसर हुआ करती है। ऊँची आवाजमें चिल्लानेपर, परिश्रम करनेके बाद, शरीर गरम रहते रहते बरफका पानी सेवन करने पर, एकाएक सर्दी लगकर भी यह उपसर्ग पैदा हो जा सकता है।

चिकित्सा।

फेरम-फास।—बहुत देरतक संगीत या वक्तृता देनेके बाद स्वरलोप, गलेमें दर्द, अन्धड़-पानीमें भींजनेके कारण सर्दी लगकर या पानीमें भींजनेपर स्वरलोप ; बार बार खखारनेकी जरूरत पड़ती है।

कैलि-म्यूर ।—सर्दी लगकर स्वरभङ्ग, स्वरलोप, गला भारी, यदि इस दवासे आराम होनेमें देर हो तो इसके साथ पर्यायक्रमसे कैलि-सल्फका प्रयोग करना चाहिये ।

सन्धिवात ।

(Arthritis)

इस रोगका साधारण नाम Gout (गाउट) या गठिया वात है ।

इसको साधारणतः नीचे लिखी तीन श्रेणियोंमें विभक्त किया जा सकता है :—

(१) Rheumatoid Arthritis (Rheumatic Gout)—यह एक साथ ही बहुत सी सन्धियोंपर आक्रमण करता है, खासकर हाथकी अंगुली, कलाई और घुटने पर इसका आक्रमण होता है ; स्कन्ध सन्धिपर भी रोगका आक्रमण हो जाता है, कितने ही स्थानोंमें रोग एक सन्धिसे पहले आरम्भ होता है, एक सन्धिके आराम होते न होते दूसरीपर आक्रमण हो जाता है। सन्धिवात रोगमें, सन्धिमें एक तरहका पानी गिरता है और वह अधःपतित पदार्थ गाढ़ा और कड़ा होकर रोगवाले अङ्गका हिलना रोक देता है और क्रमसे अङ्ग (हाथ, कलाई, सब अँगुलियाँ) टेढ़ी हो जाती हैं, इसीलिये इसको अष्टावक्र वात कहते

हैं। अङ्गरेजीमें इसको Deforming Rheumatism कहते हैं।

(क) रोगवाली सन्धिके ऊपरका चर्म घोर लाल रङ्गका हो जाता है। सन्धिके चारों ओर घेरकर और संयोजक पेशीके चारों ओर सूजन हो जाती है।

(ख) इस रोगमें पेशियोंका आक्षेप नहीं दिखाई देता।

(ग) शरीर हिलानेपर बहुत दर्द होता है।

(घ) रोगवाले अङ्गमें बहुत दर्द, छूना असम्भव हो जाता है।

(ङ) ज्वर रहता है, और बहुत ज्यादा खट्टा पसीना होता है।

(च) वात ज्वरके साथ स्थानिक प्रदाह हो जाता है, और २४ घण्टोंमें ही दर्द और तकलीफ चरमावस्थापर जा पहुंचती है। अस्थियोंके गठनमें विकार साधारणतः होता नहीं दिखाई देता। हृत्पिण्डकी रसस्रावी झिल्ली (endocardium) पर रोगका आक्रमण होकर असह्य यन्त्रणादायक वातज प्रदाह (rheumatic endocarditis) पैदा हो जाता है और हृत्क-पाटके गठनमें भी परिवर्त्तन होता देखा जाता है। यह रोग स्त्रियोंको अधिक होता है।

(२) गोनोरियल आर्थ्राइटिस।—(प्रमेह दूषित वात)—इसमें ऊपर लिखी श्रेणीके वातसे प्रायः सभी लक्षण मौजूद रहते हैं। थोड़ा थोड़ा ज्वर भी रहता है; कन्धा और

जबड़ेकी सन्धियोंपर भी रोगका हमला होता दिखाई नहीं देता है।

(ख) पुरुषोंका नये मूत्र-नली प्रदाहके साथ इसका आविर्भाव होते देखा जाता है।

(ग) फूले हुए तन्तुओंमें साफ तरल रस पाया जाता है। पीव नहीं पैदा होता।

(घ) X-Rays का प्रयोग करनेपर यदि हड्डी क्षय हुई दिखाई दे तो उस क्षय रोगवाली हड्डीमें वह सभी जगह सम भाव से मौजूद रहता है।

(३) **Pyogenic Arthritis** (पीव दूषित वात)

(क) लाल रङ्गका चमड़ा; सन्धियोंमें फोड़ा पैदा होनेकी वजहसे दबानेपर पीव पैदा होनेवाली तरङ्ग अनुभव की जाती है। पिचकारीसे पीव खींच लिया जाता है।

(ख) सन्धि स्थान कोमल और ढीला; हिलना रुका हुआ; पैशिक बन्धनोंके क्षय हो जानेकी वजहसे हड्डीके मुँह सब खुल जाते हैं। इसीलिये हिलानेमें गड़बड़ी नहीं होती।

(ग) पीव ज्वरका लक्षण वर्त्तमान रहता है; शीत, कम्प और पसीना हुआ करता है।

(घ) सारे शरीरमें पीवका दोष पैदा हो जानेपर, कितनी ही सन्धियोंमें फोड़ा पैदा हो जाता है; परन्तु अस्थि मज्जाके प्रदाहकी वजहसे अगर पीव फैल गया है, तो उसके पासकी एक ही सन्धिमें फोड़ा उत्पन्न होता है।

(ङ) पाइमियाका भावी फल अच्छा नहीं होता।

(च) फोड़ा स्वयं फटकर पीव निकल सकता है अथवा उसका गाढ़ापन और संलग्नताकी वजहसे सन्धि लोप प्राप्त हो जाती है। हड्डी अपनी जगहसे हट जाती है और विकृत हो जाती है।

अष्टावक्र वात स्त्रियोंपर बहुत अधिक आक्रमण करता है। बार बार बहुत बार गर्भधारण, बहुत दिनोंतक स्तन पिलाना, गीला कपड़ा पहने रहना, स्वास्थ्यका नियम पालन न करना, रजःलोप इत्यादि उसके कारण है। पिता मातासे ही यह व्याधि आया करती है। तर जमीनवाले मकानमें रहनेपर यह रोग अकसर आक्रमण करता है। परिश्रम करने बाद बहुत ज्यादा पसीना-होनेपर खुली हवामें खड़े होना या बिजलीके पंखेके नीचे खड़े होकर पसीना बन्द करनेपर वात-रोग होनेकी सम्भावना खूब अधिक रहती है।

ऊपर लिखा तीन श्रेणीका सन्धि-वात बार-बार आक्रमण करता है, फिर धीरे धीरे पुराने जीर्ण-रोगमें परिणत हो जाता है।

वाह्य-प्रयोग।—उत्तम रूई रोगवाले अङ्गके ऊपर ढीला भावसे बाँधकर उसपर एक टुकड़ा फ्लैनेल भी ढीले भावसे लगा देना चाहिये और सेफ्टी-पिनसे कस देना चाहिये। सेफ्टी-पिन न रहनेपर किसी धोती वगैरहके किनारेसे कसकर बाँध देना चाहिये। दबानेपर रोगी सहन नहीं कर सकेगा; कितने ही स्थानोंपर लवण या भूँसीका

सेंक देनेपर रोगीको बहुत आराम मालूम होता है। सेंकनेके बाद रोगवाली जगहपर तुरन्त रूईसे बाँध देना होगा।

इस रोगकी तकलीफ इतनी अधिक रहती है, कि आराम पानेके लिये रोगी पागल हो उठता है। उस समय यदि कोई उससे कहे, कि साँपका विष या सड़ा चूहा खानेपर आराम होगा तो वह, वह भी खानेके लिये तैयार हो जाता है। इसीलिये स्वदेशी और विदेशी पेटेण्ट औषध तैयार करनेवाले सुयोग देखकर आडम्बर-भरे बहुतसे विज्ञापन छपवाते हैं और इन सब भाग्यहीन रोगियोंको उनकी गोलियाँ तथा मालिशकी दवाएँ व्यवहार करा, बहुत धन उपार्जन करते हैं; पर इन सब दवाओंसे सैंकड़े एक भी रोगीको एकदम आरोग्य होते नहीं देखा जाता है। सामयिक कुछ थोड़ी देरके लिये भले ही आराम मिल जाये, पर उसके बादका आक्रमण और भी कष्टकर तथा यन्त्रणादायक हो जाता है।

चिकित्सा।

फेरम-फास।—रोगका आरम्भ होते ही इसका प्रयोग करना चाहिये। ज्वर, सन्धियोंमें इतना दर्द कि जरा भी हिला नहीं सकता; चमड़ा लाल; स्थिर-भावसे रहनेपर तकलीफ घट जाती है। हिलनेकी चेष्टा करनेपर तकलीफ पैदा हो जाती है, बल्कि तकलीफ बढ़ जाती है। रोगके आरम्भमें थोड़ी-थोड़ी देरके अन्तरसे बार-बार प्रयोग करनेपर जल्द ही आरोग्य हो जाता है। बादवाली अवस्थामें दूसरी-

दूसरी उपयोगी दवाके साथ इस दवाका पर्याय-क्रमसे प्रयोग किया जाता है। मरमर-शब्दवाला सन्धि-बन्धनका प्रदाह।

कैलि-म्यूर।—नया सन्धि-वात, रोगवाली जगह फूली, जीभ सफेद मैलसे ढकी, हिलने-डोलनेपर तकलीफका बढ़ना। फेरम-फासके साथ या बाद यह ज्यादा फायदा करता है।

कैलि-सल्फ।—दर्द एक जगहसे दूसरी जगहपर चला जाया करता है। "चलने-फिरनेवाला वात"। गर्म प्रयोगसे दर्दका बढ़ना। सफेद अर्बुद, सूजन, पर प्रदाहका न रहना।

मैग्नेशिया-फास।—तकलीफकी तेजी रहनेपर,—दूसरी-दूसरी दवाके साथ बीच-बीचमें गरम पानीके साथ प्रयोग करनेपर आराम मिलता है। अकड़न-भरी बहुत अधिक तकलीफ़।

नेट्रम-म्यूर।—पुराना वात-रोग, सन्धियोंके हिलानेपर मरमर शब्द होता है। जानु-सन्धिका प्रदाह, ऊरु-देशके पीछे बेहद दर्द। नेट्रम-म्यूर निर्देशक जीभ देखकर इसका प्रयोग करना चाहिये।

नेट्रम-फास।—पुराना अष्टावक्र वात, खट्टी गन्ध लिये बहुत ज्यादा पसीना; पेशाबका रङ्ग घोर लाल; हृद्-यन्त्रपर एकाएक वातका आक्रमण हो जाता है। हाथकी

अंगुलीकी सन्धियोंपर रोगका आक्रमण हो जाता है ; नये आक्रमणमें फेरमके साथ पर्य्याय-क्रमसे प्रयोग करना चाहिये।

नेट्रम-सल्फ ।—पैरका नया और पुराना वात, नये वातमें इस लवणके साथ फेरम-फासका प्रयोग करना उचित है ; पर पुराने वातमें केवल इसी लवणके प्रयोगसे खासा फायदा होता है। पेशाब घोर लाल, हाथकी अंगुलियोंकी सन्धियोंपर रोगका आक्रमण, हृद्-यन्त्रमें एकाएक दर्द पैदा हो जाता है।

कैल्केरिया-फ्लुयोरिका ।—हाथकी अंगुली की सन्धियाँ सब फूलीं और कड़ीं।

कैल्केरिया-फास ।—बदली पानी और रातके समय रोगका बढ़ना। जानु-सन्धिकी फलकास्थिमें रस-भरे अर्बुद। जानु-सन्धिमें अर्बुद।

साइलिसिया ।—वात-रोगवाली सन्धियोंमें पीब पैदा हो जाना।

कैल्केरिया-सल्फ ।—सन्धिसे बहुत दिनोंका पीबका स्राव।

पथ्यापथ्य विषयक नियम।

हलका और सहजमें पचनेवाला भोजन ही इस रोगमें रोगीको देना चाहिये। गुरुपाक चीजें खाने पर किसी भी

दवासे कोई फायदा न होगा। बहुत ज्यादा परिमाणमें तरल पदार्थ और पानी पीना बहुत फायदा करता है। सवेरे और तीसरे पहर गरम पानी चम्मचमें देकर थोड़ा-थोड़ाकर पीनेसे बहुत फायदा होता है। रोगकी तेजी घटनेपर, रोज किसी-न-किसी तरहका व्यायाम करना चाहिये। कम-से-कम १-२ कोस पैदल घूम आनेकी जरूरत है। इससे रोगका जल्दी-जल्दी और प्रबल भावसे आक्रमण न हो सकेगा।

स्नान।—कुछ गरम पानीसे नहाकर सूखी तौलियासे शरीर अच्छी तरह घसकर नहाना चाहिये। ठण्डा पानी सहन हो जानेपर थोड़े गर्म पानीका व्यवहार करनेकी कोई जरूरत नहीं है।

तीन विषयोंमें सतर्क रहना आवश्यक है :—

(१) पसीनेका स्राव।

(२) बहुत ज्यादा पेशाब।

(३) दोनों वक्त दस्त साफ आना। इन तीनोंमें कोई गड़बड़ी न होने पाये।

सरदीसे इस बीमारीमें बहुत हानि पहुँचती है। गरम-वस्त्र व्यवहार करना चाहिये और जब किसी काममें थकावट मालूम हो तो तुरन्त उसे छोड़ देना चाहिये। दुश्चिन्ता और उद्वेगको त्याग देना चाहिये। रातके पहले पहरमें सो जाना और तड़के उठनेका अभ्यास रखना चाहिये। सवेरेका टह-लना खूब फायदा करता है।

मांस, पकी मछली, केंकड़ा, हंसिनी और मुर्गीका अण्डा, शराब, चाय, काफ़ी, कोका, चूनेका पानी, अरहरकी दाल, उड़दकी दाल, कच्चा आम, सिंघाड़ा, करेला, तोरई, और मिठाई वगैरह त्याग देना चाहिये। जबसे वात पैदा होता है।

जाँतेका पीसा आटा, भात, चूड़ा, मूँगकी दाल, मसूरकी दाल, पियाज, आलू, सेम, परवल, चिचिङ्गा, कोंहड़ा, नारियल, खजूर, कच्चा केला, इमली, घी, दूध प्रभृति वात-रोगके पथ्य हैं। गेहूँ वात-नाशक है।

ज्वर तथा दर्दकी तेजी घट जानेपर, रोगीमें ताकत लानेके लिये मुर्गीका अण्डा, ताजे फल, अंगूर, बिदाना, ओटमिल प्रभृति सेवन करना चाहिये। मक्खन और गायका घी सुपथ्य हैं।

दमा।

(Asthma)

श्वास-प्रश्वाससे उत्पन्न यह आक्षेपिक बीमारी एक स्नायविक रोग है और अधिकांश स्थानोंमें यह वंश-परम्परासे और जन्मसे ही प्राप्त हुआ रहता है। बाल्यकाल और वार्द्धक्य, इन दो उमरोंमें ही दमाका प्रकोप अधिक दिखाई देता है। यह बीमारी रातके समय ही ज्यादा बढ़ती है।

साँस लेनेकी अपेक्षा साँस छोड़नेकी क्रिया देरसे और कष्टदायक होती है। छातीके भीतरसे नाना प्रकारकी आवाजें

सुन पड़ती हैं। श्वास-नलीकी अकड़न और सङ्कोचन और फेफड़ेके वायु-कोषोंकी भी वैसी ही अवस्था रहनेकी वजहसे इस तरहका श्वास-कष्ट और बहुत तरहके शब्द उत्पन्न होते हैं, इस रोगमें मृत्युकी आशङ्का कम रहती है।

इस रोगका कारण तत्व, ह्रास-वृद्धिका समय और हेतु और नैसर्गिक प्रभाव, अभीतक निर्णय नहीं हुआ। रोगका पहला आक्रमण एकाएक हो सकता है या धीरे-धीरे एकदम अतर्कित भावसे रोग आक्रमण कर देता है। खान-पानके सम्बन्धमें भी कोई निर्दिष्ट नियम या प्रभाव स्थिर नहीं हुआ। एक रोगीको जो चीज़ हानि पहुँचाती है, दूसरे रोगीके लिये वही लाभदायक खाद्य होता देखा गया है। अतएव, प्रत्येक रोगीको व्यक्तिगत-रूपसे परीक्षा और जँचाईकर पथ्य और परिचर्याके सम्बन्धमें उपदेश देना उचित है। धूलके कण, धुआँ और तरी इस रोगमें हानि पहुँचाता है।

चिकित्सा।

मैग्नेशिया-फास।—आक्षेपयुक्त सूखी खाँसी, सोनेपर श्वास-कष्ट बढ़ जाता है। आध्मानकी वजहसे तकलीफ। आक्षेपयुक्त स्नायविक प्रकृतिका दमा; गरम पानीके साथ बार-बार सेवन करनेको देना चाहिये।

कैलि-सल्फ।—श्वासनलीका आक्षेप, पीले रङ्गका बलगम निकलना; गरमीके दिनोंमें बढ़ना; बलगमकी घर-

घर आवाज। भोजनके बाद श्वास-कष्ट आरम्भ हो जाता है। रोगीका चेहरा बदरङ्ग हो जाता है, आँख गड्ढेमें धँस जाती है और रोगी क्रमशः दुबला-पतला होता जाता है।

नेट्रम-सल्फ।—प्रमेह-विषसे दूषित धातु; सवेरे ४ या ५ बजेके समय अकड़न आरम्भ होती है। चमकीला, चिकना, पतला बलगम या बहुत ज्यादा हरे रङ्गका श्लेष्मा निकलना; खायी हुई चीजका वमन; बरसातमें, तर हवामें, तर कमरेमें रहनेकी वजहसे, गीले वस्त्र पहननेकी वजहसे बढ़ जाता है। सवेरे शय्यासे उठनेके बाद पतले दस्त; बच्चा और बालकोंका दमा; श्वास-नली-प्रदाह (bronchial catarrah) के साथ दमा; आकाश और हवामें तरी पैदा हो जानेपर रोगका बढ़ना।

साइलिसिया।—बादल गरजनेसे ही रोग बढ़ जाता है। इतना ज्यादा श्वास-कष्ट होता है, कि रोगीकी दोनों आँखें मानो धक्का देकर बाहर निकल आना चाहती हैं। रोगी अपने कमरेके सभी खिड़की, दरवाजे खोल देनेके लिये कहा करता है। दमाका धातुगत-दोष संशोधनके लिये इसका नेट्रम-सल्फके साथ पर्याय-क्रमसे प्रयोग करना चाहिये।

कैलि-म्यूर।—पाचनमें विकारके साथ दमा; जीभ सफेद या हरी आभा लिये मैलसे ढकी; सफेद और कोमल बलगम, पर सहजमें निकाला नहीं जा सकता। ऐसा मालूम

होता है, कि फेफड़ा और हृत्पिण्ड संकुचित हो गये हैं। इसको कैलि-फासके साथ पर्याय-क्रमसे प्रयोग करना चाहिये।

कैलि-फास।—स्नायविक लक्षणवाला दमा, श्वास-कष्ट और स्नायविक सुस्ती; सर्दी और छींकके साथ श्वासकष्ट, थोड़ा भी खानेसे दमा बढ़ जाता है।

कैल्केरिया-फास।—श्वास-नलीसे उत्पन्न दमा; साफ सफेद, पर चमड़ेकी तरह कड़ा श्लेष्मा; बच्चा या बालकको शय्यासे उठनेपर ही दम रुकनेका उपक्रम हो जाता है। यह लवण—बच्चों और बालकोंके लिये ज्यादा उपयोगी है।

नेट्रम-म्यूर।—हरेक निःश्वास, मानो झटकेसे ग्रहण करना पड़ता है। बहुत ज्यादा फेन-भरा श्लेष्मा निकलता है, खाँसी आनेपर बहुत आँसू चेहरेपर बहने लगता है; कैलि-फासके साथ पर्याय-क्रमसे प्रयोग करना पड़ता है।

रोगीका विवरण।

श्री रामनिरञ्जन चट्टोपाध्यायकी स्त्री, उम्र ४८ वर्ष; बहुत ही छूआ-छूतका ख्याल उसे था। प्रायः दिनभर गीला कपड़ा पहने रहती थी। चार वर्षसे मासिक ऋतु-स्राव होना बन्द हो गया है और दमा हो गया है। बहुत-सी पेटेण्ट दवाएँ खायीं; पर कोई फायदा न हुआ। थोड़ा-सा चूड़ा गरम पानीमें भिंगाकर थोड़ा नमक और पाती नेबूके साथ एक समय

खाती थी। रातके समय सिंघाड़ेका आंटा खाती थी; इतना हलका पथ्य खानेपर भी बीच-बीचमें कै हो जाती थी।

नित्य तीन मात्रा नेट्रम-सल्फ (६x) और रातके समय सोनेके पहले और सवेरे खाली पेटसे साइलिसिया (१२x)। इसी तरह अढ़ाई महीनोंतक सेवनकर ब्राह्मणी एकदम आरोग्य हो गयी। बहुत कुछ कहने-सुननेपर गीला कपड़ा पहननेका अभ्यास भी बहुत कुछ घट गया है।

कार्श्य रोग।

(Atrophy)

(सुखण्डी—Marasmus देखिये)।

कटिवात।

(Backache)

इसको साधारणतः Lumbago कहते हैं।

कटिदेश और नितम्बमें अकड़नका बेतरह दर्द, कुछ देर तक एक भावसे रहनेसे ही कमर अकड़ जाती है और थोड़ा भी हिलने डोलनेपर ऐंठनकी तरह तेज़ दर्द होता है।

साइलिसिया।—पीठमें अकड़नकी वजहसे खिंचाव, रोगीको बाध्य होकर सोये रहना पड़ता है ; मेरु-दण्डके ठीक बीचमें लगातार ऐंठनका दर्द।

फेरम-फास।—पीठ कमर और मसानेके ऊपर यन्त्रणा ; हिलने डोलनेपर दर्द बढ़ जाता है।

कैलि-म्यूर।—फेरम-फासके प्रयोगसे फायदा न होने पर इस नमकका प्रयोग करना चाहिये।

कैलि-फास।—बैठे रहनेके बाद उठनेकी चेष्टा करनेपर या चलना आरम्भ करते ही दर्द बहुत बढ़ जाता है, दर्दसे मानो एकदम लँगड़ा हो जाता है। रोगवाली जगह एकदम शक्तिहीन मालूम होती है। धीरे धीरे चलनेपर, दर्द और अकड़न क्रमसे घटती जाती है ; पर ज्यादा देरतक चलने पर दर्द बढ़ जाता है।

कैल्केरिया-फास।—रोगवाले अङ्गकी अकड़न, ठण्डकके साथ सुरसुरी मालूम होना और दर्द ; विश्रामके समय और रातमें दर्दका बढ़ जाना। फेरम-फासके साथ पर्यायक्रमसे प्रयोग किया जाता है। कमजोरी लानेवाली बीमारीके बाद अगर ऐसा दर्द पैदा हो जाय तो कैल्केरिया फासके प्रयोगसे जल्द आराम हो जाता है। सवेरे नींद खुलनेके बाद शय्यासे उठनेके समय कमरमें दर्द और अकड़न।

कैलि-सल्फ ।—इधर उधर हटनेवाला दर्द। गर्म घरमें और सन्ध्याके समय दर्दकी अधिकता; खुली ठण्डी हवा में घटना ।

मैग्नेशिया-फास ।—तीर वेधनेकी तरह, छेदनेकी तरह, पर्यावर्तक—इधर उधर हटनेवाला और स्नायविक प्रकृति का दर्द; गरम प्रयोगसे घटना ।

कैल्केरिया-फ्लुयोरिका ।—मेरुमज्जाके प्रदाहकी तरहका कटिवात; पीठके निचले भागमें एक तरहकी थकावट जैसी अनुभति और दर्द तथा भार मालूम होना और जलन अनुभव होना । इसके साथ ही कब्जियत, कटिवात, चलना आरम्भ करते ही बढ़ जाता है, पर लगातार चलते रहनेपर घट जाता है ।

नेट्रम-म्यूर ।—कड़ी शय्यामें सोनेपर दर्द घटता है । इसके साथ ही इस लवणकी खास तरहकी जीभपर खयाल रखना चाहिये । उसपर बुलबुले भरी फेन भरी लार लिपटी रहती है । बहुत देरतक सामनेकी ओर झुककर काम करनेके बाद, कुचल जानेकी तरह दर्द । पीठमें कमजोरी; सवेरे बढ़ जाना; मेरुदण्डमें स्पर्शका अनुभव होनेकी अधिकता, गर्दन पतली और अकड़ी, बहुत सुस्ती और अकड़न ।

नेट्रम-सल्फ ।—पीठमें ज़खमकी तरह तकलीफ, दर्द रातभर बना रहता है । केवल करवट सो सकता है । गर्दन और समूचे मेरुदण्डमें दर्द ।

नेट्रम-फास।—सवेरे सोकर उठनेपर कमरके एक तरफसे दूसरी तरफ तक दर्द।

कीड़ा काटना।

(Bites of Insect)

नेट्रम-म्यूर।—काटी हुई जगह पानीमें भिंजाकर थोड़ा-सा नेट्रम-म्यूर (6x) चूर्ण उस स्थानपर अच्छी तरह मल देनेपर तुरन्त दर्द दूर हो जाता है। इसके साथ ही फेरम-फासका भीतरी प्रयोग किया जाता है।

अस्थि-रोग।

(Bones, Diseases of)

इस रोगका दूसरा नाम है Osteomalacia-आस्टियो-मेलेशिया।

यक्ष्मा-दोष, उपदंश दोष, गण्डमाला दोष, पुष्ट भोजनकी कमी इत्यादि बहुतसे कारणोंसे अस्थि-विकार पैदा हो जा सकता है। जोरकी चोट लगनेकी वजहसे भी अस्थि-रोग हो सकता है।

चोट आदि आकस्मिक कारणोंसे पैदा हुए आभिघातिक अस्थिरोगके सिवा अन्य सभी प्रकारके अस्थिरोगोंका प्रधान

कारण कैल्केरिया-फास नमककी कमी और उसकी क्रियामें गड़बड़ी रहती है।

अस्थिरोगमें, रासायनिक और आनुवीक्षणिक परीक्षाकर देखा गया है, कि अस्थि-तन्तु बनानेका उपकरण अण्डलाल, वहाँ यथेष्ट रहनेपर भी चूनेके परमाणुओंकी बिलकुल ही कमी हो गयी है, अतएव उस कमीका पूर्ण करना ही इस रोगकी उचित और विज्ञान-सम्मत चिकित्सा है।

पर तन्तु-क्षयके कारण बहुत सी फालतू चीजें ऐसी बीमारीमें संचित हुआ करती हैं। नैसर्गिक नियमके अनुसार स्वस्थ नीरोग तन्तु और कोषाणुओं द्वारा ये सब वृथाकी चीजें निकाल बाहर की जाती हैं, पर स्वास्थ्यमें गड़बड़ी रहने के कारण यह काम पूरा पूरा नहीं होता। दवाओंके सहारे ये चीजें सहजमें ही सोख ली जाती या निकाल बाहर की जाती हैं। नश्तर लगवा कर हड्डीको छिलवानेकी जरूरत ही नहीं पड़ती।

चिकित्सा।

कैल्केरिया-फास।—टूटी हड्डीको जोड़नेकी यह बहुत बढ़िया दवा है। कैल्केरिया-फासके परमाणुओंके क्षय हो जानेकी वजहसे स्पञ्जकी तरह बहुतसे छेदोंवाली अस्थि, कोमल और कमजोर अस्थि, अस्थिमें घाव और मस्तककी हड्डीका क्षय हो जाता है। पैरके तलवेकी गुल्फ-सन्धिमें नासूर पड़ता है, उसके किनारे कड़े रहते हैं और बदबूदार

पतला स्राव होता है। हड्डियोंके जोड़की जगहपर और कूल्हेकी हड्डीमें दर्द रहता है।

फेरम-फास।—अस्थि कोमल, प्रदाहकी वजहसे उस स्थानके चमड़ेका लाल हो जाना, गर्म और दर्द-भरा रहना। अस्थि और अस्थिआवरक तन्तुका प्रदाह। वंक्षण-सन्धि (hip-joint) का प्रदाह।

कैल्केरिया-फ्लुयोरिका।—उपदंश दोषके कारण अगर अस्थि रोग हो जाय तो यह उसकी बहुत बढ़िया दवा है। अस्थि-गात्रमें रस क्षरण होकर उसमें कड़ापन आ जाता है और यही वजह है कि अस्थि गात्र असमतल या टेढ़ा मेढ़ा हो जाता है। चोटकी वजहसे अस्थिमें छोटे बड़े बहुत तरह के अर्बुद पैदा होते हैं। नाककी हड्डीकी बीमारी, बदबूदार श्लेष्मा निकलना, अस्थि-गात्रका जखम। पीठकी रीढ़का अर्बुद, माथेके ऊपर रक्तार्बुद (cephalo hematoma) रोगकी यह बहुत श्रेष्ठ दवा है। अस्थि-क्षय, दन्त-क्षय ; हाथ पैरकी अंगुलीकी हड्डीमें उद्भेद या हड्डीका सड़ना प्रभृतिमें बहुत ही उत्तम कार्य करता है।

साइलिसिया।—अस्थि-रोगके आरम्भ या पहली अवस्थाके बाद इस लवणके प्रयोगकी जरूरत पड़ती है। पुरानी बीमारीमें भी यह बहुत फायदा करता है। इसकी क्रिया रोगके गम्भीर अन्तस्तलतक भेद करनेकी ताकत रखती है। गण्डमाला दूषित अस्थि-रोगमें क्षय हुए अस्थि-कणोंसे बड़ी

बड़ी सड़ जानेवाली हड्डीतकके भीतरसे निकाल बाहर करता है। इसीलिये अस्थि-क्षय और अस्थि-सड़नेकी बीमारीमें दूसरे दूसरे लवणोंकी अपेक्षा साइलिसियाका अधिक प्रयोग किया जाता है।

अगर नासूर बढ़ गया हो तथा पतला और बदबूदार पीव निकलता हो, तो वहाँ साइलिसियाका प्रयोग करना चाहिये। नासूर या जखमके चारों ओर कड़ापन ; सूजन तथा पीली आभा लिये लाल रङ्गका घेरा ; सन्धि स्थानोंका सौत्रिक अंश, खासकर घुटनेकी सन्धिमें प्रदाह हो जाता है। अस्थि और अस्थि-आवरक झिल्लीका जखम। वक्षण सन्धि सम्बन्धी रोग। पीव, पसीना, मल इत्यादि सबमें ही बदबू रहती है।

मैग्नेशिया-फास।—पीठकी रीढ़के अर्बुदकी बीमारीमें अगर तकलीफ ज्यादा हो तो कैल्केरिया-फ्लोरके साथ पर्यायक्रमसे इस लवणका व्यवहार किया जाता है।

कैल्केरिया सल्फ।—अस्थिका जखम। मस्तककी अस्थिका क्षयरोग।

रोगीका विवरण।

बारासतका रहनेवाला एक ब्राह्मण युवक, उमर २४ वर्ष। यह ब्राह्मण पाँच वर्षोंसे अस्थिकी बीमारी भोग रहा था। पहले पैरकी जंघास्थिका (tibia) कोमल होना आरम्भ हुआ। इसके बाद वह टेढ़ी होने लगी। कलकत्तेके अस-

तालमें यह हड्डी छील दी गयी, पर पैर टेढ़ा ही रह गया। इसके बाद रोग माथेकी हड्डीमें जा पहुंचा। कलकत्तेके अस्पतालके विख्यात अस्त्र चिकित्सकने दो बार माथेके दोनों ओरकी हड्डी छील दी; उससे दोनों ओर दो बड़े बड़े गड़हे बन गये। कुछ दिन बाद जब माथेमें तीसरी जगह बीमारी आरम्भ हुई तब रोगी मेरे पास चिकित्सा करानेके लिये आया। पहले दो सप्ताह तक उसे साइलिसिया सेवन कराया गया। फिर दो महीनों तक कैल्केरिया फ्लूओरिकाका प्रयोग हुआ। अब वह एकदम स्वस्थ है, तबसे उसकी किसी भी हड्डीमें कोमलता नहीं आयी, पर नश्तर लगवानेके कारण जो दो गड़हे पड़ गये थे, वे न भरे।

मस्तिष्कका अवसाद्।

(Brain fag)

कैलि-फास।—स्नायविक शक्तिका क्षय, बहुत ज्यादा काम मस्तिष्कसे लेने या मस्तिष्क परिचालन करने या मानसिक परिश्रमके कारण मस्तिष्ककी दुर्बलता, भूख न लगना, मन हमेशा उदास रहना, धीरज न धर सकना, उत्ते-जना, भूल जाना या नींद न आना; प्रदाहके बाद मस्तिष्ककी कोमलतामें इस लवणके साथ पर्यायक्रमसे कैलि-म्यूर सेवन करना चाहिये। अगर मस्तिष्कमें जल-संचय हो जाये तो

इस लवणके साथ पर्य्यायक्रमसे कैल्केरिया-फास सेवन करना चाहिये। स्नायविक अवसन्नता।

कैल्केरिया-फास ।—उतरा, दुबला पतला चेहरा; हाथ-पैर ठण्डे और सुन्नकी तरह हो जाना; रातके समय बहुत ज्यादा पसीना होना; स्नायविक सुस्ती, उत्साह-भङ्ग कमजोरीके कारण हाथ-पैरकी शिराओंका रक्त प्रवाह रुककर नीली नीली शिराएँ दिखाई देती हैं; भूख न लगना और नींद न आना।

साइलिसिया ।—बहुत ज्यादा मानसिक परिश्रम करनेकी वजहसे थकावट। किसी विषयमें भी मन स्थिर नहीं रख सकता; अस्थिर चित्त। हमेशा उद्विग्न; बहुत कमजोरी मालूम होना; कभी कभी उत्साहित हो उठता है, पर फिर तुरन्त ही थककर विश्राम लेना पड़ता है। लिखने पढ़नेसे ही थकान आ जाती है, कोई भी चिन्ता इसका रोगी सहन हो नहीं कर सकता।

नेट्रम-म्यूर ।—नींद न आना; भविष्यके सम्बन्धमें हमेशा अशुभ आशंका बनी रहती है, कुछ देर तक बोलते रहनेपर थक जाता है; मस्तिष्कका आच्छन्न भाव।

श्वासनली प्रदाह।

(Bronchitis)

श्वासनलीसे उत्पन्न प्रदाहका क्षेत्र, प्रसार और प्रकोपके अनुसार इसके कितनेही नाम रखे गये हैं। जैसे:—

(क) Acute Catarrhal Bronchitis ; Bronchial Catarrah.

(ख) Chronic Bronchitis ; Chronic Bronchial Catarrah.

(ग) Acute Capillary Bronchitis ; Broncho Pneumonia.

(घ) Croupous Bronchitis ; Febrinous or Plastic Bronchitis.

Acute Catarrhal Bronchitis.

नया सर्दी जनित श्वासनली प्रदाह।

श्वासनलीकी श्लैष्मिक झिल्लीमें सर्दीको वजहसे पैदा हुआ नया प्रदाह।

कारणतत्व।—ऋतु-परिवर्त्तनके समय सर्दी लग जाना; तेज भाफकी गन्ध नाकसे जाना; या नाककी राहसे धूलके कणोंका प्रवेश करना; कण्ठ-देशसे प्रदाहका फैलना; खसड़ा प्रभृति संक्रामक रोगके गौण उपसर्ग।

बहुत अधिक कमजोरी, ऐसे घरमें काम करना जहाँ हवा का आवागमन न हो, बचपन और बुढ़ापा—इन कई अवस्था-ओंमें यह बीमारी होती देखी जाती है।

नयी सर्दी, जाड़ा मालूम होना और पर्यायक्रमसे गरमी मालूम होना, सारे शरीरमें एक हलका दर्द और बेचैनी मालूम होना ; आवाज भारी। इसके बाद क्रमसे बोखार शुरू होता है, बहुत तेज बोखार, ताप ज्यादा चढ़ता है, वक्षमें जलन और दर्द मालूम होता है। श्वास लेने तथा छोड़नेमें तकलीफ, खाँसी पहले सूखी और कड़ी, और खाँसनेके साथ सारे शरीरमें झटकाकी तरह लगना ; किसी किसी रोगीको आक्षेपयुक्त खाँसी भी आती है। **बलगम**—पहले बहुत थोड़ा निकलता है, कभी कभी खूनके छींटे भी रहते हैं ; कई दिन बाद बलगम ढीला पड़ जाता है और सहजमें ही निकलने लगता है ; इस समय बलगम पीली आभा लिये, या कुछ हरे रङ्गका हो जाता है, श्लेष्मा और पीब मिला रहता है अथवा सिर्फ पीबकी तरह बलगम निकलता है, बहुत-सा बलगम निकल जाने बाद रोगी धीरे धीरे आरोग्य हो जाता है।

रोगका स्थायित्व तीन-चार दिनसे लेकर तीन-चार सप्ताह-तक हो सकता है। किसी-किसीको chronic bronchitis (पुराना श्वासनली-प्रदाह) या capillary bronchitis (कैशिक श्वासनली-प्रदाह) की अवस्थामें बदल जाता है।

बच्चे और वृद्धोंको यह बीमारी हो जानेपर आशङ्काकी बात होती है। पर अन्य मनुष्योंके लिये यह साधारण साध्य

रोग है। छोटी माता, चेचक प्रभृति संक्रामक बीमारियोंके उपसर्ग रूपमें यह बीमारी होनेपर तथा ब्राङ्काइटिसके साथ हृद्-यन्त्रकी बीमारी रहनेपर अवस्था और भी जटिल हो जाती है।

Chronic Bronchitis.

(पुराना श्वासनली-प्रदाह)

पुराना—जीर्ण-भावका श्वासनली-प्रदाह। नये श्वासनली प्रदाहके इलाजमें अगर ढिलाई आ जाती है अथवा धातुगत-दोष, नयी बीमारी आराम हो जाने बादकी असावधानता या पुष्ट करनेवाला भोजन न मिलना—वगैरह कारणोंसे यह अवस्था हो जा सकती है। इसमें श्वास-नलीमें प्रायः बराबर श्लेष्मा वर्त्तमान रहता है या बार-बार हो जाया करता है। कभी-कभी तो बहुत ज्यादा बलगम किसी-किसी रोगीको निकलता है। २४ घण्टोंमें अढ़ाई-तीन सेरतक बलगम निकल जाता है; उस समय, उस अवस्थाको bronchorrhœa (ब्राङ्कोरिया) कहते हैं। इसके अलावा कहीं-कहीं इसके साथ वातका उपसर्ग भी रह सकता है, उस समय इसको rheumatic bronchitis कहते हैं। किसी-किसीके, खासकर शराबियोंके और दीन-दुःखी रोगियोंके बलगममें बहुत ही बदबू रहा करती है और उनकी श्वासनलीका आयतन बढ़ जाया करता है। इस उपसर्गको fetid bronchitis (फिटिड ब्राङ्काइटिस) कहते हैं और भी एक तरहकी

सूखी ब्राङ्काइटिसकी बीमारी दिखाई देती है। इस खाँसीका दौरा बहुत जोरका होता है, पर बलगम बहुत कम निकलता है। दमा, वात या श्वास-नलीकी वायु-स्फीति (emphysema) के साथ यदि यह मिला हो, तो रोगीकी अवस्था खराब हो जाती है। इसको dry catarrh सूखी सर्दी कहते हैं।

जीर्ण-भावापन्न श्वासनली-प्रदाहमें—साधारणतः ज्वर नहीं रहता। वक्षकी आकर्षण-परीक्षा करनेपर ढीले बलगमकी घरघराहट सुन पड़ती है; बलगम अधिक निकलता है। इस बीमारीके साथ अगर शोथका उपसर्ग रहे, तो इसका परिणाम बहुत ही खराब होता है, नहीं तो वृद्ध मनुष्योंको भी यह बीमारी होनेपर वे बहुत दिन जीवित रहते हैं। श्वास-यन्त्रके यक्ष्माके साथ इस बीमारीका भ्रम हो सकता है; पर यक्ष्मा रोगके दूसरे लक्षण रहनेपर और बहुत जल्दी-जल्दी कमजोर होते जाना प्रभृति लक्षण ध्यानमें रखनेपर भ्रम नहीं होगा। खासकर अनुवीक्षण यन्त्रके सहारे परीक्षा करनेपर अगर यक्ष्माके जीवाणु मिलें तो फिर सन्देहकी कोई जगह ही नहीं रह जाती।

———

ब्राङ्को न्युमोनिया ।

(Broncho-pneumonia)

इसका दूसरा नाम है, Capillary bronchitis अर्थात कैशिक श्वासनली-प्रदाह । यह नये श्वासनली-प्रदाहके गौण उपसर्गके रूपमें प्रकट होता है और छोटी माता, हुप खाँसी, प्रभृति रोगोंके आनुसङ्गिक उपसर्गके रूपमें यह बीमारी हो सकती है। नया श्वासनली-प्रदाह भी इस रोगका उद्दीपक कारण हो सकता है, बचपन और वार्द्धक्यमें ही इसका आक्रमण हमेशा हुआ करता है।

इस रोगमें केशकी तरहकी सूक्ष्म-श्वासनलियोंकी शाखाओं और उनके फुसफुस-गात्रवाही सीमामें रहनेवाले वायु-कोषोंका प्रदाह होकर श्लेष्मा निकलता है और इसीलिये हवाका पूरा-पूरा खिंचाव नहीं हो पाता ; उसमें बाधा पड़ती है। जब आक्सिजन वाष्पका अभाव हो जाता है और समूचा रक्त दूषित हो जाता है, तब मृत्यु हो जाती है। इसमें नये ब्राङ्काइटिसके सभी लक्षण वर्त्तमान रहते हैं ; कभी-कभी किसी रोगीको ज्वरके आक्रमणके आरम्भमें ही उत्पन्न १०५ डिग्रीतक जा पहुँचता है। श्वास-प्रश्वासकी गति तेज हो जाती है, नाड़ी कमजोर हो पड़ती है ; ४८ घण्टोंके भीतर ज्वरका उत्ताप २-३ डिगरी घट जाता है ; पर नाड़ी और श्वास-प्रश्वासकी अवस्था ज्यों-की-त्यों रहती है। छातीमें दर्द नहीं

मालूम होता ; पर श्वास लेने और छोड़नेमें तकलीफ होती हैं। खाँसी लगातार बनी रहती है ; सूखी और आक्षेपयुक्त (spasmodic) रहती है। गहरे स्थान—खूब भीतरसे बलगम निकालना पड़ता है, इसीलिये बड़ी तकलीफसे बहुत थोड़ा-सा लसदार बलगम निकलता है। श्लेष्माका रङ्ग क्रमसे पीली आभा लिये हरा दिखाई देता है।

अम्लजानकी कमीके कारण दोनों ओंठ और फिर समूचा चेहरा नीला हो जाता है और श्वास-कृच्छ्रताके सभी लक्षण प्रकट होने लगते हैं।

छातीपर अंगुलीसे चोट देनेपर, फेफड़ेकी पतनावस्थावाले स्थानमें ठोस आवाज (dull sound) मिलती है।

आकर्णन-परीक्षामें—मरमरकी आवाज सुन पड़ती है। अगर समूची कैशिक श्वासनलीपर रोगका आक्रमण हो जाता है, तो यह आवाज समूचे वक्षमें फैल जाती है और नहीं तो रोगवाली जगहपर ही अड़ी रहती है।

इसका प्रभेद स्मरण रखना चाहिये। साधारणतः ब्राङ्काइटिस रोगमें चार अवस्थाओंकी कमी देखनेमें आती है :—

१। ज्वरका ताप इतना ज्यादा नहीं चढ़ता।

२। श्वासकृच्छ्रता नहीं रहती।

३। ओठ, चेहरा तथा हाथ-पैरपर नीलापन नहीं आता।

४। Sub-cripitation rales और मरमर-शब्द नहीं सुन पड़ता।

रोगका स्थायित्व—दस घण्टे से एक सप्ताहतक ।

भावी फल—आशङ्का-जनक रहता है ।

श्वासनलीका झिल्लीवाही-प्रदाह ।

(Croupous or Plastic Bronchitis).

इसके और भी कितने ही नाम हैं। जैसे,—Pseudo-membranous bronchitis ; Febrinous bronchitis ; Diptheritic bronchitis.

श्वासनलीकी श्लैष्मिक-झिल्लीके प्रदाहमें कृत्रिम झिल्ली उत्पन्न होकर बीमारी, नये और पुराने भावापन्न हुआ करती है ।

इस रोगका असली कारण अबतक मालूम न हुआ। कण्ठनलीका कृत्रिम-झिल्ली प्रदाह धीरे-धीरे श्वासनलीमें फैल-कर अधिकांश स्थानोंमें क्रूपस ब्राङ्काइटिस पैदा कर दिया करता है। यह अकसर स्वास्थ्य-हीन कमजोर बालकोंपर आक्रमण किया करता है ।

इस बीमारीमें श्वासनली-प्रदाहके प्रायः सभी लक्षण दिखाई देते हैं ; बल्कि निकले हुए बलगमके साथ नकली झिल्ली निकल कर बता देती है कि यही असली बीमारी है ।

नये भावकी बीमारी—तीन दिनसे चौदह दिनोंतक स्थायी होती है। पुराने भाववाली बीमारी १० दिनके बाद दब

जाती हैं और इस तरह कुछ दिनोंतक दबी रहकर फिर आक्रमण करती है और इसी तरह कई बरसोंतक तङ्ग किया करती है।

नियुमोनिया और फेफड़ेके यक्ष्मामें यह अन्तमें परिणत हो जा सकती है।

नया आक्रमण होनेपर, सैंकड़े प्राय: ५० रोगी मर जाते हैं। पुराने भावको होनेपर, खासकर इस बीमारीसे मौत नहीं होती; परन्तु दूसरे-दूसरे उपसर्ग पैदा होकर मृत्यु होती है, एकदम आरोग्य प्राय: नहीं दिखाई देता।

डिफ्थीरिया रोगमें, पहले नकली झिल्ली तालुमूल—(tonsil) की जगहपर पैदा होती है, टानसिल फूल उठता है, साँसमें बदबू रहती है, गलेकी ग्रन्थियाँ फूल जाती हैं, उनमें दर्द होता है और टेटुआ तथा नाकमें यह झिल्ली फैल जा सकती है; कण्ठनलीकी राहसे नीचेकी ओर भी उतरती है; पर एकदम नि:संशय रूपसे प्रभेद निर्णय करनेके लिये अनुवीक्षण यन्त्रसे ही नकली झिल्लीकी परीक्षा करनी चाहिये।

रोगके इन चारों प्रकारके विकासोंकी एक ही चिकित्सा-प्रणाली है।

चिकित्सा।

फेरम-फास।—रोग हुआ है, इस बातका पता लगते ही इसका प्रयोग करनेपर बहुत फायदा होता है। ज्वरके साथ कण्ठनली और श्वासनलीमें रक्तका बढ़ जाना और

दर्द होना ; खाँसी आती थोड़ी देरतक, पर बार-बार आती है, छातीमें दर्द रहता है ; बलगम नहीं निकलता ; श्वास-प्रश्वास छोटा और उसमें तकलीफ रहती है। अगर बलगम ढीला हो जाता है, तो बलगमकी प्रकृतिके अनुसार उपयुक्त औषधिके साथ फेरम-फास पर्यायक्रमसे दिया जाता है। जब तक प्रदाह पूरी तरह आरोग्य नहीं हो जाता, तबतक फेरम-फासका प्रयोग करते रहना उचित है। बच्चे और बालक बालिकाओंका कैशिक श्वासनली प्रदाह ; तेज, बारम्बार और आक्षेपयुक्त खाँसी। खाँसनेमें दर्द भी होता है।

कैलि-म्यूर।—यह रोगकी द्वितीय अवस्थामें प्रयोग किया जाता है। बलगम अगर निकलता हो तो इसके साथ पर्यायक्रमसे फेरम-फासका प्रयोग करना चाहिये। बलगम सफेद, गाढ़ा और लसदार, जीभ सफेद या धुमैले बलगमसे ढकी, क्रूपस-ब्राङ्काइटिसके रोगियोंके लिये यह बहुत ही लाभ-दायक है। इस लवणका जलीय द्रव spray के सहारे कण्ठ में प्रयोग करनेपर या steam atomiser द्वारा इस द्रवको साँसके साथ भीतर लेनेपर बहुत फायदा होता है।

कैलि-सल्फ।—रोगकी तीसरी अवस्थामें, तेजी घटकर, पतला पीली आभा लिये बहुत ज्यादा बलगम निकलता है ; इस समय बलगमका रङ्ग विशेषकर पीली आभा लिये या चमकीला पीली आभा लिये होता है। तीसरे पहर और सन्ध्याके समय बढ़ना। ज्वर वर्त्तमान रहनेपर इसके साथ पर्यायक्रमसे फेरमका प्रयोग करना चाहिये।

साइलिसिया।—निकला हुआ श्लेष्मा पीबकी तरह गाढ़ा, पीले रङ्गका, भारी ऐसा कि पानीमें डालनेपर नीचे बैठ जाता है। रिकेट् रोगवाले बालक बालिकाओंके ब्राङ्का-इटिस रोगमें यह ज्यादा फायदा करता है। ठण्डी चीजें सेवन करनेपर बढ़ना और गरम चीजें सेवन करनेपर बढ़ना। रातके समय पसीना। सवेरे कण्ठमें सुरसुरी होकर खाँसीका बढ़ना।

नेट्रम-म्यूर।—श्वासनलीका नया प्रदाह; पतला श्लेष्मा, साफ, फेन भरा, पानीकी तरह; वक्षमें बलगमकी वजहसे घरघर आवाज, कभी कभी श्लेष्मा निकलनेमें तक-लीफ होती है, कभी बहुतसे श्लेष्मासे मुँह भर जाता है और बार बार थूक भर निकालना पड़ता है, पुराना ब्राङ्काइटिस, शीत ऋतुमें बढ़ना; ऊपर लिखी प्रकृतिका श्लेष्मा साफ और सिझाए हुए आरारूटकी तरह लसदार रहता है, गलेकी आवाज क्षीण रहती है और कलेजा काँपा करता है। रोगी समुद्रके किनारेका रहना सहन नहीं कर सकता, नमकीन हवामें उसकी तबीयत खराब हो जाती है।

कैल्केरिया-फास।—दुबले, क्षीण और खूनकी कमी रहनेवाले रोगीका ब्राङ्काइटिस, अण्डलालकी तरह बलगम निकलता है। रोगके बादकी कमजोरी दूर करनेके लिये यह बहुत ही उत्तम दवा है।

नेट्रम-सल्फ।—बरसातमें और ठण्डे तर दिनोंमें रोगकी उत्पत्ति या वृद्धि होती है। दमामें साँसमें खिंचाव, सवेरे बढ़ना, खाँसनेके समय रोगी हाथसे कलेजा दबा रखता है; श्लेष्मा निकलनेकी वजहसे चर्मकी खाल उधड़ जाती है और जख्म पैदा हो जाता है।

कैल्केरिया-सल्फ।—ब्राङ्काइटिस की आखिरी अवस्था; बलगमका रङ्ग पीला या पीली आभा लिये हरा बलगम निकलता है अथवा खून मिला पीवकी तरह और खूब भारी बलगम रहता है। रोगकी अन्तिम अवस्थामें श्लेष्माके बदले पीवका निकलना।

पथ्य और परिचर्या।

इस विषयमें खूब सावधान रहना चाहिये, कि रोगीको किसी तरहसे सर्दी न लग जाये, हमेशा गरम कपड़ा पहनना चाहिये। रोगीके कमरेमें साफ हवाका आवागमन बनाये रखनेके लिये रोगीके पाससे कुछ हट कर सब खिड़की दरवाजे खोल रखने चाहियें।

पथ्य पतला और हलका होना चाहिये। पथ्यको गरम कर खिलाना चाहिये। अगर आध्मान न हो और पतले दस्त न आते हों तो दूध दिया जा सकता है, नहीं तो सागू, बार्ली, शटी, सिंघाड़ा वगैरह देना चाहिये।

रोज नमकके साथ एक बूंद सरसोंका तेल मिलाकर उससे दाँत माँजना चाहिये और गरम पानीसे मुँह धो डालना

चाहिये, रोगी जब पूरी तरह आरोग्य हो जाय तब बदन पोछना चाहिये, इसके पहले नहीं।

नाड़ीकी अवस्था अगर क्षीण और हाथ-पैर ठण्डे और नीले हो गये हों तो रोगीको पथ्यके साथ प्रतिबार कई बून्द ब्राण्डी मिलाकर देनी चाहिये. कमरेमें कोयला या गुलकी आग न रखनी चाहिये। एक बड़ी हाँड़ीमें पानी खौलानेपर उसी भाफसे कमरेमें गरमी बना रखी जा सकती है। स्टोव पर हाँड़ी रखकर कमरा गरम कर रखना चाहिये।

कलेजेमें पुराना घी मालिशकर, भूसीकी पोटली बना, गरम कर सेंक देना चाहिये। दूसरी दूसरी मालिश या पट्टी या पोल्टीसके प्रयोगसे हानि हो सकती है तथा रोगीको भी तकलीफ होती है।

——

जले-घाव।

(Burns)

शरीरके किसी भी अंगमें जलता हुआ कोयला, लोहा प्रभृति धातु या आग छूकर जल जाना या खौलता हुआ पानी, घी, तेल आदिसे झुलस जाना—इन दो तरहकी दुर्घटनाओंसे जले घाव उत्पन्न हो जाया करते हैं।

अङ्ग कितना जला है और उसकी गभीरता—इन तीनों विषयोंपर ही भावी परिणाम निर्भर करता है। अगर हाथ या

पैर जल जाये तो जीवनकी कोई आशङ्का नहीं रहती पर उदर, छाती, तलपेट या माथेकी कोई जगह जल जानेपर जानका खतरा रहता है। यदि एक रुपयेके बराबर जगह जल जाये, तो डरकी कोई बात नहीं; पर अगर एक पानके पत्तेके मुकाबलेका स्थान जल जाये तो भीषण अनर्थकी सम्भावना रहती है।

बच्चे और बड़ोंके लिये जला हुआ जख्म खराब होता है, क्योंकि जलनेके कारण पैदा हुआ स्नायविक उपघात वे सहन नहीं कर सकते, जवान और प्रौढ़ मनुष्य यह उपघात मजेमें सहन कर सकते हैं।

जली हुई जगहपर मैंदा खूब छिड़क कर, उस पर खूब साफ नरम कपड़ा ढक देना चाहिये। उसके बाद रूईकी मोटी तही बैठाकर अलग भावसे बैण्डेज बाँध देना चाहिये; इससे जलन बहुत जल्द दूर हो जाती है।

छाला होनेपर, उसे सावधानतासे फोड़ देना चाहिये। किसी सुईकी नोकको अच्छी तरह अलकोहल द्वारा तीनबार धोकर, छालेके नीचेकी ओर बेधकर छेदकर देना चाहिये। और उसपर साफ रूईसे सावधानतासे धीरे धीरे दबाकर पानी निकाल देना चाहिये, इस बातपर खयाल रखना चाहिये कि छालेका चमड़ा फट या उठ न जाये। इसके बाद कैलि-स्यर (३x) गाढ़ा गाढ़ा पानीमें गलाकर और उसमें लिण्ट या कोमल वस्त्रका टुकड़ा भिङ्गोंकर जली जगहपर लगा देना चाहिये। यह लिण्ट या कपड़ा फिर न निकालना चाहिये।

यदि सूख जाये तो उस पर यही द्रव फिरसे ढाल देना चाहिये।

अगर थोड़ी सी जगह जल जाये तो कैलि-म्यूर या दूसरा कोई उपयोगी लवणका ३x चूर्ण जखमवाली जगहपर छिड़क देना चाहिये, उसपर लिण्ट ढक देना चाहिये और उसपर रूई रखकर बाँध देना चाहिये।

अगर हाथ, पैरकी दो या उससे अधिक अँगुलियाँ जल जायें तो हरेक अँगुली अलग अलग बाँध देनी चाहिये ; नहीं तो जखम सूखनेके समय नये पैदा हुए तन्तु-सब आपसमें मिलकर अंगुलियाँ सब सट जायँगी ; उस समय नश्तर लगवाये बिना वे अलग न हो सकेंगी।

चिकित्सा।

फेरम-फास।—सबके पहले यही श्रेष्ठ दवा है। जब तक तकलीफ न घट जाये या दर्द जलन एकदम न बन्द हो जाये तबतक १०।१५ मिनिटके अन्तरसे प्रयोग करना चाहिये। तकलीफ घटजानेपर कैलि-म्यूरका प्रयोग करना चाहिये।

कैलि-म्यूर।—इसके भीतरी और बाहरी प्रयोगसे सब तरहके जले घाव और झुलस जानेकी चिकित्सा की जाती है। इसका गाढ़ा द्रव (४ आउन्स पानीमें ४ ड्राम मात्राका ३x चूर्ण) तैयार कर उसमें लिण्ट तरकर जली जगहपर लगा देना चाहिये। सूख जानेपर लिण्ट न निकालना चाहिये,

बल्कि यही द्रव बून्द बून्द उसपर ढालकर तर कर देना चाहिये।

कैल्केरिया-सल्फ।—कैलि-म्यूरका प्रयोग करनेके बाद, जब पीव पैदा होना आरम्भ हो जाये तो इसका प्रयोग किया जाता है।

नेट्रम-फास।—जले हुए जखममें पीव पैदा होनेके बाद, इसका भीतरी और बाहरी प्रयोग किया जाता है।

आकस्मिक विपत्तिमें।

धीरज धरना ही प्रधान कर्त्तव्य है, दौड़, धूप, हल्ला, शोर गुलकर समय नष्ट करनेपर कोई लाभ नहीं होता।

अगर पहने हुए कपड़ेमें आग लग जाये, दौड़ कर हवामें निकल आना या कपड़ा फाड़कर निकाल डालनेकी चेष्टा करना मूर्खता है। इससे आग बढ़ जाती है और शरीरको और भी ज्यादा हानि होती है।

कम्बल या मोटा टाट, अथवा शतरञ्जा—इसी तरहकी कोई एक चीज जल्दीसे लाकर उसको सारे शरीरमें लपेट लेना चाहिये और जमीन पर गिरकर लोटना चाहिये। इससे तुरन्त आग बुझ जायगी। इसके बाद, धीरे धीरे कपड़ा उतार कर ऊपर बताये ढङ्गसे जले वस्त्र अलग हटाकर और छाले फोड़कर, कैलि-म्यूर छिड़क, लिण्ट द्वारा जली हुई जगहको ढक देना चाहिये। सब जली हुई जगहको

एक ही बार खोल डालना उचित नहीं है। क्योंकि जली हुई जगहमें हवा लगनेसे ही जलन और तकलीफ बढ़ जाती है और जख्मके सूखनेमें भी देर लगती है।

अगर कम्बल वगैरह चीज़ोंके संग्रहमें देर हो तो जिसका शरीर जला हो उसको जमीनमें लोटनेको कहना चाहिये। इससे भी सहजमें ही आग बुझ जाती है।

कर्कटिका।

(Cancer)

किसी-किसी पुस्तकमें Tumour (अर्बुद या आव) और कैन्सरको एक ही बताया गया है और कहा गया है, कि यह एक ही रोग है ; यह एकदम भ्रम है। सभी टियुमर कभी भी कर्कट विषसे दूषित नहीं रहते और सभी कैन्सर कभी अर्बुदका आकार नहीं धारण करते।

कैन्सर पैदा होनेकी जगहके अनुसार उनकी प्रकृतिका प्रभेद दिखाई देता है। इस बीमारीकी एक विशेषता यह है, कि यह अपने पासके तन्तुओंकी भी प्रकृति अपनी तरह ही बना लेती है अर्थात उनमें भी फैल जाती है तथा यह एक जगहसे हटकर, दूसरी जगह जाकर भी प्रकट हो सकती है। कर्कटका जखम आप ही फट जाता है और रोगीका जीवन संकटमें जा पड़ता है।

कैन्सर एक धातुगत रोग है; तथापि इसका विष भीतर-ही-भीतर सोखकर रोगीके शरीरमें बहुतसे प्राणघातक उपसर्ग पैदा हैं।

पाकाशय, निचला ओंठ, स्तन, जरायु, डिम्बाशय, जीभ, मलद्वार, योनि प्रभृति क्षेत्रोंमें यह उत्पन्न होता है। कर्कटिका रोग, हमेशा दो तरहका प्रकट होता है; कठिन और कोमल, पाकाशय, स्तन और मलद्वार प्रभृति स्थानोंमें कठिन आकारमें और अन्यान्य स्थानोंमें कोमल आकारमें यह पैदा हुआ करता है।

यह प्रौढ़ावस्था और बुढ़ापेकी बीमारी है और यह बीमारी स्त्रियोंको ही अधिक होती है। दुबलापन, निराशा, पीली आभा लिये शरीरके रङ्गके साथ यह रोग पैदा होता है। कैन्सर रोग बहुत दिनोंतक शरीरमें गुप्तावस्थामें पड़ा रह सकता है और फिर एकाएक कोई आघात लगनेपर प्रकट हो सकता है।

अगर स्तनके किसी स्थानपर बहुत दिनोंतक कड़ापन बना रहे, तो उसपर ध्यान न देना नुक्सान करता है। मलद्वारका भी इस तरहका कड़ापन दिखाई देनेपर तुरन्त उसपर ध्यान देना चाहिये।

इस रोगमें जलन, यन्त्रणा, दुर्गन्ध और एकाएक रक्त-स्राव असहनीय-सा हो जाता है।

क्लोरोफार्मसे बेहोशकर इलाज किया जाता है और नश्तर लगाया जाता है, पर धातु-दोष रहनेकी वजहसे, नश्तर लग-

वाने और कटवाने बाद भी यह नये सिरेसे पैदा हो जाया करता है।

बायोकेमिक चिकित्सासे—कैन्सरकी जलन, बदबू, रक्तस्राव प्रभृति आराम हो जाया करते हैं। यह बहुत दिनोंतक रोगीको जिलाये रखती हैं। रोगकी आरम्भावस्थामें ही यदि उपयुक्त मात्रामें बायोकेमिक लवणका प्रयोग किया जाता है, तो रोगवाली जगहकी फूलन, लाली वगैरह चली जाती है और वह स्थान फिर स्वाभाविक अवस्थामें आ जाता है।

नश्तर लगवाने बाद भी अगर बार-बार कैन्सर होता रहे, तो हताश न होकर, बायोकेमिक इलाज करना और कम-से-कम रोगकी भयङ्कर तकलीफसे तो रोगीको बचाये रखना चाहिये। इसी तरह धीरजसे इलाज करनेपर रोगीको बहुत दिनोंतक जीवित रखा जा सकता है।

चिकित्सा।

नेट्रम-फास।—जीभके कैन्सर रोगमें यह ज्यादा फायदा करता है। अगर दर्द अधिक रहे तो इसके साथ पर्याय-क्रमसे फेरम-फासका प्रयोग करना चाहिये। भीतरी प्रयोग अर्थात खिलानेके साथ-ही-साथ पानीमें गलाकर कुल्ला करनेको भी दिया जाता है।

कैलि-सल्फ।—उपलचासे पैदा हुआ कैन्सर; चर्म और श्लैष्मिक झिल्लीके सङ्गम-स्थानका कैन्सर; चर्मके ऊपरी भागका कैन्सर; पतला; पीले रङ्गका; रसकी तरह या

पीवका स्राव। इसका भीतरी और बाहरी दोनों ही प्रयोग होता है।

कैलि-फास।—बहुत ही तकलीफ देनेवाला केन्सर; बदबूदार स्राव; चर्म और तन्तु सब बदरङ्ग हो जाते हैं। केन्सरके इलाजकी यह सबसे श्रेष्ठ दवा है। यदि ऐसा कहा जाये तो भी अत्युक्ति न होगी।

नेट्रम-म्यूर।—जीभके नीचे कोमल उद्भेद; इसके साथ पर्याय-क्रमसे "फेरम-फास" का प्रयोग किया जाता है।

साइलिसिया।—जरायुमें, बगलकी ग्रन्थिमें, गलेकी गांठमें, चेहरा या निचले ओंठका केन्सर; स्तनके केन्सर रोगकी यह एक उत्कृष्ट दवा है। रोगवाली जगह कड़ी होकर, धीरे-धीरे पका करती है; रोगवाली जगह बरफकी तरह ठण्डी रहती है। जरायुके केन्सर रोगमें, योनिसे भूरे रङ्गका बदबूदार पीवकी तरह स्राव; सड़े मांसकी तरह बदबूदार प्रदरकी भाँतिका स्राव होता है।

कैल्केरिया-फास।—कण्ठमाला धातुवाले रोगियों-का केन्सर, सन्धि-स्थानके चारों ओर थैलीकी तरह सूजन और स्राव होता है।

रोगी-विवरण।

कलकत्तेके किसी रङ्ग-मञ्चके स्टेज-मैनेजर महाशयके ऊपरी जबड़ेके चर्मपर केन्सर हो गया; उनका समूचा चेहरा फूल-

कर मेंढकके चेहरेकी तरह हो गया। इसके बाद रोग फैल-कर क्रमशः दाहिनी आँखतक पहुँच जानेकी तैयारी हो गयी। अस्पतालमें आठ महीनोंतक इलाज हुआ, पर कोई फायदा न हुआ। इसके बाद X. Ray का प्रबन्ध किया गया, पर खर्च बहुत अधिक पड़ जानेकी वजहसे रोगी यह चिकित्सा न करा सका और बायोकेमिककी शरणमें आया।

पहले कई दिनोंतक उसको **कैलि-फास** और **फेरम-फास** ये दो दवाएँ पर्याय-क्रमसे प्रयोग करनेके बाद, तक-लीफ प्रायः तीन चौथाई घट गयी और भी कई सप्ताहतक इसी तरह इलाज करवानेके बाद वह सूखने तो लगा, पर नाकमें एक नासूरकी तरह दिखाई देने लगा और मांस-धोये पानीकी तरह बदबूदार स्राव होना आरम्भ हो गया। इस समय उसे नित्य तीन बारकर **साइलिसिया** सेवन कराया गया। यह दवा छः सप्ताहतक सेवन करनेके बाद वे एकदम आरोग्य हो गये। चेहरेके दाहिनी ओर केवल एक जखमका दाग रह गया।

(२)

श्रीमती कुमुदिनी, उमर २६ वर्ष। दुबली-पतली, गोरी वेश्या; बायें स्तनका केन्सर, गहरा जखम, गले हुए आकारका जखम, सड़ा बदबूदार पतला स्राव निकलता था। बहुत अधिक तकलीफ थी, तीन महीनोंसे नींद न आती थी; सूजाक

रोगका इतिहास मिलता था। जखमके चारों ओरकी जगह पत्थरकी तरह कड़ी थी।

फेरम-फास और कैल्केरिया-फ्लुयोरिका—पर्याय-क्रमसे प्रयोगकर इलाज आरम्भ किया गया। १२ दिनों-तक दवा सेवन करने बाद जखम प्रायः समतल हो गया और उसके चारों ओरका कड़ापन दूर हो गया; पर बदबूदार स्राव बहुत दिनोंतक जाता रहा।

साइलिसिया—खिलाने और लगानेकी व्यवस्था हुई। छः दिनों बाद देखा गया कि जखम आश्चर्य-जनक रूपसे सूखता जा रहा है और भीतरसे नये तन्तु भरते आ रहे हैं। दो महीनोंतक साइलिसियासे इलाज करनेके बाद रोगिनी एकदम आरोग्य हो गयी और उसके साधारण स्वास्थ्यकी भी बहुत उन्नति हो गयी। बायोकेमिक चिकित्सासे उसका सूजाक भी आराम हो गया है।

मोतियाबिन्दु।

(Cataract)

यह बुढ़ापेकी बीमारी है।° कण्ठमाला, उपदंश, सूजाक प्रभृति धातुगत-दोष रहनेपर प्रौढ़ावस्थामें आँखमें मोतिया-बिन्दु हो जाता है। साधारणतः यह दोष-रूपमें नहीं माना जाता। चक्षु-पटलके आवरक-तन्तु गदले हो जाया करते हैं।

जब यह बहुत गहरा हो जाता है, तो अस्वच्छ तन्तु निकाल दिया जाता है। उस समय ठीक उपयुक्त चश्मा व्यवहार करनेपर दूरके पदार्थ सहजमें ही दिखाई देते हैं और लिखा-पढ़ा जा सकता है।

मोतियाबिन्दु होनेकी खबर मिलते ही, बायोकेमिक दवाएँ अगर कुछ अधिक दिनोंतक सेवन की जायें, तो मोतियाबिन्दु आप-से-आप ही कट जा सकता है, अर्थात उसके शोषण हो जानेकी सम्भावना रहती है। बीच-बीचमें दवा खाते रहनेसे मोतियाबिन्दुका पर्दा गहरा और गाढ़ा नहीं होता और बढ़ता भी नहीं है। पर यदि पर्दा गहरा हो जाये तो कटवा देना ही एकमात्र उपाय है। उस अवस्थामें नश्तर लगवानेमें देर करनेसे आँख नष्ट हो जानेकी सम्भावना हो जाती हैं।

चिकित्सा ।

कैल्केरिया-फ्लुयोरिका ।—धुँधली-दृष्टि, मोतियाबिन्दु तेजीसे बढ़ता जाता है। इस नमकसे पर्दा फट जाता है। उपदंशवाले धातुमें यह ज्यादा फायदेमन्द है।

कैल्केरिया-फास ।—माथेके दाहिने अंशमें तकलीफ ; आँखके चारों ओर दर्द और यन्त्रणा ; आँखोंमें थकान-सी मालूम होना ; आँख अकड़ी और क्षीण मालूम होना ; सरमें चक्कर आना ; ये सब लक्षण कैल्केरिया-फासके सेवनसे

बहुत जल्द दूर हो जाते हैं। मोतियाबिन्द आरम्भ होनेके पूर्वमें ही ये लक्षण सब प्रकट होते हैं। यह लवण मोतियाबिन्दका बढ़ना रोक देता है, उसकी बहुत बार परीक्षा हो चुकी है।

———
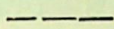
सर्दी।

(Catarrh)

एकाएक हवाकी अवस्थाका बदल जाना अर्थात गर्मीके दिनोंमें हवा एकदम ठण्डी हो जाना। इस देशकी पुरवा हवा, बदली इत्यादि नैसर्गिक कारणोंसे सर्दी होती है। इसके अलावा खेल-कूद या दौड़-धूप अथवा परिश्रम करने बाद, धूपमें रहने बाद, शरीरके गरम रहनेकी अवस्थामें ही सर्द चीजें या पानी पी लेना—प्रभृति कारणोंसे भी सर्दी हो जाती है।

साधारणतः लोगोंकी यह एक भ्रान्त धारणा है, कि "पेट गरम" होनेपर ही सर्दी होती है। सर्दी होनेपर स्वभावतः कब्जियत हो जाती है और इसी कारणसे यह भ्रान्त धारणा उत्पन्न हो गयी है।

छोटी माता, चेचक, इन्फ्लुएँजा प्रभृति कितने ही रोगोंके आरम्भमें सर्दी होती है; उन सब रोगोंको लिखनेके समय उसपर विचार किया जायगा।

यहाँ साधारण सर्दीकी चिकित्साका वर्णन किया जाता है.

कितनोंको ही सर्दी होनेकी धातु ही दिखाई देती है। इसके अलावा कितनोंको ही पुराने भावकी सर्दी बारहो महीने लगी रहती है।

पारासे बनी दवाओंका अपव्यवहार, अधिक मात्रामें या अधिक दिनोंतक "पोटास आयोडाइड" नामक दवाका सेवन करनेकी वजहसे सर्दी होती है, इस ढङ्गके औषधसे उत्पन्न हुई सर्दीकी चिकित्सा करनेके लिये सबके पहले उन दवाओंका सेवन ही बन्द कर देना चाहिये।

नाकमें जलन, आँखमें जलन, नाकसे पतला पानीका स्राव, छींक, सर भारी या सरमें दर्द, थोड़ा-थोड़ा सिहरावन मालूम होना, आलस्य, कब्जियत, ज्वर-भाव, आँखसे पानी गिरना इत्यादि सर्दीका लक्षण बना रहता है। क्रमसे नाककी ठोर लाल हो जाती है, बार-बार नाक छिड़कनेके कारण नाकमें दर्द होता है, श्वास लेनेमें तकलीफ होती है। कितनी ही बार एक नाक या एक साथ दोनों ही नाकोंकी सर्दी सूखकर नाक बन्द हो जाती है। इसको ही "नाक सटना" कहते हैं। किसी २ रोगीकी नाकका स्राव इतना जलन करनेवाला होता है, कि नासारंध्रके किनारे और ऊपरी ओष्ठकी खाल उधड़ जाती है या जखम हो जाता है। बहुत तेज सर्दीमें स्वर भारी हो जाता है और सर्दी निम्नगामी होकर कण्ठनली और श्वास-नलीतक आक्रमण कर देती है और इन सब स्थानोंमें प्रदाह पैदा हो जाता है। उस अवस्थाकी चिकित्सा यथा-स्थान वर्णनकी जाती है।

चिकित्सा ।

फेरम-फास ।—सर्दीकी पहली अवस्था। नाकसे जलस्राव, नाकके भीतरकी झिल्लीका लाल हो जाना; माथा भारी; ज्वर मालूम होना; छींक; साँसके साथ नाकमें जलन।

कैलि-म्यूर ।—सर्दीकी दूसरी अवस्था। अण्ड-लालकी तरह स्राव; नाक बन्द हो जाना; सर्दी सूखकर माथेमें दर्द। नाकमें पपड़ी जमना।

नेट्रम-म्यूर ।—पतला साफ-सफेद बलगम; दुबले पतले रोगियोंकी सर्दी, पतला फेन भरा स्राव; छींक इन सब लक्षणोंवाली पुरानी सर्दीमें भी यह लवण लाभदायक है। घ्राणशक्तिका गायब हो जाना, किसी चीजकी भी गन्ध नहीं मिलती, सर्दीमें बाहर निकलने या परिश्रम करनेपर बढ़ जाता है। नाकमें जलन।

कैल्केरिया-फास ।—कण्ठमाला धातु-विशिष्ट बच्चा और बालक बालिकाओंको बार बार सर्दी; अण्डलालकी तरह स्राव; छींक और नाकके भीतर जखम; नाककी ठोर बरफकी तरह ठण्डी; नाक फूली और जखम भरी। कमजोर आदमियों की पुरानी सर्दी।

कैलि-सल्फ ।—पकी सर्दी; गाढ़ा पीली आभा लिये श्लेष्माका स्राव; सन्ध्याको और बन्द कमरेमें बढ़ना; खुली हवामें घटना; चर्मकी क्रिया बन्द, फेरम-फासका सेवन

करनेपर भी पसीना न होना। माथेमें तकलीफ और भार मालूम होना।

कैल्केरिया-सल्फ।—बहुत पकी सर्दी; गाढ़ा; गदला, पीवकी तरह बलगम निकलना, खून मिला बलगम।

नेट्रम-फास।—पाकाशयमें अम्लकी अधिकताके साथ पुरानी सर्दी। बालक और बालिकाओंके क्रिमि उपसर्गके साथ सर्दी श्लेष्मा पीली आभा लिये; जीभ पीले मैलसे ढकी, रोगीको अपनी ही नाकसे बराबर बदबू आया करती है।

मैग्नेशिया-फास।—बहुत ज्यादा सर्दीका स्राव होना; कभी सूख जाता है, कभी नाकसे पानी गिरने लगता है। नाक सट जानेवाली अवस्थामें बच्चे और बालक रोया करते हैं, उन्हें सहजमें ही शान्त नहीं किया जाता। किसी चीजकी गन्ध नहीं मिलती।

कालरा या हैजा।

(Cholera)

"कालरा" वैदेशिक शब्द है। ग्रीक शब्द chole (कोले) अर्थात पित्तसे यह कालरा शब्द उत्पन्न हुआ है। यह रोग पित्त-विकार होकर ही पैदा होता है। कालेरा-रोगीके मलमें पित्तका न रहना ही इस बातकी पुष्टि करता है।

कालराकी प्रकृति और तेजीके अनुसार इसका भिन्न भिन्न श्रेणी-विभाग किया गया है :—

(क) Cholera diarrhoeica ; इसमें वमनकी अपेक्षा दस्तकी अधिकता दिखाई देती है।

(ख) Cholera gastrica :—इसमें के अधिक होता है।

(ग) Cholera gastro-enterica:—इसमें दस्त और के सम भावसे चला करता है।

(घ) Cholera spasmodica :—इसमें ऐंठन, अकड़न आदिकी प्रबलता दिखाई देती है।

(ङ) Cholera sicca :—इसमें दस्त के नहीं होता ; पर एकाएक पतनावस्था आ जाती है ; समूची शक्ति मानों कोई छीन लेती है, सारा शरीर ठण्डा, नाड़ी लुप्त-प्राय ; आवाज़ बैठ जाती है और पेशाब बन्द हो जाता है।

(च) Cholera acute :—दस्त के होनेके पहले ही रोगी हतबुद्धि हो पड़ता है ; या भयानक रूपसे सरमें चक्कर आना ; या माथेमें भयानक भार मालूम होता है ; वक्षमें दबाव मालूम होता है। हाथ-पैर अवश रहते हैं ; इसके बाद तलपेटमें गड़गड़ाहट हुआ करती है। शरीरका ताप कुछ बढ़ जाता है, नाड़ी क्षीण ; पर तेज रहती है ; ओकाई, मिचली और वमन ; इसके बाद पित्त मिले या पित्तहीन पतले दस्त ; पेशाब रुकना।

(छ) Cholera inflammatoria :—दस्त और के की इतनी तेजी नहीं रहती ; नाड़ी स्थूल और तेज चलनेवाली,

शरीरमें तापकी अधिकता ; लाल आँखें ; मस्तिष्कमें रक्तकी अधिकता प्रभृति बहुतसे लक्षण प्रकट होते हैं।

बहुतोंके मतसे, अन्तवाली दोनों श्रेणियाँ हैजाके अन्तर्गत नहीं है।

साधारणतः हैजाका तीन विभाग ही विशेष प्रचलित है:—

(१) Cholerine (कालेरिन)।

(२) Cholera morbus (कालेरा मारबस)।

(३) Cholera asiatica (एशियाटिक कालेरा)।

इसमें पहला।—कालेरिन भोजनके दोषसे ही हुआ करता है। कच्चे फल, गुरुपाक खाद्य खाना ; ज्यादा परिणाममें भोजन ; दूषित पानी पीना ; सड़ी मछली, बासी तरकारी, बासी पूरी, दूषित मिठाइयाँ आदि खानेके कारण यह बीमारी पैदा हो जाया करती है। यह बीमारी एकदम फैल नहीं जाती, बल्कि जिस मनुष्यमें ये दोष रहते हैं, उनको ही होती है। हैजा महामारीके समय यदि किसीको ऐसा हो जाता है, तो गांववाले घबड़ा उठते हैं, इसमें पतले दस्तोंकी ही प्रधानता रहती है, मलमें अजीर्ण खाया हुआ पदार्थ दिखाई देता है ; पेट फूलना ; विकार और आक्षेप रहता है, पर लक्षणोंमें हैजाकी तेजी नहीं दिखाई देती, पतले दस्त ज्यादा आनेकी वजहसे इसमें भी पेशाब बन्द सा हो जाता है।

(२) कालेरा मार्बस।—यह महामारी और संक्रामक कालरासे अलग रोग है। यदि खाने पीनेकी चीजों

के साथ उपदाह करनेवाला पदार्थ पेटमें चला जाता है अथवा गरमीके दिनोंमें उफनी हुई (fermented) ताड़ी या खजूरका रस या बासी भात आदि अथवा बहुत ज्यादा पके फल इत्यादि खानेपर पाकाशयमें वह उफनी करता है। सूर्यके तापसे शरीरके गरम होनेपर अच्छी तरह विश्राम करने के पहले ही नहा लेना अथवा तर जगहमें जा बैठना इत्यादि आहार विहारके अनियम और दोषसे यह बीमारी पैदा होती है। यह बीमारी संक्रामक या स्पर्शाक्रमक (लरकुत) नहीं होती। तथा यदि ऊपर बताये कारण नहीं रहते तो एक शरीरसे दूसरेमें जाती भी नहीं है। प्रचण्ड लक्षणोंके साथ यह बीमारी एकाएक आरम्भ हो जाती है। भयानक मिचली दस्त और कै आरम्भ हो जाता है; पाकाशय और आँतोंमें भयङ्कर दर्द होता हैं; दस्त होनेके कारण जलीय भागका क्षय हो जाता है और इसीलिये पेशाब बन्द हो जाता है और पेशियोंमें ऐंठन पैदा हो जाती है, ये सब लक्षण प्रकट होते हैं। दस्त या कैके साथ दूषित पदार्थ निकल जानेपर बीमारी आपसे आप दब जाती है। पर ऐसा बहुत कम होता है। रोगकी तेजी चिन्ताकी बात नहीं रहती। पर यदि यह बीमारी जल्द ही दबा न दी जाय, ताकत घटकर मृत्यु हो जा सकती है या आराम होनेमें बहुत समय लगता है। यह बीमारी गरमीके दिनोंके अन्तिम भागमें ज्यादा होती है। इस समयके अलावा भी आम या कटहल खाकर, बहुतोंको यह बीमारी हो जाया करती है। बर्सातके दिनोंमें भी जब

इलिस मछली सस्ती हो जाती है, उस समय यह बीमारी फैलती है।

कालेरा मार्बस रोगका दस्त और कै हरा या पीली आभा लिये रङ्ग एकदम गायब नहीं होता। कभी कभी जब बीमारी बहुत ही सांघातिक आकार धारण करती है तो उस अवस्थामें चावल धोये पानीकी तरह दस्त कै आने लगते हैं। शायद ही कभी पेशाब भी बन्द होता है।

कालेरा एशियाटिका।—बीमारीका भयङ्कर रूप इसीमें दिखाई देता है। इस स्थानपर, रोगकी दो विपरीत प्रकृतियाँ भी प्रकाशित होती हैं; जैसे (क) Dry cholera अर्थात शुष्क लक्षणवाला हैजा, इसको कालेरा सिक्का (Cholera sicca) कहा जाता है; (ख) Malignant cholera अर्थात नया सांघातिक हैजा।

कालेरा सिक्का।—का परिचय ऊपर दिया जा चुका है।

नये सांघातिक हैजामें।—लक्षण सब बड़े ही तेज और बवण्डरकी तरह आ पहुंचते हैं और कई घण्टोंमें ही जीवनको समाप्त कर चले जाते हैं। इसमें पाकाशय या उदरमें दर्द नहीं रहता। पहली बारके दस्तके साथ कुछ मल निकलता है और पहले वमनमें जीर्ण या अजीर्ण कुछ खाया हुआ पदार्थ निकलता है। पर दूसरी बारका दस्त बिना किसी रंगका चावलके धोवनकी तरह होता है; उसमें बहुत

ही कम पित्तका रङ्ग रहता है और ऐसा ही वमन भी होता है, कभी कभी भातके फेनकी तरह या चावलके धोवनकी तरह दस्त होता है। आँतोंके कोषिक तन्तुके निकलनेकी वजहसे मलके साथ सफेद रूईकी तरह या दानेकी तरह पदार्थ या मैदेके चूरकी तरह पदार्थ निकल कर छिटक पड़ता है। कभी कभी रक्तका स्राव होनेके कारण मलका रङ्ग लाल आभा लिये या कुछ गुलाबी भी हो सकता है। पेट चिपक जाता है, और दुर्बलता और जीवनशक्तिकी पतनावस्था आ पहुंचती है, चेहरा पतला पड़ जाता है और सिकुड़ जाता है; आँख गड़हेमें धँसी जाती है और गलेकी आवाज बैठ जाती है, ऐंठन और अकड़न होती है, शरीर ठण्डा और लसदार पसीने से तर रहता है; नाड़ी बहुत चीण और सूतकी तरह रहती है, बीच बीचमें लोप हो जाती है। प्यास, बेचैनी, पेशाब पहले से ही एकदम बन्द हो जाता है; अचैतन्यावस्था, रोगी बेहोश की तरह पड़ा रहता है, तेजीसे साँस चलने लगती है और फिर मृत्यु हो जाती है। यही हैजाका असली चित्र है।

इस रोगके रोगीके मलमें comma bacilli नामक हैजाके विशेष जीवाणु मिलते हैं; पर उपरोक्त लक्षणोंके साथ साथ भी कभी-कभी कितने ही रोगियोंमें "कौमा वेसिलि" नहीं मिलते।

कालेरा-मार्बस जब किसी खास स्थानमें होता है या अव्यापक रूपमें किसी खास मनुष्यको होता है या उसके लक्षण बहुत हलके रहते हैं, तो उसे कालरा बताना कठिन हो जाता है।

भावी फल का निर्णय। नीचे लिखे विषयोंपर लक्ष्य रखकर इलाज करना पड़ता है :—

१। रोगको प्रकृति और प्रबलता।

२। रोगके विरुद्ध संग्राम करनेवाली रोगीकी शक्ति।

३। रोगीकी पारिपार्श्विक अवस्था।

ये तीनों ही विषय एक दूसरेपर निर्भर करते हैं। ऐशियाटिक कालेरामें रोगीकी जीवनी-शक्ति पहले या दूसरे दस्तके बाद ही कमजोर हो जाती है। इसीलिये इस रोगसे मृत्यु-संख्या अधिक मिलती है।

चिकित्सकको रोगीकी पारिपार्श्विक स्थितिपर तेज नजर रखनी चाहिये ; सैकड़े ९९ भाग, यह बीमारी दरिद्रोंको ही होती है। मैला शरीर, गन्दी जगहमें रहना, गन्दी तलैया और कूएँका पानी पीना ; बासी, सड़ा और गन्दा भोजन ; इन्हीं कारणोंसे गरीबोंको इतना अधिक हैजा होता है। उनमें ज्ञान और धन दोनोंकी ही समान भावसे कमी रहती है। इसीलिये उनमें जब व्यापक रूपसे हैजा फैल जाता है, तो उसकी गति रोकना मुश्किल हो पड़ता है। रोगीका मल और वमन लगा दूषित वस्त्र तालाबमें धोने या कूएँके पास धोनेपर, उनका पानी दूषित हो जाता है और पानी पीनेपर या उस पानीसे मुँह धोनेपर या नहानेके कारण हैजा फैलता है। हैजा रोगीके वमनमें और मलमें मक्खी बैठकर, यही मक्खी जिस भोजन-सामग्रीपर बैठ जाती है, वही दूषित हो जाता है। यह बात प्रत्येक मनुष्यको स्मरण रखनी चाहिये।

इस तरह दूषित पानी और खाद्यसे ही हैजा महामारी देशभरमें फैल जाती है।

जबतक रोगीके मलमें पित्तका रङ्ग नहीं आ जाता और रुका हुआ पेशाब फिरसे नहीं होने लगता, तबतक रोगीके आराम होनेमें सन्देह ही बना रहता है।

बायोकेमिक विचार।

चावलके धोये हुए पानीकी तरह मलमें रूईकी तरह पदार्थ अगर तैरता रहे या जम जाये, तो हैजाकी यही असली मूर्त्ति है। स्नायु-विधानके धूसर वर्णके पदार्थ जब विशृङ्खल हो पड़ते हैं, तब वे तन्तु कोष सब इस तरह अपनी जगहसे हटकर और बाहर निकलकर रोगीमें कमजोरी और फिर पतनावस्था पैदा कर देते हैं। पर इसके पहले वे रक्तके जलीय भागको अलग कर देते हैं और इस विघटनका कारण होता है,—नेट्रम-म्यूर लवणके परमाणु और क्रियाकी विशृ-ङ्खलता। नेट्रम-म्यूर लवणकी धारा और शृङ्खलामें गड़बड़ी होनेपर, रक्त और जलका आकर्षण स्खलित हो जाता है तथा रक्त और रक्त-रस (blood-serum) से पानी निकल जाता है। इसके बाद यह पानी तलपेटमें जा पहुँचता है।

इस स्थानपर फिर नेट्रम-सल्फ लवणका सम्पर्क आ गया है। इस ग्रन्थके मेटिरिया-मेडिकावाले अध्यायमें नेट्रम-सल्फकी वर्णना करते हुए बताया गया है, कि रस और रक्त-

रसको जलीय भागका नियन्त्रण नेट्रम-सल्फके द्वारा ही होता है। इस लवणके परमाणुओंके अनुपातसे ज्यादा जल जब सञ्चित हो जाता है, तो शरीरकी शृङ्खलामें गड़बड़ी पैदा हो जाती है। स्नायु, पेशी तथा सभी तन्तुओंमें यह अतिरिक्त पानी फैल जाता है और शारीरिक क्रियाके स्वाभाविक नियमके अनुसार आँतोंमें जाकर पतले दस्त या हैजाको उत्पन्न करता हैं। प्रकृतिकी किसी रहस्यमयी क्रियाके कारण यह अतिरिक्त इकट्ठा हुआ पानी केवल आँतोंकी राहसे ही निकलता है। शरीरके दूसरे-दूसरे द्वार मानो इसके लिये बन्द हो जाते हैं; मूत्र-मार्ग सूख जाता है, त्वचाका छेद मानो बन्द हो जाता है।

नेट्रम-सल्फ और नेट्रम-म्यूर इन दोनों लवणोंकी इस विशृङ्खलताको लक्ष्यकर १८५२ ईस्वीमें बायोकेमिक-चूड़ामणि डाक्टर Peyton साहबने कहा है—खूनके भीतरके इन अजैव लवणोंकी पूर्ण करनेके लिये रक्तके उपादान यथा-सम्भव सम-परिमाणमें लवणका जलीय-द्रव तैयारकर रोगीकी शिराकी राहसे प्रयोग करनेपर (intravenous saline injection) आश्चर्य-जनक लाभ होता दिखाई देता है। उस समय उनके इस उपदेशको चिकित्सक-मण्डलीने ग्रहण नहीं किया; पर अब?

उत्तापकी अधिकताको भी कालरा रोगका कारण माना जाता है, जो अधिक देरतक धूपमें काम करते हैं, उनको ही यह रोग अधिक होता दिखाई देता है। उत्तापकी अधि-

कताके साथ हवामें तरी, यह रोग पैदा करनेवाली अनुकूल प्राकृतिक अवस्था है। ठण्डी और सूखी ठण्डी हवामें यह बहुत कम होता है।

प्रतिषेधकके रूपमें भी नेट्रम-सल्फ एक श्रेष्ठ दवा है। गरमीके दिनोंमें खासकर जो जगह सीड़-भरी (damp) स्वभावतः तर रहती है, उस स्थानके रहनेवालेको हैजा या विसूचिका व्यापक-रूपसे होनेकी सम्भावना देखते ही रोज दो-एक बार नेट्रम-सल्फ सेवन करानेपर और खाना-पीना नियमित कर देनेपर रोग होनेका भय दूर हो जाता है।

औषध-प्रयोग।—इस रोगमें पाँच मिनिट के अन्तरसे दवा देनेकी जरूरत होती है।

प्यासके लिये, पानी खौलाकर ठण्डाकर, रोगीको पीनेके लिये देना चाहिये। भरपूर पानी पीनेपर लाभके सिवा हानि नहीं होती। अगर पेटमें वायु अधिक हो तो कच्चे नारियलका पीना मना है, नहीं तो कच्चे नारियलका पानी भी दिया जाता है।

एक बोतल गर्म पानीमें चायके चम्मचसे आधा चम्मच रसोईके काममें आनेवाला नमक (यह नमक डिस्पेन्सरीमें अच्छा मिलता है) या बायोकेमिक नेट्रम-म्यूर, गलाकर एक घण्टेके अन्तरसे मलद्वारमें प्रयोग किया जाता है। इससे ३-४ घण्टोंमें ही खासा फायदा होता है। यह लवण-द्रव बहुत धीरे-धीरे प्रयोग करना उचित है।

चिकित्सा ।

फेरम-फास ।—रोगके आरम्भमें ही इसका प्रयोग करनेपर रोगकी गति रुक जाती है। इसके साथ ही पर्याय-क्रमसे कैलि-फासका प्रयोग किया जाता है। गर्मीके दिनोंमें धूपकी गर्मीमें रहनेके बाद अगर हैजा हो जाये तो इससे बहुत फायदा होता है।

कैलि-फास ।—मल चावल धोये पानीकी तरह या बासी भात रखे हुए पानीकी तरह; मलमें बहुत बदबू; पतनावस्था, नाड़ी प्रायः लुप्त; चेहरा उतरा हुआ अथवा नीली आभा लिये, नख पीली आभा लिये।

नेट्रम-सल्फ ।—पानीकी तरह पतला मल बड़े वेगसे निकलता है; जीभ हरी आभा लिये भूरी या हरी आभा लिये धुमैली मैल चढ़ी; जीभके पीछेकी ओर चिकना मैल। मुँहका स्वाद तीता। पेटमें दर्द; पित्त-मिश्रित वमन। इसे अन्यान्य उपयोगी औषधके साथ पर्याय-क्रमसे प्रयोग करना चाहिये। यह हैजाका उत्तम प्रतिषेधक है।

मैग्नेशिया-फास ।—दस्त, कै, दर्द और ऐंठन; कैलि-फास और फेरम-फासके साथ पर्याय-क्रमसे इनका प्रयोग किया जाता है। पाकाशय-प्रदेशको छूनेपर दर्द होता है। पेटमें दर्द; पेट फूलना; बार-बार डकार; पर डकार आनेपर भी आराम न मिलना। वमन और लगातार ओकाई;

बिना किसी रङ्गके दस्त; मल बड़े वेगसे निकलता है; आमाशय रोगकी तरह पेटमें मरोड़का दर्द होता है। पेट और पैरकी पोटलीमें ऐंठनका दर्द। पेशाब करनेके समय तकलीफ या पेशाब रुक जाना; श्वास-कष्ट; वक्षमें दबाव मालूम होना; हिचकी।

नेट्रम-म्यूर।—पानीकी तरह बिना किसी रङ्गकी कै; बुलबुले-भरी, साफ चिकने मैलसे ढकी जीभ; पेटमें दर्द मुँहका स्वाद नमकीन; बहुत पतला, बिना किसी रङ्गका या पीली आभा लिये दस्त; पाखाना हो जाने बाद मलद्वारमें जलन; कुछ खून-मिले पतले दस्त। जुलाब या दूसरी तेज ऐलोपैथिक दवाओंके सेवनके बादके उपसर्गके रूपमें बीमारी। गर्म पानीके साथ तैयार किया हुआ इस लवणका द्रव मल-द्वारकी राहसे प्रयोग करनेपर तुरन्त फायदा होता है। इसके साथ भी पर्याय-क्रमसे कैलि फासका प्रयोग करना चाहिये।

हैजाकी प्रति-क्रिया।

रोगकी पतनावस्थाके बाद, जब धीरे-धीरे लुप्त नाड़ी लौट आती हैं, तो रोगी क्रमसे आराम होनेकी ओर अग्रसर होता है, उस समय अगर कोई दूसरा उपसर्ग पैदा हो जाता है, तो फिर कुछ थोड़ा-सा युद्ध करनेकी जरूरत होती है। नीचे लिखे कई उपसर्ग हमेशा होते दिखाई देते हैं।

१। दस्त और कै अच्छी तरह दमन हो जानेके बाद एकाएक फिर आरम्भ हो जाते हैं; परन्तु इस समय मल

अकसर पीली आभा लिये हरा होता दिखाई देता है। वमन बिना किसी रङ्गका और अण्डलालको तरह होता है। यह उपसर्ग बहुत जल्द पथ्य दे देनेके कारण होता है। धीरजके साथ कुछ देरसे पथ्य देनेपर रोगीको कोई हानि नहीं होती; पर उपयुक्त समयके पहले पथ्य दे देनेसे बहुतसे उपसर्ग पैदा हो जाते हैं और रोगीका जीवन संशयमें डाल देते हैं। इस समय अतिसारकी तरहकी ही चिकित्सा करनी चाहिये।

२। ज्वर।—हैजा रोगीके जल-रहित रक्तमें जब फिर स्वाभाविक परिमाणसे जल आने लगता है, तो रक्त-प्रवाह नियमित होनेके समय यह उपसर्ग पैदा हो जा सकता है। फेरम-फासके प्रयोगसे यह बोखार आराम हो जाता है। किसी-किसी रोगीको ज्वरके साथ आमाशय रोगकी तरह श्लेष्मा-मिला मल और कूथन रहती है। फेरम-फासके साथ पर्य्याय-क्रमसे कैलि-म्यूरका प्रयोग करना चाहिये।

३। रोगके बादको कमजोरी।—पुष्ट करनेवाला पथ्य देनेपर भी रोगी तेजीसे दुबला होता जाता है। शय्याक्षत पैदा हो जाता है, आँखकी कनीनिकामें जखम पैदा होता है, मसूढ़ेसे रक्त-स्राव हुआ करता है; ऐसी अवस्थामें "कैलि-फास" और "फेरम-फास" पर्यायक्रमसे प्रयोग करनेपर आरोग्य प्राप्ति हो जाया करती है। साइलिसिया और कैल्केरिया-सल्फ भी लक्षणके अनुसार प्रयोग किये जा सकते हैं।

४। क्रिमि।—बङ्गालमें अकसर यह उपसर्ग मौजूद रहता है। नाक रगड़ना, जननेन्द्रिय खुजलाना, मलद्वारको

खुजलाना, अकड़न इत्यादि उपसर्ग देखनेपर नेट्रम-फासका पर्यायक्रमसे प्रयोग करना चाहिये।

पथ्य।

पथ्यके सम्बन्धमें विशेष सतर्क रहनेकी जरूरत है, जबतक के होना बन्द न हो जाये और मलमें रङ्ग न आ जाये तबतक पानी खौलाकर और ठण्डाकर वही पिलाना चाहिये।

जब मलमें रङ्ग आ जाये, तो आरारोट सिझाकर खूब पतला, नमक मिलाकर खानेको देना चाहिये। उसमें दो-चार बूंद कागज़ी नीबूका रस मिला देनेपर अच्छी सुगन्ध आ जाती है और रोगी स्वादसे खाता भी है। पित्तकी स्वाभाविक क्रिया फिरसे जारी होने बाद, अगर रोगीको अच्छी तरह भूख मालूम हो और मल गाढ़ा और पीले रङ्गका हो और हिचकी प्रभृति किसी तरहका उपसर्ग न रहे तो गंदभादुलियाके साथ कच्चा केला और गूलर सिझाकर वही रसा या शोरबा अथवा इस शोरबाके साथ बार्ली या आरारोट मिलाकर देना चाहिये। चार-पाँच दिनोंतक यह सहन होजानेपर भातभी इसी तरहका शोरबा मिलाकर देना चाहिये। इस शोरामें किसी तरहका मसाला न मिलाना चाहिये।

इस बीमारीमें किसी तरहका फल या फलका रस देना मना है; रोगीके पाकाशयकी वर्त्तमान अवस्थामें नहीं देना चाहिये; क्योंकि इनसे अन्तरुत्सेचन पैदा होकर महान गड़बड़ पैदा हो सकती है।

दो-चार दिनोंतक अन्नका पथ्य देनेके बाद, थोड़ी मात्रामें ठण्डे पानीसे बदन पोंछ देना चाहिये। इसके बाद अभ्यासके अनुसार रोगी स्नान कर सकता है।

रोगीका विवरण।

रोगी—पीताम्बर जाना, उमर २८ बरस; पेशा—बस काण्डक्टर। दिनभर काम करनेके बाद, रातको ११ बजनेके समय होटलमें खाकर घरमें आकर सोया। जेठका महीना, गर्मी अधिक रहनेकी वजहसे दो-तीन बार बरफका पानी पिया था। रातके ३ बजनेके समय सिहरावन मालूम होकर तेज सर-दर्द और पेट गड़गड़ानेकी वजहसे उसकी नींद खुल गयी। पाखाना लग आनेके कारण पाखाने जाना पड़ा और बहुत-सा पानीकी तरह दस्त हुआ; थोड़ा-सा पेशाब भी हुआ था। इसी समयसे उसे नाभिके पास धीमा-धीमा दर्द आरम्भ हुआ। सवेरे ५ बजे फिर पाखाने जाना पड़ा; मल पानीकी तरह, बड़े वेगसे हुआ; रङ्ग कुछ हलका-सा; पेशाब न हुआ। आध घण्टा बाद ही जोरकी कै आरम्भ हुई। कुछ देर बाद बहुत-सा अजीर्ण भात और तरकारी उसके साथ निकली; एक घण्टा बाद फिर वमन हुआ; पर इस बार अण्डलालकी तरह चिकना बिना किसी रङ्गका वमन हुआ; आध घण्टा बाद फिर दस्त आया। इस बार चावलके धोवनकी तरह, मलमें बदबू, नाभिके पास दर्द; पेशाब बिलकुल नहीं हुआ; समूचे निम्नाङ्गमें ऐंठन आरम्भ हो गयी।

अब रोगी इतना कमजोर हो गया कि उसे बोलनेमें तकलीफ होने लगी; माथेमें भी जोरोंका दर्द था।

इस समय उसे दस मिनटका अन्तर देकर पर्यायक्रमसे कैलि-फास ६x और फेरम-फास ३x का प्रयोग किया गया। उस समय दिनके दस बजे थे। एक घण्टा बाद फिर उसी तरह दस्त आया; पर पेशाब नहीं हुआ; सर-दर्द प्रायः तीन हिस्सा चला गया है; पर नाभिका दर्द और ऐंठन पहलेकी तरह ही है। रोगी चेहरा, आँखें सब धस गयी हैं, तेज प्यास है, आवाज बैठ गयी है, बहुत अधिक बेचैनी है। औषध दिया गया—पाँच मिनटके अन्तरसे कैलि-फास और मैग्नेशिया-फास पर्याय-क्रमसे; दो बोतल गरम पानी एक चायका चम्मच परिमाण नमक गलाकर धीरे-धीरे मल-द्वारमें प्रयोग किया गया और प्रायः ४५ मिनटके अन्तरसे तीन बार पिचकारी दी गयी। इसके बादसे ही रोगीकी अवस्थाका खासा परिवर्त्तन होने लगा। दवाकी मात्राका अन्तर २० मिनटके अन्तरसे किया गया। दिनके दो बजनेके समय दस्त आया,—मल पहलेकी ही तरह, पर परिमाणमें बहुत कम हुआ, वमन नहीं हुआ, पेशाब भी नहीं हुआ; आध घण्टेके अन्तरसे दवा दी जाने लगी। सन्ध्याके समय फिर दस्त आया,—परिमाणमें कुछ अधिक हुआ; परन्तु पीली आभा लिये हरे रङ्गका हो गया। नाभीके पास दर्द नहीं; ऐंठन भी बहुत कम। आध घण्टा बाद एक छटांक मात्रामें गाढ़ा सरसोंके तेलके रङ्गका पेशाब हुआ, प्यास भी पहलेकी

अपेक्षा बहुत घट गयी। रातके दस बजनेके समय फिर दस्त आया,—मल गाढ़ा हुआ और मलका रङ्ग भी गहरा हो गया। प्रायः एक छटांकके अन्दाज पेशाब हुआ, रङ्ग पहलेकी अपेक्षा बहुत कुछ हलका हो गया था। नाभीके पास दर्द भी नहीं था, ऐंठन बहुत देर बाद एक-एक बार होती थीं। हालत बहुत कुछ सुधर गयी और उसे नींद आती देख, सेवा करने-वालोंको कह दिया गया कि नींद आनेपर रोगीको जगाकर दवा न दी जाये।

दूसरे दिन खबर मिली कि रोगी रातके १२ बजेसे दूसरे दिन सवेरे ५ बजेतक सोया था। अब कुछ खानेकी मांग रहा है। दवा केलि-फास तीन घण्टेके अन्तरसे दी जाने लगी; पथ्य गरम पानीको ठण्डाकर इसके सिवा और कुछ नहीं। आज दिनभरमें दो बार दस्त और तीन बार खूब खुलासा पेशाब हुआ। रातमें नींद भी अच्छी ही आयी। खानेके लिये सबको बहुत तङ्ग कर रहा है। दूसरे दिन आरारोट खूब सिझाकर पतला-पतला उसमें कागजी नीबूका रस डालकर पथ्य दिया गया। दवा केवल दो मात्रा केलि-फास। पाँचवें दिन अन्नका पथ्य देकर दवा बन्द कर दी गयी।

(२)

बशीरुद्दीन मण्डल, उमर ४२ वर्ष, पेशा—डाकप्यून। भादो महीनेके अन्तमें एक दिन अपने दोस्तोंके साथ उसने खूब ताड़ी पी और ताड़की ही फुलौरियाँ खायीं। रातके १२ बजे लगातार दो बार वमन होकर दस्त आरम्भ हुआ।

तीसरे बारकी के बिलकुल सफेद बिना किसी रङ्गका पानी ; दस्त कुछ हरे रङ्गके और पेटमें भयानक दर्द होने लगा। चार बार दस्त होने बाद पेशाब बन्द हो गया। इसके बाद पैरकी पोटली और वक्षस्थलकी पेशीमें यन्त्रणादायक ऐंठन आरम्भ हुई और सवेरे पाँच बजेसे इलाज आरम्भ हुआ।

केलि-फास और मैग्नेशिया-फासका पर्याय-क्रमसे पन्द्रह मिनटके अन्तरसे प्रयोग किया गया। दिनके १० बजते-बजते वमन और दस्तका परिमाण घटने लगा और समयका अन्तर भी बढ़ने लगा, पर वमनकी प्रकृति बदल गयी और प्यास पहलेकी अपेक्षा बढ़ गयी। इस समय वमन साफ पानीकी तरह होता था और उसमें सूतकी तरह पतला श्लेष्माकी तरह पदार्थ रहता था ; बहुत वेग और आवाजके साथ वमन होता था। वमनके अन्तिम भागमें फेन-भरा थूक कुछ निकलने लगा। दस्त बासी भातके पानीकी तरह, पर कुछ खून मिला मालूम होता था। औषध—नेट्रम-म्यूर और केलि-फास पर्याय-क्रमसे २० मिनटका अन्तर देकर प्रयोग किया जाने लगा और गरम पानी ठण्डाकर पिलाया जाने लगा।

सन्ध्याके बाद प्रायः आध-पाव परिमाणमें पेशाब हुआ। वमन बन्द हो गया है, दो घण्टेके अन्तरसे दवा दी जाने लगी। रातके दो बजने बाद रोगीको नींद आयी और दूसरे दिन सवेरे ६ बजेतक खूब सोता रहा ; नींदके बाद हिचकी आरम्भ हुई, दस्त के कुछ नहीं। यह एक विचित्र ही

ढङ्गकी हिचकी थी। आध घण्टा या ४५ मिनटके अन्तरसे एक-एक हिचकीका वेग आता था और ५।७ मिनटतक रहता था, जोरकी भयङ्कर आवाज होती थी और एक मिनटमें २०-२५ हिचकियाँ आती थीं। प्रत्येक बार ऐसा मालूम होता था, मानो अब रोगीका प्राण गया। मैग्नेशिया-फास (६x) एक ड्राम प्राय: ४ आउन्स अन्दाज गर्म पानीमें गला-कर एक चम्मच पानीकी मात्रासे पाँच मिनटके अन्तरसे प्रयोग किया जाने लगा और पर्यायक्रमसे आध घण्टेके अन्तरसे फेरम-फास (६x) चूर्णका प्रयोग किया जाने लगा। लगभग १ बजेतक हिचकी बन्द हुई और सुस्तीके कारण रोगी सो गया। बारह बजे रातके समय भरपूर पेशाब हुआ, पेशाबका रङ्ग साफ था और रोगी खानेको माँगने लगा। पानीके सिवा और कुछ भी नहीं दिया गया। दूसरे दिन कोई उपसर्ग नहीं है,—यह देखकर तीसरे पहर आरारूट तैयार कर दिया गया। तीसरे दिन उसे गन्दभादुलियाका शोरबा और पाँचवें दिन अन्नका पथ्य दिया गया।

बच्चोंका हैज़ा।

(Cholera Infantum)

हमारे देशमें गर्मीके दिनोंमें और वर्षाके अन्तमें, शरत्-ऋतुमें यह रोग होते देखा जाता है। गर्मीमें उत्तापकी अधि-

कता और वर्षाके अन्तिम भागमें वायुकी तरीकी वजहसे साधारणतः शरीरके तेजका क्षय हो जाता है और इस समय अगर किसी तरहका अनियम हो जाता है, रोगको रोकनेकी शक्ति नहीं रह जाती; इसीलिये ऋतु-परिवर्त्तनके समय आहार-विहारपर खूब अधिक खयाल रखना चाहिये। रोज खुली हवाका सेवन, नित्य स्नान, हलकी और जल्द पचनेवाली चीजें खाना, यही कर्त्तव्य है।

एकाएक तेज और बहुत ज्यादा वमन और दस्त—इस रोगका मुख्य लक्षण है। कितनी ही बार उदरामय-ग्रस्त बच्चोंको ये रोग-लक्षण एकाएक प्रकट हो जाते हैं और तूफानकी तरह बीमारी बढ़ जाती है। बच्चोंका जन्मसे ही दुबलापन और कमजोरीकी वजहसे रोगके आक्रमणकी राह पहलेसे ही साफ हुई तैयार रहती है। इसके ऊपर अनुचित खाद्य, उत्तापकी अधिकता, दूषित वायु, स्तन पिलानेवाली माताका न पचनेवाली अगट सगट चीजें खाना, बच्चोंका दाँत निकलना इत्यादि रोगके उत्तेजक कारण माने जाते हैं।

खूब आदमियोंसे भरे बड़े शहरोंमें, पतली गलीमें, रोशनी और हवासे रहित घरमें और गन्दी बस्तियोंमें जो सब गृहस्थ रहते हैं, उनके बच्चोंको यह बीमारी ज्यादा होती दिखाई देती है। साधारण उदरामय रोगमें, चिकित्सापर ध्यान न देने और पथ्यका नियम न पालन करनेकी वजहसे बच्चेकी जीवनी-शक्तिका क्षय होकर भी ऐसी बीमारियाँ पैदा हो जाया करती हैं।

लक्षण ।

प्रबल वमनके साथ रोगका पैदा हो जाना। पहले तो वमनमें खायी हुई चीज रहती हैं, पर इसके बाद ही केवल खट्टे पानीकी कै हुआ करती है ; दस्तमें भी पहले मल मिला रहता है। इसके बाद बिना किसी रङ्गके पतले दस्त या हरे रङ्गके पानीकी तरह दस्त और उसमें सेंवारकी तरह पदार्थ तैरा करते हैं और श्लेष्माके लच्छे बीच-बीचमें दिखाई देते हैं। तेज प्यास रहती है, बच्चा सीप या चम्मच पकड़कर स्वयं ही पीने लगता है और छोड़ना नहीं चाहता। साथमें उत्ताप, नाड़ी चीण और तेज, हाथ-पैर ठण्डे, आँख गड़हेमें धँसी और अधमुँदी, भयानक कमजोरी और दुबलापन।

मल बड़े वेगसे निकलता है, मानो पिचकारीसे निकल रहा है। इसके बाद आप-ही-आप मल निकला करता है। कहीं-कहीं उदरमें दर्द और कूथन भी दिखाई देती है ; बच्चा अपने दोनों पैर पेटकी ओर सिकोड़कर रोया करता है।

रोग-वृद्धिके साथ दस्तकी संख्या भी बढ़ा करती हैं। गदले पानीकी तरह या मांस धोये पानीकी तरह बदबूदार दस्त बार-बार हुआ करता है। आँख ज्योति-हीन हो जाती हैं, पलक नहीं गिरती या आँखें गड़हेमें धँस जाती हैं और चमकीले काँचकी तरह मालूम होती हैं, पासकी कोई चीज या मनुष्यकी तरफ लच्य नहीं रहता। दोनों ओंठ सूखे रहते हैं, बदरङ्ग होकर सिकुड़ जाते हैं। इस समय अधिकांश

स्थानोंमें बच्चेके मस्तिष्कमें विकार पैदा हो जाता है, माथा हिलाया करता है और कराहा करता है। अन्तमें अचेतन्या-वस्था (बेहोशी) पैदा हो जाती है और अकड़न होकर बच्चेकी मृत्यु हो जाती है।

अगर २४ घण्टोंमें रोग दबा दिया जा सका तो आरोग्य होनेकी आशा रहती है। इस रोगकी गति इतनी तेज होती है, कि कई घण्टोंमें ही सब ध्वंस कर चला जाता है। अगर गरमीके दिनोंमें होता है तो एकदम दुःसाध्य हो जाता है। कितने ही स्थानोंमें रोगकी नयी तेजी दब जाने बाद, रोगका आकार पुराना और स्थायी अतिसारमें बदल जाता है।

पथ्य।

पानीको खूब खौलाकर, कुछ गर्म रहते रहते वही पीनेको और पथ्यमें देना चाहिये, इसमें चीनी, मीसरी या शुगर आफ मिल्क भी न मिलाना चाहिये। अगर कमजोरी बहुत हो और पतनावस्थाके लक्षण आ जायें तो यही पानी (अन्दाजन ४ औंस) एक मुर्गीके अण्डेका सफेद अंशवाला भाग मिलाकर कुछ नमक डाल, बीच बीचमें एक एक चम्मचकी मात्रामें दिया जा सकता है। ठण्डा पानी न देना चाहिये, उससे हानि पहुँचती है। सुसुम पानी पिलाना ही फायदा करता है।

अगर पाखाना गाढ़ा होने लगे और बारमें भी कम आने लगे तब खूब पतला आरारोटका पानी दिया जा सकता है। इसमें भी चीनी या मिसरी न मिलानी चाहिये। कुछ

नमक मिला लेना चाहिये। स्तन पिलानेवाले बच्चोंको माता का दूध न छुड़ाना चाहिये। सिर्फ दूध पिलानेवालीकी भोजन सामग्री पर नियन्त्रण रहना चाहिये। पर अगर माता के शरीरमें कोई दूषित रोग रहे तो बन्द कर देना चाहिये।

स्वाभाविक अवस्थामें मल लौट आनेके पहले दूध मना है। दूध देनेका समय होनेपर पहले दो-चार दिन बराबर मात्रामें दूध और पानी मिलाकर, एक उबाल आते ही उतार लेना चाहिये और ठण्डा होनेपर पीनेको देना चाहिये। इसके साथ एक टुकड़ा बेलका गूदा भी अगर खीला लिया जाये तो और भी अच्छा है।

औषध।

फेरम-फास।—ज्वर भाव, पानीकी तरह, अजीर्ण खायी हुई चीज मिला दस्त; लगातार ऊपर-के-ऊपर दस्त आना; तेज प्यास; अजीर्ण खायी हुई चीज मिला वमन; मस्तिष्कको गड़बड़ीके लक्षण, विकार, सर हिलाना, कराहना इत्यादि। मलके रङ्गके अनुसार उपयोगी दवाके साथ पर्याय-क्रमसे इसका प्रयोग करना चाहिये।

नेट्रम-फास।—इसका प्रयोग प्रतिषेधकके रूपमें होता है और कालरा रोगाधिकारमें भी इसका प्रयोग होता है। खट्टी गन्ध लिये अम्लकी अधिकताकी वजहसे शिशुके वमनमें खण्ड-खण्ड छाना निकलता है; फटे दूधकी तरह

वमन ; काफीके चूरकी तरह काले रङ्गका पदार्थ मिला वमन ; खट्टी गन्ध लिये हरा मल ; मलमें छानाकी तरह पदार्थ ; थक्का-थक्का गाढ़ा श्लेषा और कूथन। जीभके पिछले भागमें पीली आभा लिये मैलका रहना ; अगर क्रिमिके लक्षण रहें, अर्थात नाक खोंटना, मलद्वार खुजलाना इत्यादि रहनेपर यह दवा और भी ज्यादा उपयोगी है। लक्षणके अनुसार दूसरी दूसरी बायोकेमिक दवाओंके साथ पर्याय-क्रमसे इसका प्रयोग किया जाता है।

कैल्केरिया-फास।—दाँत निकलनेके समय जन्मके दुबले शीर्ण बच्चोंके हैजामें यह विशेष उपयोगी है। बिना किसी रङ्गका, बदबूदार, गरम, पानीकी तरह बहुत ज्यादा दस्त, पिचकारीकी तरह बड़े वेगसे निकलता है अथवा अजीर्ण खायी हुई चीज मिला हरे रङ्गका पाखाना होता है। बच्चा स्तनसे दूध पीनेके समय रोया करता है ; चेहरा पतला, उतरा हुआ और बेचैनी प्रकट करनेवाला ; बहुत अधिक रोना। बच्चोंको यह बीमारी होनेपर वे निषिद्ध पदार्थ खानेकी बहुत ज़िद किया करते हैं। फेरम-फासके साथ पर्याय-क्रमसे भी इसका व्यवहार होता है।

मैग्नेशिया-फास।—पेट फूलना, पेटमें दर्दकी वजहसे बच्चा अपने दोनों पैर पेटकी ओर सिकोड़ लेता है और रोया करता है। वायु निकलनेके साथ बड़े वेगसे दस्त

आया करते हैं। आक्षेप, मलके रङ्गके अनुसार उपयुक्त औषधके साथ इसका पर्यायक्रमसे प्रयोग करना उचित है।

कैलि-फास।—चावल धोये पानीकी तरह या बासी भातके नीचेके पानीकी तरह दस्त; मलमें बहुत बदबू; भयानक कमजोरी और पतनावस्था।

आनुसङ्गिक चिकित्सा।

चुनी हुई दवाके भीतरी प्रयोगके साथ, वही दवा गर्म पानीमें गलाकर मल-द्वारकी राहसे पिचकारी दी जाती है, इससे बहुत जल्द फायदा होता है।

अगर पेट फूलता हो तो तर कपड़ेका टुकड़ा पेटपर रखनेसे तुरन्त फायदा होता है। दोनों पैरोंपर गर्म पानीसे भरी रबरकी बोतल न मिले तो फ्लैनेलका टुकड़ा आगमें गरमकर प्रयोग करना अर्थात् सेंकना चाहिये। रोगीको पतनावस्थामें यही फ्लैनेल उसके पंजरेके दोनों ओर प्रयोग करना चाहिये। पेटमें अगर दर्द हो तो तलपेटको सेंकनेसे आराम होगा।

प्यास हो तो सुसुम पानी चायके चम्मचसे बार-बार प्रयोग करना उचित है; पर अगर इससे ज्यादा कै होती हो तो उसे बन्द कर देना चाहिये।

रोगीका विवरण।

श्री प्रभातचन्द्र बन्धोपाध्यायका पुत्र—अवस्था १६ महीनेकी। जेठ महीनेके अन्तके समयमें एक दिन दस बजनेके

समय वह एकाएक कै करने लगा। पहले तो फटे दूधकी कै हुई, उसमें बहुत अधिक खट्टी गन्ध थी; इस तरहका वमन ४-५ बार होनेके बाद केवल हरी आभा लिये पानीकी कै होने लगी। वमनके कुछ देर बाद ही दस्त आरम्भ हुआ। मल पहले पतला पीली आभा लिये, पर तीसरे दस्तमें, मलका रङ्ग चला गया और इसके बाद बासी भातके नीचेके पानीकी तरह दस्त होने लगा और उसमें श्लेष्माके टुकड़े भी मिले थे। दस्तमें खट्टी गन्ध थी, बच्चा बहुत रोता था, आकृति एकदम शीर्ण, पेट साधारण वायुसे भरा और फूला हुआ।

दिनके १२ बजे पर्याय-क्रमसे फेरम-फास और मैग्नेशिया-फासका १५ मिनटके अन्तरसे प्रयोग किया गया। तीन बजते-बजते पेटका फूलना और दस्त बहुत-कुछ घट तो गया, पर वमनमें किसी तरहकी कमी न दिखाई दी। इसी समय प्यासका लक्षण दिखाई दिया, बच्चा बड़े आग्रहसे सीपी पकड़-कर पानी पीने लगा। इस बार उसे पर्याय-क्रमसे फेरम-फास और कैल्केरिया-फासका १५ मिनटके अन्तरसे प्रयोग किया गया। रातके दस बजेतक भी वमनमें किसी तरहकी कमी न हुई; बल्कि उसकी आँखें धँस गयीं और अगल-बगल सर हिलाने लगा। इसी समय बहुत-कुछ पूछनेपर मालूम हुआ कि कई महीने पहले बच्चेके मलमें छोटी-छोटी क्रिमि दिखाई दी थी।

रात्रि ग्यारह बजेसे—नेट्रम-फास (६x) १५ मिनटके अन्तरसे प्रयोग किया जाने लगा और इस दवाका २० ग्रेन

४ औंस अन्दाजन गरम पानीमें गलाकर उसका आधा उसी समय पिचकारीसे मल-द्वारमें डाला गया और बाकी आध घण्टा बाद फिर उसी तरह पिचकारीके सहारे मल-द्वारसे दे दिया गया। आश्चर्यकी बात है, कि रातके १ बजे के आना बन्द हो गया और बच्चा सो गया। दूसरे दिन सवेरे ७ बजे उसकी नींद खुली, उस समय उसमें रोगका कोई भी लक्षण नहीं था। दो दिनोंतक उसे केवल आरारोटका पानी और नित्य तीन मात्रा नेट्रम-फासका प्रयोग किया गया। इसके बाद फिर दवा देनेकी जरूरत न पड़ी।

(२)

डाक्टर सी० आर० वोगिल, एम० डी० साहबने नीचे लिखा रोगीका विवरण दिया है :—

एक डेढ़ बरसका बच्चा था, उसे पानीकी तरह पतले हरे रङ्गके और श्लेष्मा मिले दस्त बार-बार आने लगे; दो दिनोंमें ही बच्चा बहुत कमजोर हो गया। बच्चा लगातार इस ओर उस ओर माथा हिलाता था। आँखें अधखुलीं, कराहता था और अगर नींद लगती थी तो चौंक उठता था। नाड़ी तेज, श्वास-प्रश्वास भी तेज, चेहरा उतरा हुआ सफेद; बीच-बीचमें सफेद अण्ड-लालकी तरह वमन। पहले—एक घण्टेके अन्तरसे फेरम-फास गर्म पानीमें गलाकर ७-८ मात्राका प्रयोग किया गया। इसके बाद केल्केरिया-फासके साथ पर्याय-क्रमसे एक घण्टेका अन्तर देकर प्रयोग किया गया। धीरे-धीरे बीमारी हटने लगी, दवा न बदली गयी।

इस चिकित्सासे लगभग १२ दिनोंमें बच्चा सम्पूर्ण आरोग्य हुआ।

मन्तव्य।

हमारे देशमें शिशु-हैजाके हजारों रोगियोंकी चिकित्साके सम्बन्धमें यही बात मालूम हुई और अनुभवमें आयी है, कि सैंकड़े ७५ स्थानोंमें फिरम-फास, कैल्केरिया-फास और मैग्ने-शिया-फासके प्रयोगसे यह रोग जल्दी कब्जेमें आ जाता है और आरोग्य हो जाया करता है।

सबके पहले दूध बन्द कर देना चाहिये और प्रचलित सागू और बार्लीके बदले आरारोट सिझाकर वही पानी पीने देना चाहिये।

स्तन पीनेवाले बच्चोंकी माताओंको जल्द पचनेवाला पुष्ट भोजनका प्रबन्ध न करना चाहिये। इसीलिये, अधिकांश स्थानोंमें ही चिकित्सासे फायदा नहीं होता या आरोग्य होनेमें बहुत देर होती है।

ताण्डव रोग।

(Chorea)

अङ्गरेजीमें इस बीमारीका दूसरा नाम St. Vitus dance सेण्ट वाइटस डैन्स है।

यह एक स्नायु-सम्बन्धी बीमारी है। पेशियोंका इच्छा न रहनेपर भी सिकुड़ना और अकड़ना इसका प्रधान लक्षण है। खब बचपनकी अपेक्षा लड़कपनमें ही यह बीमारी ज्यादा दिखाई देती है और बालकोंकी अपेक्षा बालिकाओंको यह बीमारी ज्यादा हुआ करती है। इस बीमारीके रोगीमें पहलेसे टानसिलकी गड़बड़ी भी कितने ही रोगियोंमें रहती दिखाई देती है। अवस्था प्राप्त मनुष्योंको भी यह बीमारी हो सकती है और ऐसा होनेपर शारीरिक क्षय हो जाया करता है। अगर अवस्था-प्राप्त मनुष्योंको यह बीमारी होती है, तो इसका नतीजा यह होता है, कि वह पागल हो जाता है और उसे पागलखाने भेजकर इलाज करवानेकी जरूरत आ पड़ती है। गर्भवती स्त्रीको भी यह बीमारी हो सकती है ; पर चिकित्साके उद्देश्यसे जल्दी-जल्दी संतानको बाहर निकाल लेना जरूरी नहीं हो पड़ता है। ऐसी आवश्यकता बहुत कम पड़ती है। स्नायु और पेशियोंमें जितनी ताकत है, उससे ज्यादा परिश्रम करना, बहुत डर, पाचनयन्त्रमें अम्लकी अधिकता, क्रिमि, न पचनेवाली चीजें खाना, हिस्टीरिया, पिता-माताके नैतिक चरित्रमें दोष, हस्तमैथुन, अस्वाभाविक रमण प्रभृति बुरे अभ्यास आदि बहुतसे कारणोंसे यह बीमारी पैदा हो जा सकती है।

शरीरके किसी अङ्ग-विशेष अथवा किसी विशेष पेशी या स्नायुका नियमित रूपसे, पर रोगीकी इच्छा-शक्तिके बाहर

होकर, सिकुड़ना और अकड़नेका लक्षण इसमें पैदा हो जाया करता है। किसी-किसीको शरीरका एक समूचा पार्श्व और किसीका केवल चेहरा या निचला जबड़ा या एक बाहु अथवा एक पैरपर रोगका आक्रमण होता है। इन सब अङ्गोंका संचालन ऐसा अद्भुत और अस्वाभाविक होता है, कि इस रोगके सम्बन्धमें अनजान मनुष्योंके पास वह कौतुक और हँसीकी बात हो जाती है।

बायोकेमिक विचारसे पेशी और स्नायुके सफेद सौत्रिक-पदार्थके परिपोषक अजैव-लवण मैग्नेशिया-फासकी कमी या क्षय, इस रोगका कारण माना गया है। इस अभावको पूर्ण कर देनेपर ही आरोग्य हो सकता है। उपयुक्त परिमाणमें मैग्नेशिया-फासका प्रयोग या जरूरतके अनुसार दूसरे-दूसरे लवणका पर्याय-क्रमसे प्रयोगकर चिकित्सा करना कर्त्तव्य है।

चिकित्सा।

मैग्नेशिया-फास।—अङ्ग-प्रत्यङ्गका अनैच्छिक—अर्थात इच्छा न रहनेपर भी हिल उठना और सिकुड़ना, अकड़न, चुप—बिना कुछ बोले कातर-दृष्टिसे देखते रहना। इन सब लक्षणवाले ताण्डव-रोगकी मैग्नेशिया-फास सबसे श्रेष्ठ दवा है। तोतलाना।

नेट्रम-फास।—क्रिमि या अधिक अम्ल मौजूद रहनेपर इसका प्रयोग करना चाहिये। जीभके पिछले भागमें

पीली आभा लिये या दूधकी तरह सफेदी रहना—यह इस लवणका निर्देशक लक्षण है ।

कैल्केरिया-फास ।—मैग्नेशिया-फासके प्रयोग से अगर पूरा-पूरा फायदा न हो, तो उसके बाद इस लवणका प्रयोग करना चाहिये । जिनको कण्ठमाला-धातु है, अथवा जिन रोगियोंमें खूनकी कमी है, उन्हें "मैग-फास" लवणके साथ पर्याय-क्रमसे व्यवहार करना चाहिये । तोतलाना ।

साइलिसिया ।—विकृत आँखें, पीला चेहरा, अकड़न, भयानक सपने देखना, नींदवाली अवस्थामें अङ्ग-प्रत्यङ्गोंका फड़कना और झटका लगना ; सामान्य क्रोध आनेपर ही रोग-लक्षणोंका बढ़ना । अगर क्रिमि रहे तो इसके साथ पर्याय-क्रमसे "नेट्रम-फास" का प्रयोग करना चाहिये ।

नेट्रम-म्यूर ।—पुरानी बीमारी, कोई चर्मका उद्भेद अगर दब गया हो और इसी वजहसे बीमारी पैदा हुई हो ; अकड़न ; सिकुड़न ; चिकनी, फेन-भरे पानीकी तरह सफेद मैलसे ढकी जीभ, उसके बगलमें छोटे-छोटे बुलबुले इकट्ठे हो जाना ; गर्दनका पतला पड़ जाना ; निचली आँत और सरलान्त्रके सूखेपनके साथ भयानक कब्जियत ; निराशा ; रोना ; बहुत बाधा-विपत्ति रहनेपर भी उछलकर कूद पड़नेका आवेग बीच-बीचमें पैदा हो जाता है । दाहिने अङ्गका सिकुड़ना ; पूर्णिमाके दिन रोगका बढ़ना ।

मन्तव्य ।

चिकित्सा आरम्भ करते ही रोगीको शय्यापर सुला रखना चाहिये। उसके कमरेमें किसी तरहकी गड़बड़ी न होनी चाहिये और किसी पारिपार्श्विक अवस्थाकी वजहसे रोगीमें उत्तेजना न पैदा हो जाये, इस विषयपर नज़र रखनी होगी।

अगर अकड़न या अङ्गका बहुत हिलना मौजूद रहे, तो रोगीको खाटपर न सुलाकर, फर्शपर ही बिछावन डालकर सुलाना चाहिये और उसके नीचे खूब मोटे गद्दे बिछा देना चाहिये।

इस बातपर नजर रखनी चाहिये, कि रोज कोठा साफ होता रहे अर्थात—खुलासा दस्त आयें। लक्षणके अनुसार दवाका सेवन और नियमित रूपसे कोठा साफ होनेमें अगर गड़बड़ी होती हो तो दो दिनका या एक दिनका अन्तर देकर ग्लिसरिन सपोजिटरीका प्रयोग करना आवश्यक है। इस बातपर भी लक्ष्य रखना चाहिये कि उपयुक्त परिमाणमें पेशाब होता है या नहीं। साबूदानाके साथ ३-४ बड़े खजूर या ८-१० दाना मुनक्का रोज सिझाकर खिलानेपर नियमित-रूपसे पाखाना साफ होता है।

मुर्गीका अण्डा और गायका दूध एक साथ मिलाकर और कुछ चीनी मिलाकर खानेकी व्यवस्था बहुत-से चिकित्सक दिया करते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि यह बहुत ही बलकारक

पदार्थ है; पर इस देशमें सबको ही मुर्गीका अण्डा नहीं खिलाया जा सकता। इस रोगमें सहजमें निगली जा सके किसी ऐसी जल्द पच जानेवाली चीजके साथ गायका दूध भरपूर मात्रामें पिलाना चाहिये। इसके अलावा पानीका सागू, चूड़ाका माँड़, धानके लावाका माँड़, सिंघाड़ेका आटा इत्यादिके साथ दूध मिलाकर दिया जा सकता है।

ठण्डे पानीसे रोज रोगीका शरीर धो देना चाहिये। उत्तेजना और अस्थिरता रहनेपर रोज ठण्डे पानीसे नहलानेसे रोगी शान्त हो जाता है और उसको अच्छी नींद आती है। ऐसी अवस्थामें, दो बार नित्य स्नान करानेकी भी जरूरत पड़ सकती है।

इस बीमारीमें रोगके बादकी कमजोरी बहुत दिनोंतक मौजूद रहती है। इस समय अगर सेवा-यत्नमें त्रुटि होती है, तो फिर आक्रमण होनेकी यथेष्ट सम्भावना रहती है। इसीलिये रोगीको बहुत सावधानीसे और धीरे-धीरे शारीरिक तथा मानसिक काम करना चाहिये। ताण्डव रोगवाले बालक-बालिकाओंकी बुद्धि साधारणतः बहुत तीव्र रहती है और वे थोड़ी ही उमरमें बहुत अधिक मेधावी होते दिखाई देते हैं; पर ऐसी अवस्थामें उनमें स्नायविक दुर्बलताकी वजहसे शारीरिक और मानसिक अधिक परिश्रम नुकसान पहुँचाता है।

रोगके बादकी कमजोरी दूर करनेके लिये पुष्ट भोजन, काड-लिवर आयल लगाना, खुली हवाका सेवन, सूर्यकी

रोशनी और हवा आने-जानेवाले घरमें रहना और रोजका नहाना बहुत अधिक फायदेमन्द है।

अगर गलनली और जबड़े अकड़ जायें, तो नाककी राहसे रबरका नल घुसाकर पथ्यके प्रयोगकी व्यवस्था करनी चाहिये।

रोगीका विवरण।

डाक्टर हुड्टियर साहबने नीचे लिखा रोगीका विवरण दिया है; पर उन्होंने केवल बालक कहकर ही उल्लेख किया है। रोगीकी उमरके बारेमें कुछ नहीं लिखा है।

रोगका आक्रमण—बालकके मुख-मण्डल और शरीरके ऊपरी भागपर हुआ था। नीचेका जबड़ा आपसमें सट गया था और नीचेकी ओर झूल पड़ा था; आँखकी पलक जोर-जोरसे फड़कती थीं; बीच-बीचमें माथा सामनेकी ओर झुक पड़ता था; दोनों हाथ अस्वाभाविक भावसे हिलते थे। नींदके समय कोई लक्षण नहीं बढ़ता था, पर पाखाना होनेपर, तथा क्रोध और रञ्ज होने बाद रोग-लक्षण सब बढ़ जाते थे।

इसी अवस्थामें—मैग्नेशिया-फासका प्रयोगकर इलाज आरम्भ हुआ। ३ महीनेतक रोज यह दवा सेवन करानेपर फायदा तो खूब हुआ, पर बीमारी एकदम आरोग्य न हुई। उस समय रोज दो बार कैल्केरिया-फास और दो बार मैग्ने-शिया-फास दिया जाने लगा और उसीसे एक महीनेमें बच्चा एकदम आरोग्य हो गया।

(२)

डाक्टर चैपमैन साहबने एक बारह बरसके रोगीका विवरण दिया है। वे कहते हैं, कि उनके तीस बरसतकके चिकित्सा कार्यमें ऐसा प्रबल ताण्डव रोग न दिखाई दिया था।

लगातार ताण्डव-नृत्यके कारण बालक एक क्षणके लिये भी स्थिर न रह सकता था। उसका चेहरा और समूचे अवयव ऐसे विकृत हो गये थे, कि उसे देखनेपर वह एक छोटा सा राक्षस दिखाई देता था। जोरकी अकड़नके कारण वह बीच-बीचमें जमीनमें लोट जाता था। श्वास-प्रश्वासके लिये मुँह फाड़ा करता था ; मुँहसे फेन निकलता था और अङ्ग-प्रत्यङ्ग सब जोरसे फड़क उठते थे। रोगीमें बहुत अधिक स्नायविकता थी। पता लगानेपर मालूम हुआ कि यह धातु उसे अपने पितासे प्राप्त हुई थी। बालकका पिता बहुत बड़ा शराबी और धूम्रपान करनेवाला था।

सेवा-शुश्रूषाकी तरकीब बताकर, उसे रोज सवेरे ८ ग्रेन केल्केरिया-फास कुछ पानीमें गलाकर सेवन करनेका उपदेश दिया गया। इसके साथ ही पर्याय-क्रमसे मैग्नेशिया-फास और कैलि-फास प्रयोग किया गया। दो अलग-अलग काँचके गिलासोंमें, प्रत्येकमें प्रायः छः आउन्सके अन्दाज पानी देकर, उसमेंसे एकमें १५ ग्रेन मैग्नेशिया-फास और दूसरेमें १५ ग्रेन कैलि-फास गलाकर रखा गया और दिनभरमें यह दो ग्लास पानी पर्यायक्रमसे एक चम्मचकी मात्रामें बीच-बीचमें पिलाया

जाने लगा। इस तरह रोज मैग्नेशिया-फास और कैलि-फास पानीमें गलाकर दिया जाने लगा।

छः महीनेतक धारावाहिक रूपसे इलाज करनेके बाद बालक एकदम आरोग्य हो गया। इसके बाद चैपमैन साहब आठ महीनेतक उसके सम्बन्धमें पता लगाते रहे और इतने समयके बीच एक दिनके लिये भी किसी प्रकारका रोग-लक्षण फिर प्रकट नहीं हुआ।

उदर-शूल।

(Colic, Intestinal)

अङ्गरेजीमें इसे Enteralgia और Tormina कहते हैं।

आँतोंकी क्रियामें गड़बड़ीके साथ पेशियोंके आवरणका संकोचन होना, आध्मान (पेटमें वायु होना), अभ्यासगत कब्जियतकी वजहसे बहुत अधिक मल इकट्ठा हो जाना, आँतोंमें अजीर्ण खायी हुई चीजका पड़ा रहना। ये सभी उदर-शूलके साक्षात कारण हैं। दूसरे-दूसरे रोगोंके उपसर्गके रूपमें भी पेटमें दर्द हो सकता है।

साधारणतः नाभिके पाससे दर्द शुरू होकर समूचे उदर-प्रदेशमें फैल जाता है। दर्दकी प्रकृति मरोड़ेकी तरह अथवा खोंचा मारनेकी तरह या तोड़नेकी तरह अथवा काटने या दबाने इत्यादिकी तरह रहती है। इस तरह दर्दकी नाना

प्रकारकी प्रकृतियाँ हो सकती हैं ; दर्दकी अधिकताकी वजहसे रोगी अपना पेट पकड़कर सामनेकी ओर झुक जाता है। यह दबा रखने या गरम सेंक देने अथवा तेल और पानी मिलाकर पेटपर मालिश करनेसे आराम मालूम होता है।

अधिकांश स्थानोंमें ही उदर-शूलके साथ पित्तकी के या श्लेष्मा-मिले पानीकी के हुआ करती है ; रोगी तकलीफसे छटपटाया करता है ; कराहता है और कब्जियतकी वजहसे मल अड़ा रहता है, पर नाड़ीमें किसी विशेष प्रकारकी गड़-बड़ी नहीं दिखाई देती ; शारीरिक उत्तापकी वृद्धि नहीं होती और उदर-प्रदेशकी नाड़ीका स्पन्दन प्रबल और उछलता हुआ होता है।

पृष्ठवाही स्नायुके शूलके दर्दमें herina या अन्त्र-वृद्धि, peritonitis या अन्त्रावरण-प्रदाह intestinal obstruction या अन्त्रावरोध passage of biliary calculi पित्ताश्मरीका निकलना। इन सब बीमारियोंके साथ उदर-शूलकी बीमारीकी बहुत-कुछ समानता रहती है। रोग निर्णयमें इस तरह भ्रम या गड़बड़ी हो सकती है।

Lead-colic अर्थात—**सीसक-शूल** रोगमें—यह भी साधारणत: उदर-शूलके लक्षणोंके साथ ही आरम्भ होता है। छापे-खानेके कम्पोजिटर और कारीगर, चित्रकार तथा जो सब मनुष्य सीसा-धातु लेकर काम किया करते हैं, उन्हें अक-सर सीसक-शूलकी बीमारी होती देखी जाती है। सीसक-

शूलके रोगीके दाँतके मसूढ़ेके किनारे बराबर एक नीली रेखा पड़ जाती है। यह रेखा ही सीसाका दोष बतानेवाला एक मुख्य लक्षण है।

पार्थक्य निर्णय।

स्नायु-शूल।—यह साधारणतः शरीरके आधे भागमें अर्थात एक पार्श्वमें हुआ करता है और रोगी स्नायुमें जगह-जगहपर दर्द रहनेके कारण स्पर्श सहन नहीं होता।

हार्निया या अंत्र-वृद्धि।—इस रोगमें बहुत ही तेज दर्द होता है। सन्देह होनेवाले रोगमें, हार्नियाके केन्द्रोंकी अच्छी तरह परीक्षा करनेपर बीमारी पकड़में आ जाती है।

अंत्रावरण-प्रदाह।—इसमें छूना या दबाना सहन नहीं होता। बोखार आ जाता है, रोगी बहुत जल्द शक्ति-हीन हो जाता है, नाड़ी तेज और क्षीण हो जाती हैं, बार-बार वमन हुआ करता है; श्वास-प्रश्वास तेज; पेट फूला रहता है।

अंत्रावरोध।—यह रोग—दिनों-दिन धीरे-धीरे बढ़ता जाता है। तेज दस्तावर दवाएँ खानेपर भी पाखाना नहीं होता। पेट बहुत फूलता है; बहुत प्रचण्ड वमन होता है; नाड़ी तेज रहती है; प्यास ज्यादा रहती है और भूख नहीं लगती। अकसर दर्द एक निर्दिष्ट केन्द्रके स्थानपर

रहा करता है और समूचे उदर-प्रदेशमें दर्द फैल नहीं जाता है।

पित्ताश्मरीका निकलना।—यह दर्द एकाएक पैदा हो जाता है और एकाएक ही गायब हो जाता है। पित्त-कोषकी जगहपर दर्द आरम्भ होता है; भयानक वमन हुआ करता है; वमनका स्वाद बहुत खट्टा रहता है; पित्त-शूलके बाद अकसर कामला-रोग होता देखा जाता है।

मूत्राश्मरीका निकलना।—पीठमें, जांघमें और अण्डकोषमें दर्द होता है। बार-बार पेशाब लगता है; पेशाबका परिमाण थोड़ा और गाढ़ा; पेशाब खून मिला भी होता है। रोगके आक्रमणके समयके पेशाबमें पथरीके टुकड़े मिलते हैं और यदि पहले हुआ रहता तो इसी ढंगका इतिहास भी मिलता है।

बच्चोंका उदर-शूल।

(Colic-Infantile)

अजीर्ण और आध्मानकी वजहसे बच्चोंको उदर-शूल (पेटका दर्द) होता है। बच्चा बहुत ही कातर-भावसे रोया करता है, दोनों पैर पेटकी ओर सिकोड़े रहता है अथवा पैर पटका करता है। तलहत्थीको गरमकर उसके पेटपर रखने या दबाने अथवा हाथ फेरनेपर बच्चेको कुछ देरके लिये

आराम मालूम होता है और चुप हो जाता है। बच्चेके पेटमें वायु होनेपर उसका पेट फूल जाता है और ढपढप आवाज आया करती है।

कितनी ही बार इसी तरहके शूलके दर्दके बाद हरे रङ्गके पतले दस्त आकर दर्द बन्द हो जाया करता है। मलमें खट्टी गन्ध आती है और छानेके टुकड़ोंकी तरह दूध निकलता है।

खाने-पीनेके दोषसे, सरदी लगकर या कब्जियतके कारण इस ढङ्गके उदर-शूल हुआ करते हैं। समयपर लक्ष्य न रखकर बार-बार स्तनका दूध पिलाना या बाहरका दूध पिलाना; दूधका अधिक गाढ़ा होना; भैंसका दूध, एकसे ज्यादा गायका दूध, माता या स्तन-पिलानेवालीका असमयमें खाने-पीनेके कारण पित्त-विकार, न पचनेवाली या निषिद्ध चीजें खाना, सनायकी पत्ती या दूसरी दस्तावर दवाएँ खाना प्रभृति कारणोंसे दूध दूषित होकर सन्तानकी बीमारी पैदा हो ती जाती है।

चिकित्सा।

मैग्नेशिया-फास।—इस बीमारीकी श्रेष्ठ दवा है। गरम पानीमें गलाकर प्रयोग करनेसे तुरन्त फायदा होता है। रह-रहकर होनेवाला दर्द, बहुत अधिक पेट फूलना और रगड़ने या सेंकनेपर घटनेका लक्षण अगर हो, नये पैदा हुए

बच्चेका बिना विशेष कारणके ही पेट फूलता हो और रोता हो "मैग्नेशिया-फास" आश्चर्य-रूपसे फायदा करता है।

नेट्रम-सल्फ।—पित्त-प्रकोपकी वजहसे शूलका दर्द; बहुत तीता स्वाद; पित्त-वमन; भूरी आभा लिये हरे रङ्गकी लेप-चढ़ी जीभ; यकृतके क्रिया-विकारके कारण पेट फूलना और शूलका दर्द। **सीसक-शूलको**—नेट्रम-सल्फ श्रेष्ठ दवा है। थोड़ी-थोड़ी देरके अन्तरसे बार-बार प्रयोग करना पड़ता है। प्रसवके बाद कब्जियत और पेट फूलना या उदराध्मान।

कैल्केरिया-फास।—पाचन-शक्तिके बिगड़ जानेकी वजहसे खाया हुआ पदार्थ पच न सकना; दाँत निकलनेके समय उदर-शूल और हरे रङ्गके पतले मलके साथ अजीर्ण खायी हुई चीज दिखायी देती हैं। ऐसे स्थानपर—"नेट्रम-सल्फ" के साथ इसका पर्यायक्रमसे प्रयोग किया जाता है। जो सब उदर-शूल केवल मैग्नेशिया-फासके प्रयोगसे आरोग्य नहीं होते, वहाँ कैल्केरिया-फासके साथ पर्याय-क्रमसे प्रयोग करनेपर फायदा होता है।

नेट्रम-फास।—बच्चे और बालक-बालिकाओंके उदर-शूलकी श्रेष्ठ दवा है। अम्लकी अधिकता; पेटमें दूध फटकर वमन हो जाता है; हरे रङ्गकी खट्टी गन्ध मिला मल; जवान रोगियोंको अम्लकी अधिकताके कारण अगर उदर-शूल हो जाये तो मैग्नेशिया-फासके साथ पर्याय-क्रमसे प्रयोग करना चाहिये।

कैलि-सल्फ।—शूलके दर्दकी तरह तेज दर्द; पेट छूनेपर ठण्डा मालूम होता है। तेज गर्मी या एकाएक सर्दी लगकर अथवा मानसिक उत्तेजनाकी वजहसे पेटमें दर्द; दर्द उठनेके कुछ देर बाद, गन्धकके गन्धकी डकार आती है। मैग्नेशिया-फाससे फायदा न होनेपर इस दवाका प्रयोगकर देखना उचित है।

कैलि-फास।—अम्ल-शूल, बार-बार पाखाना लगना पर न होना; सामनेकी ओर टेढ़े होनेपर आराम मालूम होना; वायुकी अधिकताके कारण पेट फूलना।

नेट्रम-म्यूर।—डकारके साथ पित्त-शूल; दर्द एक जगहसे उठकर पेटमें बहुत दूरतक फैल जाता है। यकृतकी गड़बड़ीकी वजहसे आध्मान और शूलके दर्दकी यह एक उत्कृष्ट दवा है।

रोगीका विवरण।

डाक्टर हेरिङ्गने एक रोगीके सम्बन्धमें नीचे लिखा विवरण दिया है:—

एक पादरी साहब बहुत दिनोंसे शूल-रोगकी तकलीफ भोग रहे थे। उन्हें बार-बार दर्द होता था और हरेक बार बहुत तेज दर्द होता था। इसके साथ ही प्रचण्ड वमन, पेटको छूनेपर बहुत अधिक दर्द होने लगता, बेचैनी, व्याकुलता और क्लेश प्रभृति लक्षण प्रकट होते थे। यह दर्द तीन

दिनोंसे लेकर एक सप्ताहतक स्थायी रहता था। दर्द साधारणत: दाहिनी कोखसे आरम्भ होकर समूचे उदरमें फैल जाता था।

"नेट्रम-सल्फ़" का प्रयोग किया गया। दवा पेटमें जाते ही दर्द घट गया। इसके बाद भी कई बार दर्द होनेका आभास मिला, पर उस ढङ्गका दर्द फिर न हुआ; इस दवासे ही आरोग्य हो गया।

(२)

कुसुम ग्वालिन, उमर ३२ वर्ष, दुबली-पतली और गोरी; वन्ध्या, कोई सन्तान न थी। लगभग चार बरसतक कब्जियत और शूलका दर्द भोग रही थी। दर्द आरम्भ होते ही ३-४ बार खूब खट्टा वमन होता था; खट्टी डकारें आती थीं; नाभि-स्थान कुछ देरके लिये मानो चिपक जाता था; इसके बाद दर्द समूचे पेटमें फैल जाता था, लगभग अड़तालिस घण्टांतक रहकर दर्द धीरे-धीरे दब जाता था। दर्द रहनेपर रातमें नींद भी नहीं आती थी। दर्द घटनेकी आशामें वह गलेमें अँगुली डाल-डालकर कै करती थी।

मैग्नेशिया-फासके साथ पर्यायक्रमसे नेट्रम-फासका प्रयोग किया गया और बहुत क्षश रहनेके कारण दो बार "नेट्रम-म्यूर" ३० शक्तिका प्रयोग किया गया। इससे ही उसकी कब्जियत, अम्लकी अधिकता और शूलका दर्द दो सप्ताहोंमें पूरी तरह आरोग्य हो गया।

कब्जियत।

(Constipation)

बायोकेमिक विचारके अनुसार खास-खास पाँच लक्षणोंके अभावसे कब्जियत हुआ करती हैं।

"नेट्रम-सल्फ" या "नेट्रम-फास" लवणके अभावमें यकृतसे निकले हुए रसमें विकार होकर, पित्त बहुत-कुछ गाढ़ा हो जाया करता है और इसी वजहसे उसकी क्रियामें विकार होकर मलकी अवस्था कड़ी हो जाया करती है।

"कैलि-म्यूर" लवणकी कमी हो जानेपर पित्तका परिमाण घट जाता है।

"नेट्रम-म्यूर" लवणकी कमी हो जानेके कारण आँतोंका जलीय अंश सम-भावसे सभी तन्तुओंमें नहीं पहुँचता। अतएव, पानीकी कमीसे मल निकलनेकी प्रणालियाँ सूख जाती हैं और यही वजह है, कि मल निकलनेमें गड़बड़ी होती है।

"कैल्केरिया-फ्लुयोरिका" लवणकी कमीसे आँतोंकी श्लैष्मिक-झिल्लियाँ सब ढीली पड़ जाती हैं, स्थिति-स्थापक सौत्रिक तन्तु भी ढीले पड़ जाते हैं। छोटी आँतके प्रक्षेपक केशर-सत्र (villi) में विकलता पैदा हो जाती है और इन्हीं सब कारणोंसे मल नहीं निकलता।

कब्जियत साक्षात रूपसे कोई नया भीषण लक्षण नहीं हैं, इसीलिये लोग साधारणतः उसपर ध्यान नहीं देते। इसके

अलावा बहुत-से नियमित रूपसे प्रति सप्ताह अथवा बँधे समयका अन्तर देकर, जुलाब लेनेका अभ्यास बना लेते हैं, इसलिये, धीरे-धीरे यह बीमारी एकदम दुरारोग्य हो जाती है और कब्जियत बढ़ती हो जाती हैं। कोठा साफ रखना स्वास्थ्य-रक्षाका सबसे प्रधान नियम है ; पर प्रत्येक क्रियाकी प्रति-क्रिया जरूर ही होती है, इसीलिये दस्तावर दवा लेनेपर कब्जियत और भी बढ़ जाती है। विरेचक अर्थात दस्तावर दवाके सेवनसे पाकाशय और आँतोंका प्रदाह और उत्तेजना होकर पहले मल निकलता देखा जाता है। इसके बाद इस प्रदाह और उत्तेजनाकी प्रति-क्रियाकी वजहसे पाकाशय और आँतें सुस्त हो जाती हैं और निष्क्रिय हो पड़ती हैं।

अभ्यासके दोषसे और आलस्यकी वजहसे बहुतोंको कब्जियत हो जाती है। नित्य एक बँधे समयपर नियमित रूपसे मल त्यागनेकी चेष्टा करना क्रमसे अभ्यास और प्रकृतिमें परिणत हो जाता है। जननीका कर्त्तव्य है,—अपने बच्चेको बचपनसे ही इस कामका अभ्यास डलवा देना। हरेक नर-नारीको ही सवेरे और संध्याके पहले और अगर मौका मिले तो एक बार दो पहरके समय भी पाखाना हो आना चाहिये।

अगर रोज ठीक-ठीक कोठा साफ नहीं रहे तो नाना प्रकारकी बीमारियाँ पैदा हो जाया करती हैं। खानेकी सामग्री और पानीय पाकस्थलीसे आँतोंमें आ जाने बाद उनका रस सूख जाता है और जो कुछ अंश बच जाता है वही मलके रूपसे शरीरसे निकल जाता है। अगर

प्रकृतिके इस नियममें किसी कारणसे गड़बड़ी आ जाती है, तो इस मलसे दूषित रस निम्नान्त्र द्वारा सोख लिया जाता है और वह जाकर रक्त-प्रवाहमें मिल जाता है। इसको Auto-intoxication या Intestinal toximia कहते हैं। इस विषाक्त-रसके सूख जानेका यह परिणाम होता है कि सभी बीमारियाँ पैदा हो सकती हैं और यह विष सबसे पहले मस्तिष्क और स्नायु-विधानोंमें विकलता और गड़बड़ी पैदा कर देता है।

समूचे मल-भाण्डका निर्माण बड़ा ही कौशल-पूर्ण है। इसको large intestine अर्थात वृहदन्त्र कहा जाता है। अङ्गरेजीमें कोलन (colon) नामसे इसे पुकारा जाता है। दाहिने कोखसे यह बड़ी आँत उर्द्धगामी होकर चढ़ जाती है, इसी अंशको ascending colon कहा जाता है; इसी तरह दाहिने पंजरेतक सीधी ऊपर उठकर यह बाईं ओर समकोणके रूपमें टेढ़ी हो जाया करती है और सीधे सरल भावसे बायीं पंजरास्थितक जाकर फिर समकोणके आकारमें नीचेकी ओर चली गयी हैं; दाहिने पंजरेसे बायें पंजरेतक सीधे भावसे रहनेवाले इस अंशको transverse colon कहते हैं। इसके बाद बायें पंजरेके पाससे नीचेकी ओर जाकर बायें आँखकी जगहपर इसका अन्त हो गया है; इसी अंशको descending colon कहते हैं। बाईं कोखकी जगहपर वह rectum नामक सरलान्त्र नलके बीचमें जाता है और सरलान्त्र फिर anus नामक मल-द्वारमें समाप्त

होता है। अतएव, दिखाई देता है, कि **समूचा वृहदन्त्र दरवाजेके चौखटके आकारका बना हुआ है।** समूचे वृहदन्त्रकी लम्बाई तीन फुट रहती है। कोलनके अर्थात वृहदन्त्रके पूर्वके क्षुद्रान्त्रकी लम्बाई २७ फुट रहती है।

यह तीन फुट लम्बा कोलन ही वास्तवमें मल-भाण्ड है। कब्जियत होनेपर यह "वृहदन्त्र—कोलन" मलसे भर जाता है और भारी हो जाता है। उस समय इसकी आकृति और बनावटमें भी फर्क आ जाता है। कमजोर और ढीली पेशी-वाले मनुष्योंकी बड़ी आँत रुके हुए मलके भारसे फूल पड़ती है, उसकी लम्बाई बढ़ जाती है और प्रणालीके भीतरका व्यास भी बढ़ जाया करता है। इसी तरह ऐसे आदमियोंका तलपेट बड़ा हो जाता है और झूल पड़ता है तथा रुके हुए मलकी वजहसे बड़ी आँतमें प्रदाह होकर colitis (वृहदन्त्र-प्रदाह) नामक भयानक रोग पैदा हो जाता है। अगर बलिष्ठ मनुष्यकी आँत झूल पड़ना चाहती है, तो उसके पासकी दूसरी-दूसरी कड़ी पेशियाँ उसे पकड़ रखती हैं और नयी पैदा हुई बन्धनीसे उसे पकड़े या बाँधे रहती हैं; पर ज्यों-ज्यों उमर बढ़ती जाती है, त्यों-त्यों ये बन्धनियाँ सिकुड़ती जाती हैं। वृहदन्त्रमें खिंचाव पड़ता है और इसीका यह परिणाम होता है, कि बन्धनीके संयोगकी जगहपर बड़ी आँत तिर्यक-भावसे टेढ़ी हो जाती है। इसी अवस्थामें प्रणाली-पथ भी संकुचित हो जाता है। इस अवस्थामें बड़ी आँतकी आकृति

चौखटकी तरह नहीं रह जाती है। **ऐसा टेढ़ापन आ जानेके कारण कोलनकी राहसे मलके निकलनेमें बहुत बाधा प्राप्त होती है।**

आँतोंके साथ मस्तिष्ककी और मनकी अत्यन्त सम-वेदना दिखाई देती है। कोठा साफ न रहनेपर सर-सर्द, नींदमें गड़बड़ी, काममें मन न लगना, चित्तकी उग्रता, बल्कि उन्मादावस्थातक दिखाई देती है। कब्जियतके साथ स्नायु-विधानमें विकलता स्पष्ट दिखाई पड़ती है।

मलका दूषित रस शोषण हो जानेकी वजहसे शारीरिक यंत्रकी विविध बीमारियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। जैसे—

(क) आँखकी नाना प्रकारकी बीमारी और दृष्टि-दोष। (ख) श्वास-कष्ट या दमा। (ग) हृत्पिण्डका प्रदाह। (घ) ग्रन्थि-वात। (ङ) पाचनमें विकार या पाकाशयमें अम्लकी अधिकता। (च) पित्ताशयकी बीमारियाँ। (छ) appendicitis अर्थात उपान्त्रकी बीमारी। (ज) वृहदन्त्र अर्थात कोलनका पुराना प्रदाह। (झ) पाकाशयका जखम इत्यादि बहुत-सी बीमारियाँ इस कब्जियतके कारण उत्पन्न होती हैं। ये सब उपसर्ग अगर उत्पन्न हो जायें, तो लक्षणके अनुसार चिकित्साकर आरोग्य करने बाद कब्जियतको दूर करनेका भी प्रबन्ध करना चाहिये।

औषधावली ।

कैल्केरिया-फ्लुयोरिका ।—मल बहुत कड़ा और बड़ा गाँठ गाँठ ; बहुत कुछ काँखनेपर भी मल नहीं निकलता ।

कैल्केरिया-फास ।—वृद्ध मनुष्योंको कब्जियतमें विशेष फायदा करता है । इसका मल कड़ा और उसमें खूनके छींटे रहते हैं । इसके साथ ही मानसिक सुस्ती, सरमें चक्कर आना और सरमें भारका लक्षण वर्तमान रहता है ।

फेरम-फास ।—आँतोंके पेशिक-सूत्रोंकी क्षीणताकी वजहसे कब्जियत और इसके साथ ही तलपेटमें गर्मी मालूम होना । बहुत गहरी कब्जियतके साथ काँच निकल आना अथवा बवासीरका मसा निकल पड़ना ; खूनकी कमीके साथ कब्जियत, उतरा हुआ पीला चेहरा, थोड़े कारणसे ही चेहरा लाल हो जाता है ; हाथ-पैर ठण्ढे, कलेजा धड़कना, लगातार जाड़ा मालूम होना, पाकाशयमें भार और वायु इकट्ठा होना, मांस खानेकी इच्छा न होना ।

कैलि-म्यूर ।—कब्जके साथ सफेद रङ्गका लेप-चढ़ी जीभ, घी या चर्बी मिला भोजन सहन नहीं होता, केक और पीठी खानेपर बीमार हो पड़ता है । यकृतकी क्रियाका कम पड़ जाना, पित्तकी कमीके कारण खाकी रङ्गका मल ।

कैलि-फास।—मलका रङ्ग एकदम भूरा और इसके साथ ही पीली आभा लिये हरे रङ्गको श्लेष्माकी रेखायें मलपर लिपटी-सी दिखाई देती हैं। बड़ी आँत अर्थात मल-भाण्ड और मल-द्वारकी निष्क्रिय अवस्था। सम्पूर्ण जीवनी-शक्तिकी क्षीणता।

नेट्रम-म्यूर।—यह अभ्यासगत कब्जियतकी बहुत बढ़िया दवा है। बालक-बालिकाओंके लिये बहुत ही लाभ-दायक है। पाखाना हो जाने बाद मल-द्वारमें जलन, फट जानेकी तरह अनुभव होना और खून निकलना। आँतोंकी कमजोरी और सूखेपनकी वजहसे कब्जियत; आँतकी श्लैष्मिक-झिल्लीमें तरी का न रहना; पर इसके साथ ही अन्यान्य अङ्गोंमें रस-स्रावका ज्यादा होना। जैसे—जलकी कै, जल-भरी आँखें, मुँहसे ज्यादा लार बहना, जीभ तर इत्यादि। मुँहमें पानी भर आना और तन्द्रासे घिरा भाव; आँतकी सलवटोंमें दर्द, मल-द्वारका प्रदाह; बवासीरकी बीमारीके साथ कब्ज; मल कड़ा, सूखा, बड़े कष्टसे निकलता है; कब्जियतके साथ सर-दर्द बना रहता है।

नेट्रम-फास।—बहुत अधिक दुर्दमनीय कब्जियत। बालक-बालिकाओंको अभ्यासगत कब्जके साथ पर्याय-क्रमसे पतले दस्त आना अर्थात एक बार कड़ा, एक बार पतला दस्त होना; क्रिमिके साथका कब्ज। बच्चोंकी खाद्य-सामग्रीमें यह दवा मिलाकर देनेपर सहजमें और सुन्दर-भावसे कोष्ठ-शुद्धि

हो जाती है। छः महीनेके बच्चोंके लिये फी मात्रा ५ से १० ग्रेनतक दिनमें तीन बार प्रयोग किया जाता है। रेंड़ीको तेल प्रभृति दूसरी-दूसरी दस्तावर दवाओंकी तरह, इस दवासे कोठा साफ होनेके बादवाली कब्जियत नहीं पैदा होती।

नेट्रम-सल्फ।—कड़ा और साकलकी तरह गाँठ बँधा मल, मलके गात्रमें खूनकी लकीर लगी रहती है। पाखाना होनेके पहले और पाखाना होनेके समय मल-द्वार खुजलाया करता है। कोमल मल निकलनेमें भी तकलीफ होती है। बहुत ज्यादा परिमाणमें बदबूदार अधो-वायु निकलता है।

साइलिसिया।—मल-द्वारकी मल निकालनेकी शक्ति मानो एकदम नष्ट हो जाती है; मल थोड़ा-सा मल-द्वारसे बाहर निकलकर फिर भीतर घुस जाता है। मल-द्वारमें जलन और सुई गड़नेकी तरह दर्द और डङ्क मारनेकी तरह यन्त्रणा। पुराने "कण्ठमाला" रोगीके और किसी जगहपर पीव पैदा हो जानेके साथ कब्ज मौजूद रहनेपर उसकी "साइ-लिसिया" सबसे श्रेष्ठ दवा है। पोषणकी कमीके कारण जिन बालक-बालिकाओंका चेहरा रक्त-शून्य रहता है, मिट्टीके रङ्गका दिखाई देता है, उनके कब्जमें यह ज्यादा फायदा करता है। पक्षावात रोगाधिकारमें माथेमें बहुत अधिक पसीना होनेके साथ-ही-साथ कब्जियत रहनेपर साइलिसियाका प्रयोग करना चाहिये।

रोगी-विवरण।

(१)

महात्मा हनिमैनके शिष्य डाक्टर ग्रायने नीचे लिखे पुराने रोगीकी पुरानी कब्जियत आरोग्य की है। रोगी एक ग्यारह वर्षका बालक था, उसके माता-पिताको कण्ठमाला रोग था, रोगीका एक भाई था, वह आधा पागल हो गया था। रोगीकी अवस्था भी वैसी ही थी और वह गूँगा हो रहा था। बेचारा जन्मसे ही कब्जकी बीमारी भोग रहा था; उसे लगातार तीन-तीन चार-चार हफ्तेतक पाखाना ही न होता था। इस बालकको कुछ दिनोंतक **नेट्रम-म्यूर** ३० सेवन करानेसे कब्जियत दूर हो गयी और वह आरोग्य हो गया।

(२)

डाक्टर जानसनने एक महिला रोगिनीकी कब्जियत आरोग्य की थी। उस स्त्रीकी उमर २६ वर्षकी थी, तीन सन्तानोंकी माता थीं। छोटा बच्चा पैदा होनेके बाद, तीन महीनेसे वह कब्जकी बीमारी भोग रही थीं। बहुत तरहकी जुलाबकी दवा दी गयी; पर कोई लाभ न हुआ। मल सूखा और कड़ा होता था, बहुत चेष्टा करनेपर थोड़ा-सा निकलता था, फिर भीतर घुस जाता था। उसे सवेरे शाम एक-एक मात्रा **साइलिसिया** ३० दिया जाने लगा। चार मात्रा सेवन करनेपर ही वह एकदम आरोग्य हो गयी।

(३)

डाक्टर जे० बी० चैपमैनने एक रोगीका विवरण लिखा है। रोगीकी उमर ३० बरस। किसी तरहके व्यायामका अभ्यास न रहनेके कारण, कई सप्ताहसे कब्जियत हो रही थी। मल कड़ा, थोड़ा और बहुत तकलीफसे निकलता था। तेज जुलाबकी दवा या मलद्वारमें पिचकारी दिये बिना पाखाना ही न होता था। यकृतकी क्रिया मन्द और पित्तकी कमी—यही रोग निर्णय हुआ। डाक्टरने कैलि-म्यूर ३० की व्यवस्थाकी और रातके समय १० ग्रेनकी मात्रामें सेवन करनेके लिये दिया। दूसरे दिन सवेरे सहज और सरल पाखाना हुआ और कई दिनोंतक यह दवा सेवन करनेका यह परिणाम हुआ कि रोग पूरी तरह आरोग्य हो गया।

———

क्षय-रोग।

(Consumption)

राजयक्ष्मा।

Consumption अर्थात क्षय-रोग—यह नाम खासकर फेफड़ेके ही क्षय-रोगके सम्बन्धमें व्यवहृत होता है और किसी दूसरे अङ्गके यक्ष्माके लिये व्यवहृत नहीं होता। इस रोगके एक खास तरहके जीवाणुका आविष्कार हुआ है। इनकी

आकृति खूब छोटे सूक्ष्म नलकी तरह रहती है और रोगवाली जगहपर गुटिका (tubercles) उत्पन्न करना इस जीवाणुकी प्रकृति है। इस जीवाणुको बेसिलस-टियुबरक्युलोसिस (Bacillus tuberculosis) कहा जाता है और इसी कारण इस रोगका डाक्टरी नाम—"टियुबरक्युलोसिस" और साधारणतः T. B. (टी० बी०) कहा जाता है।

दूसरे-दूसरे रोग जीवाणुओंकी तरह यक्ष्माके जीवाणु भी हमेशा आकाशमें विचरण किया करते हैं तथा मनुष्योंके संसर्गमें आते हैं, पर जबतक **उपयोगी-क्षेत्र** नहीं मिलता तबतक ये अपना घर नहीं बना पाते। जिनमें इनको रोकनेका उपयुक्त स्वास्थ्य और शक्ति नहीं है, उनपर ही इनका आक्रमण होता है और वे ही इस रोगसे बीमार होते हैं।

बहुत-से कारणोंसे स्वास्थ्य और शक्तिका अभाव पैदा हो जाता है। उपयोगी भोजनका न मिलना ; भरपूर भोजनकी कमी हो जाना ; दूषित वायु ; अस्वास्थ्यकर स्थानमें रहना और पारिपार्श्विक अवस्था ; एकाएक वायुके स्वाभाविक तापके परिवर्त्तनके समय असावधानता तथा उपयुक्त कपड़े-लत्तोंकी कमी ; बार-बार ठण्ड लगकर सर्दी-खाँसी ; बादल और सर्दीके दिनोंमें उपयुक्त वस्त्रोंकी कमी या असावधानता, ठीक-ठीक व्यायाम न करना ; सोनेवाले कमरेमें उपयुक्त सूर्य-किरण और विशुद्ध वायुका प्रवेश न करना ; बैठने या सोनेकी बिगड़ी हुई भंगीकी वजहसे निश्वासके साथ फेफड़ेका भरपूर

न फैल पाना ; असमतल शय्यापर सोनेकी वजहसे श्वास-प्रश्वासमें गड़बड़ी इत्यादि बहुतसे कारणोंसे स्वास्थ्य और शक्तिमें खराबी आ जाया करती है। किसी-विशेष स्थानोंकी नैसर्गिक अवस्था भी कितनी ही बार यक्ष्मा-रोग पैदा होनेके अनुकूल रहती है ; जिस स्थानके वायुमें पानीका अंश अधिक रहता है या पर्यायक्रमसे गर्मी और नमी बार-बार हुआ करती है, उन सब स्थानोंमें इस रोगकी प्रबलता दिखाई देती है।

यौवन-कालमें बहुत तरहके अत्याचार और रोगका आक्रमण भी इसका अन्यतम कारण होता है। शराब पीना, रातमें जागरण, असमयमें खाना, अधिक मैथुन करना, हस्त-मैथुन, ज्यादा खाना इत्यादि और अपनी शक्तिसे ज्यादा परिश्रम, भार उठाना प्रभृति हठकी वजहसे भी यह बीज शरीरमें चला जाता है। स्त्रियोंका बार-बार गर्भ-धारण और पुष्ट भोजनकी कमीसे भी यह बीमारी हो जाया करती है।

उमर।

१० बरसकी उमरसे ऊपर श्वास-यन्त्रकी यक्ष्मा बीमारीकी प्रधानता दिखाई देती हैं और प्रौढ़ावस्थाके पहले इस रोगके प्रबल नये लक्षण सब विकास पाते दिखाई देते हैं। १५ वर्षसे आरम्भकर २५ और ३५ वर्षके भीतर यक्ष्मा रोगकी मृत्यु-संख्या सबसे अधिक होती है। प्रौढ़ावस्था और वार्द्धक्यमें इस रोगका आक्रमण बहुत कम होता है।

आकृति ।

रोगाक्रमणके आरम्भसे ही रोगी दुबला होता जाता है और उसका शारीरिक वजन घटता जाता है। ज्यों-ज्यों बीमारी बढ़ती जाती है, त्यों-त्यों उसका दुबलापन बढ़ता जाता है और अन्तमें वह हड्डी-हड्डी हो जाता है। उसका चेहरा रक्त-हीन और पीला पड़ जाता है, दोनों गाल बैठ जाते हैं ; छाती भीतर धँस जाती है ; कन्धा झूल पड़ता है ; आँखें गड़हेमें धँस जाती हैं, पर उनमें एक अस्वाभाविक चमक पैदा हो जाती है। पाचन-शक्ति कम हो जाती है ; कब्ज होता है या इसके बाद कब्जके बदले पतले दस्त आने लगते हैं ; भूख नहीं लगती है अथवा भूख रहनेपर अरुचि हो जाती है ; गहरी सूखी खाँसी अथवा तङ्ग करनेवाली थोड़ी खाँसी रहती है। बीच-बीचमें शरीर और खासकर चेहरेपर उत्ताप मालूम होता है और नींदकी हालतमें तथा खासकर सवेरे माथेमें बहुत अधिक पसीना होता है। रोग वृद्धिके साथ-साथ सब उपसर्ग पैदा होते हैं, इस सम्बन्धमें आगे बताया जायगा।

यक्ष्माकी बीमारी दरिद्रकी पर्ण-कुटी और धनीके महलमें समान भावसे होती दिखाई देती है। दरिद्रोंका बहुत परिश्रमके कारण शारीरिक क्षय हो जाता है ; उसकी पूर्तिके लिये उपयुक्त परि-

मारणमें भोजन नहीं मिलता अतएव वह क्रमसे कमजोर हो पड़ते हैं। बहुत ज्यादा परिश्रमके कारण उत्पन्न हुई कमजोरी दूर करनेके लिये वायु-परिवर्त्तनमें जानेका उसको धन या मौका नहीं प्राप्त होता। इसीलिये उसे भीड़-भाड़से भरे दूषित वायुसे पूर्ण घरमें ही रहना पड़ता है। पेट पालनेके लिये उसे धूल-भरी आढ़त और गुदामोंमें शक्तिसे अधिक परिश्रम करना पड़ता है। अपने और परिवारवालोंके अभावकी वजहसे हमेशा दुश्चिन्ताकी अनलशिखामें उसका देह, मन और जीवनी-शक्ति जला करती है। ऐसे ही स्थानपर यक्ष्मा-रोग बड़े आनन्दसे आकर अपना डेरा जमा लेता है।

दूसरी ओर धनी मनुष्य अपने धनकी अधिकताका सदुव्यय नहीं जानते; अमिताचारी और अमित-व्ययी होकर वे सभी कामोंमें अपना संयम खो बैठते हैं। अपने घरमें अनगिनत दास-दासी रखनेपर भी वे स्वयं फैशनके दास बने रहते हैं। नाना प्रकारके न पचनेवाले स्वादिष्ट भोज्य पेयका सेवन करनेके बाद जाड़ेकी रातमें भी वे बरफ-मिला सोडाका पानी पिया करते हैं। भीड़-भाड़से भरे थियेटर वायस्कोपमें लगातार तीन-चार घण्टे रहनेके बाद, बाहर निकलकर वे स्वयं अपनेको तथा अपनी गृहिणी और पुत्र-कन्या आदिको "आइस-क्रीम" नामक विषकुम्भ पयोमुख पदार्थ खिलाते हैं। यद्यपि साधारण शुद्ध पानीसे प्यास दूर की जा सकती है, पर वे धनसे उद्दाम अभिमानके फेरमें पड़ जाते हैं और डरते हैं, कि ऐसा न करनेसे फैशन-शासित

समाजमें उनका नाम बदनाम हो जायगा। ये वायु-परिवर्त्तनके लिये जाते हैं, तो स्वास्थ्यको और भी बिगाड़ लाते हैं और उच्छृङ्खलता तथा अमिताचारको और भी अधिक बढ़ा देते हैं। इन सब कारणोंसे इनका शारीरिक और मानसिक अवसाद जितना ही बढ़ता जाता है, उतना ही ये उत्तेजक टानिक और नकली खाद्य आदि सेवन करते हैं और इस तरह स्वास्थ्य-हीन शरीरसे उद्दाम आकांक्षा चरितार्थ करनेकी शक्ति प्राप्त करना चाहते हैं। स्वास्थ्यके भण्डारमें कुछ भी नहीं है, पर दिन-रात शक्तिकी देनदारीमें चेक कटा करते हैं। परिणाम यह होता है, कि स्वास्थ्य और शक्तिके बाजारमें उन्हें दीवालिया हो जाना पड़ता है तथा यक्ष्मा-रोग बड़े ठाठसे आकर उन्हें ग्रास कर ले जाता है।

यक्ष्मा-रोगाधिकारसे दरिद्रोंकी रक्षा और आरोग्य करनेके लिये, उनकी कमी दूर करनेकी ज़रूरत है और धनवानकी यक्ष्मा और आरोग्य करनेके लिये उनमें संयम-साधनकी आवश्यकता है।

यक्ष्माका संचार।

१। जन्मार्जित अर्थात पिता-माताका दोष लेकर सन्तान जन्म ग्रहण करती हैं। पिता-माताके शरीरमें रतिज-दोष अर्थात

उपदंश और प्रमेह रहनेपर, कण्ठमाला या गण्डमाला दोष रहनेपर, वात-रोग रहनेपर—ये सब रोग माता-पिताके शुक्र-शोणितके साथ जाकर गर्भमें ही भ्रूणको दूषित बना डालते हैं। इसके बाद सन्तानमें कण्ठमाला, सर्दी लगनेका धातु, क्षय हुए दाँत, तालुमूल और एडिनायडकी वृद्धि इत्यादि उपसर्गों के रूपमें ये सब छिपे हुए धातु-दोष तीव्र-दृष्टि-सम्पन्न चिकित्सककी दृष्टिसे छिपे नहीं रह पाते। ये सब उपसर्ग यक्ष्मा-रोगकी नीवकी तरह हैं; ये बचपनसे ही जीवनी-शक्तिका हरण कर लिया करते हैं और चूहेकी तरह स्वास्थ्य-वृक्षकी जड़ काटा करते हैं तथा समय आनेपर उसे गिरा देते हैं। सबसे बढ़कर दुःखका विषय तो यह है कि सन्तानमें ये सब लक्षण देखनेपर भी पिता-माता समय रहते उसका उपचार नहीं करते। इसका कारण यह भी हो सकता है, कि शायद वे जानते ही नहीं हैं, कि ये सब उपसर्ग यक्ष्मा-रोगके अग्र-दूत हैं अथवा जान-बूझकर भी आलस्यके कारण इधर ध्यान ही नहीं देते। माता-पितामें अगर यक्ष्मा-दोष रहता है, तो सन्तानमें वह अवश्य हो जायगा—इसमें बहुत मत-भेद है; पर यक्ष्मा-दूषित पिताके पास रहने या यक्ष्माकी रोगिनी माताका स्तन पीनेपर सन्तानको यक्ष्मा हो जाता है, इसमें जरा भी मतभेद नहीं है।

२। छुआछूत—अर्थात स्पर्शाक्रमणसे भी यक्ष्मारोग फैलता है; इस तरहका संचार बचपनमें ही अधिक होता है। किसी परिवारमें अगर कोई यक्ष्मा-रोगी रहता है, तो स्पर्शाक्रमणसे

परिवारके बच्चेकी रक्षा होना बहुत ही कठिन है। अगर स्तन-पिलानेवालीमें यक्ष्माका दोष रहता है, तो वह स्तन-पीनेवाले बच्चेमें चला जाता है। यक्ष्मा रोगीके काममें आयी हुई चीज-वस्तु, कपड़े-लत्ते, गमछा और शय्यासे भी रोग फैलता है। इस कारणसे उसके व्यवहारमें आयी हुई थाली, गिलास, कपड़े, गमछा या बिछावनका किसी दूसरे आदमीको व्यवहार करना उचित नहीं है। **मक्खियोंसे** इसका बहुत अधिक विस्तार होता है। **यक्ष्मा-रोगीका थूक सबसे ज्यादा रोग फैलाता है।** मक्खी जब यह थूक खाती है, तो उसके खानेके बादसे ही उसके मलके साथ यक्ष्माके जीवाणु निकलने लगते हैं और **ये सब जीवाणु १५ दिनोंतक तेज-पूर्ण** बने रहते हैं। इस तरहकी मक्खी जब मनुष्यके खाद्यपर बैठती है, तो उस खाद्यको खानेसे यक्ष्मा हो जानेकी बहुत अधिक सम्भावना रहती है; बल्कि अगर यक्ष्माका रोगी इधर थूकता है, तो वह थूक सूखकर उसके कण हवाके साथ मिल जाते हैं और वे जब नाक या मुँहमें प्रवेश करते हैं तो उसके साथ ही यक्ष्माके जीवाणु भी संचरित हो सकते हैं। अगर उपदंश रोगका कोई रोगी किसीका चुम्बन कर ले तो भी उसमें रोग प्रवेश कर जानेकी सम्भावना है। **यक्ष्मा-ग्रस्त रोगीके चुम्बन द्वारा** भी उसका रोग दूसरेमें चला जाता है। अतएव इस बातपर खयाल रखना चाहिये कि बच्चेको जो चाहे वही चुम्बन न करने लगे। माता-पिताको इसपर सतर्क दृष्टि रखनी चाहिये।

२। नयी बीमारीके बादकी कमजोरी ; जैसे—बार-बार ब्राङ्काइटिस, खसड़ा, टाइफायड ज्वर, निमोनिया, प्लुरिसि, हूप-खाँसी इत्यादि नयी प्रकृतिकी व्याधियाँ स्वास्थ्य और शक्तिको नष्टकर जब रोगके बादवाली कमजोरी पैदा कर देती हैं, उस समय थोड़ी भी असावधानतासे यक्ष्माका सञ्चार हो सकता है। गर्भावस्थामें प्रसूतिका स्वास्थ्य बिगड़कर या भोजनकी गड़बड़ीसे, सौरी-घरकी गन्दी अवस्थाके कारण, प्रसवके बादकी परिचर्या और पुष्ट भोजनकी कमीसे गर्भा-वस्थामें और सन्तान-प्रसवके छः महीनेके भीतर ही स्वामि-सहवास इत्यादि अमिताचारके दोषसे भी यक्ष्मा हो सकता है।

यक्ष्मा-जीवाणुका जीवन।

साधारण सड़न रोकनेवाले "फिनाइल" इत्यादि द्रव्यके प्रयोगसे यक्ष्माके जीवाणुओंको नष्ट नहीं किया जा सकता। कार्बोलिक-एसिड और लाइसलका प्रयोग करनेपर भी इन्हें ध्वंस करनेमें कई घण्टे लगते हैं। विच्छिन्न धूपकी किरणमें, बहुत दिन बाद ये निर्वीर्य हो जाते हैं ; पर साक्षात सूर्यकी किरण लगनेपर ये जीवाणु कई मिनटोंमें ही ध्वंस हो जाते हैं।

यक्ष्माके जीवाणु प्रायः डेढ़ बरसतक सतेज रहते हैं। सूखी जगहोंमें इनका तेज नष्ट हो जाता है, पर शीतकी अधि-कताकी वजहसे तेज नहीं घटता। अग्निके साथ सम्पर्क होने पर सभी जीव और जीवाणु भस्म हो जाते हैं, पर आगसे

निकले हुए सूखे तापसे यक्ष्माके जीवाणुओंका ध्वंस करना मुश्किल है। आर्द्र उत्तापको (moist heat) की प्रखरताके अनुपातसे यक्ष्मा-जीवाणुकी तेजी घटती है, १०० डिग्री आर्द्र उत्तापसे ये ३ मिनटोंमें ध्वंस हो जाते हैं। ६० डिग्रीके आद्र उत्तापसे ध्वंस होनेमें आध घण्टेका समय लगता है। इसीलिये गरम भाफका प्रयोगकर इनको ध्वंस करनेकी पद्धतिका अनुसरण किया जाता है।

यक्ष्मा रोगीको एक बड़े मुँहवाले ढकनेदार टिनकी कटोरी या शीशीमें थूकना उचित है और उसमें थोड़ा कार्बोलिक एसिड मिला रखना उचित है। रोज दो बार इस शीशीमें बटोरे हुए थूकमें खौलता हुआ पानी डालकर अच्छी तरह हिलाकर मोरीमें फेंकना उचित है। रोगीके काममें आयी हुई—थाली, कटोरी, गिलास प्रभृति चीजें दो बार खौलते हुए पानीमें १० मिनटतक डुबो रखकर, उन्हें ठीक तौरसे माँज लेना चाहिये। रोगीके बिछावनको दो घण्टोंतक नित्य कड़ी धूपमें डाल रखना चाहिये और कपड़े आदि नित्य १० मिनटतक खौलाकर, फिर साबुनसे धोकर धूपमें सुखाना चाहिये। इस तरहकी सतर्कता रखनेपर घरके अन्य मनुष्योंमें तथा अड़ोस-पड़ोसमें इस रोगके फैलनेकी कम सम्भावना रहती है।

मानव-शरीरमें प्रवेशकर यक्ष्माके जीवाणु—देह-तन्तु (tissue) में आश्रय ग्रहण करते हैं और वहीं रहकर संख्या बढ़ाया करते हैं; इससे स्थानिक और सार्वाङ्गीन परिवर्त्तन

हो जाता है। **स्थानिक परिवर्त्तनका** लक्षण है, उस स्थानपर गुटिका (tubercles) उत्पन्न होना, संख्या-वृद्धि, रासायनिक लीला, छानाकी तरह पदार्थ (caseation) का उत्पन्न होना और गह्वर (cavity) बनाकर रोगीके शरीरमें स्थानीय लक्षणोंका उत्पन्न करना। यक्ष्मा-जीवाणुसे निकला हुआ विष-पदार्थ (toxin) और रोगीके देह-तन्तुका ध्वंस और विश्लेषणसे निकला हुआ विष, रोगीके खूनके साथ उसके सारे शरीरमें फैलकर **सार्वाङ्गीन अन्यान्य साधारण लक्षण** सब प्रकट करते हैं।

श्वास-यंत्रके यक्ष्मामें।

प्रधानत: चार राहोंसे यक्ष्माके जीवाणु फेफड़ेके तन्तुओंमें पहुँचते हैं:—

(क) नाक प्रभृति श्वासनलीकी राहसे।

(ख) शरीरके किसी दूसरे यक्ष्माधिकृत केन्द्रसे रक्त-प्रवाहके साथ फेफड़ेमें जा पहुँचते हैं।

(ग) आँतके पासके स्थान या वक्ष-गह्वर अथवा दूसरे स्थानसे लसिका-रस-प्रवाहके साथ वे फेफड़ेमें जा पहुँचते हैं।

(घ) फेफड़ेके पासवाले किसी दूसरे यक्ष्मा-ग्रस्त यन्त्रसे रोगका प्रसार होकर फेफड़ातक बीमारीका दौरा हो जाता है।

लड़कपनमें फेफड़ेका मध्य भाग (middle lobe) और उसका तलदेश (base) पर अधिकतर बीमारीका दौरा हो जाता है।

जवान व्यक्तियोंके फेफड़ेके शिखर-देश (apex) पर ही बीमारीका हमला अधिक हुआ करता है। उसके पासकी श्वासनलीकी शाखायें भी यक्ष्मा-ग्रस्त हो पड़ती हैं।

देह-तन्तुमें आश्रय ग्रहणकर यक्ष्माके जीवाणु जो गुटिका (tubercle) उत्पन्न करते हैं, वह चर्बी और अण्डलाल मिला पदार्थ रहता है और उसमें अम्लजान (oxygen) नहीं रहता या साँसके साथ ग्रहण किये हुए अम्लजानकी किसी तरहकी क्रिया उसपर नहीं होती। इसीलिये यह बहुत जल्द सड़ने लगता है और जिस तन्तुपर वह होता है, उस तन्तुको भी दूषित और क्षय किया करता है। इसी तरह फेफड़ेके जिस स्थानपर गुटिका उत्पन्न होती हैं, वही अंश क्षय होकर वहाँ गह्वर (cavity) बन जाया करता है।

पहले ही कहा जा चुका है, कि यक्ष्मा रोगके आरम्भसे ही रोगी दुबला और कमजोर होता जाता है। ज्यों-ज्यों बीमारी बढ़ती जाती है त्यों-त्यों दुबलापन और कमजोरी बढ़ती ही जाती है। इसीलिये रोगीका शारीरिक वजन और बल बने रहनेकी ओर सदैव चिकित्सकको लक्ष्य रखना चाहिये।

खाँसी और रक्तोत्कास।

कण्ठनालीका प्रदाह पहले ही दिखाई देता है अथवा रोगकी किसी भी अवस्थामें उपसर्गके रूपमें पैदा हो जा सकता है। रोगकी बढ़ी हुई अवस्थामें सभी रोगियोंको खाँसी आती दिखाई देती है। इसके द्वारा एक तरहका विकृत स्वर पैदा

हो जाता है; यह स्वर अन्यान्य स्वर-भङ्गोंसे अलग ही होता है और इसे सुनते ही अभिज्ञ चिकित्सक समझ सकता है कि इसके पीछे कोई बाघ बैठा है। बहुतसे इस लक्षणपर पहले ध्यान ही नहीं देते, पर अंकुरावस्थामें ही यदि इसका उपाय नहीं किया जाता है, तो उससे सार्वाङ्गीन प्रदाह (irritation) होता है और फेफड़ेकी गुटिका बढ़ जाया करती है।

पहले दो अलग-अलग ढङ्गकी खाँसी इस बातको बताती है कि इस रोगका आरम्भ हो रहा है। किसी-किसीको छोटी "खुसखुसी" खाँसी लगातार ही बनी रहती है, पहले इसके साथ बलगम नहीं निकलता; इसके बाद फेन-भरा थोड़ा-सा बलगम निकलता है; इसके बाद साफ चमकीला लसदार श्लेष्मा और फिर पीली आभा लिये या उसका रङ्ग हरा हो जाता है। इसके अनन्तर उसमें खूनके छींटे दिखाई देते हैं और फिर उसके साथ खासा खून निकलने लगता है। किसी-किसीको ऐसा होता है, कि सवेरे या रातमें सोनेके समय अथवा दिन-भरमें दो-तीन बार **झोंककी खाँसी** आती है और उसीसे रोगी कातर हो पड़ता है। खाँसी सूखी और ऊपर लिखे क्रमके अनुसार धीरे-धीरे बलगम और खून दिखाई देने लगता है।

ज्यों-ज्यों रोग बढ़ता जाता है, त्यों-त्यों खाँसीकी संख्या भी बढ़ती जाती है अर्थात बार-बार खाँसी आया करती है। प्रत्येक बार बहुत देरतक खाँसना पड़ता है और खाँसनेके

कारण रोगीकी तकलीफ बढ़ जाया करती है। ये सब विभिन्न प्रकारकी खाँसियाँ, यक्ष्मा रोगके अपरिहार्य और आलिङ्गित लक्षण हैं। जो नहीं जानते, वे रोगके मूलमें लक्ष्य न रख, इस खाँसीको आराम करनेकी निष्फल चेष्टा किया करते हैं। कितने ही अफीम, डायोविन प्रभृति अवसादक दवाएँ मिला सिरप (शरबत) प्रयोगकर उसको दबा देनेकी चेष्टा किया करते हैं ; पर इसका भावी-फल बहुत ही भयङ्कर होता है। पेटेण्ट दवाओंके आडम्बरपूर्ण विज्ञापनोंसे प्रलुब्ध होकर कितने ही उसका प्रयोग करते हैं और सामयिक लाभ भी दिखा देते हैं ; पर थोड़े दिनोंतक बन्द रहने बाद यह खाँसी इतने जोरसे और प्रबल भावसे तथा बार-बार आने लगती है, कि उससे रोगीकी साँस रुक जाना चाहती है और बहुत अधिक खून मिला बलगम निकलता है। बायोकेमिक दवाओंसे इस प्रकृतिकी खाँसी और इसके साथ ही मूल रोग भी हट जाया करता है।

खून निकलना।—क्षय रोगका एक साधारण लक्षण है। रोगी और उसके रिश्तेदार रक्त फेफड़ेसे आता है, यह सहजमें स्वीकार नहीं करना चाहते और पहले उसे दाँतकी जड़से या कण्ठनालीसे आया हुआ बताते हैं ; पर होशियार इलाज करनेवाला चिकित्सक इन बातोंमें नहीं आता ; वह नियमित रूपसे अपना कर्त्तव्य पालन करता जाता है। यदि खाँसी बहुत थोड़ी भी आये तो भी—

अगर निकले हुए श्लेष्माके साथ रक्तका चिन्ह रहे और उस समय रोगीका बल क्षय, शारीरिक वजन घटना और शीर्णता होती जाये, तो उस बीमारीका यक्ष्मा ही निर्णय करना उचित है और उसके अनुसार औषध, पथ्य और परिचर्याकी व्यवस्था करनी उचित है।

यक्ष्मा-गुटिकाके चारों ओरके तन्तुओंमें रक्तकी अधिकताकी वजहसे इन सब स्थानोंमें प्रदाह हो जाता है, इसलिये थोड़ासा रक्त निकलनेपर रोगीको कुछ आराम मालूम होता है ; पर अगर कुछ अधिक रक्त-स्राव होता है, तो रोगी तुरन्त ही बहुत क्षीण हो जाता है और उसकी अवस्था आशङ्का-जनक हो जाती है। कण्ठ या फेफड़ेकी शिरायें फटकर खून-मिली खाँसी (रक्तोत्कास) बहुत कम होता दिखाई देता है।

यक्ष्मा रोगमें फेफड़ेमें बहुत अधिक प्रदाह होता है, इसीलिये हृद्-यन्त्र और रक्तवहा-नाड़ियोंको बहुत अधिक काम करना पड़ता है। इसलिये इस अवस्थामें—दौड़ना, सीढ़ी पर चढ़ना, पहाड़ी जगहोंमें घूमना, जोरसे बोलना, गाना, कसरत करना या भारी चीजें उठना प्रभृति परिश्रम पड़नेवाले काम करनेपर खूनका स्राव होकर बहुत बड़ा अनर्थ होनेकी सम्भावना रहती है।

ज्वर।—नये प्रबल आक्रमणके सिवा ज्वरका विशेष उत्ताप नहीं देखनेमें आता है। साधारणतः तीसरे पहर या सन्ध्याके आरम्भमें शरीरके बाहरी उत्तापकी अपेक्षा एक या आधा डिगरी ही गर्मी बढ़ती है; परन्तु इतने उत्तापके रहने-पर हृद्-यन्त्रका बहुत तेजीसे धड़कने लगना ही इस रोगकी विशेषता है। बीमारीके सूत्रपात होते ही बराबर बना रहने-वाला धीमा बोखार रहता दिखाई देता है।

स्वस्थ और परिपुष्ट व्यक्तियोंकी उमर और लम्बाईके अनुसार शरीरका वजन।

उमर	लम्बाई	वजन
तुरन्तका जनमा	२० इञ्च	३॥ सेर
३ मास	२४ „	७ „
१ बरस	२८ „	११ „
२ „	३४ „	१३॥ „
५ „	४० „	१८ „
१२ „	५० „	२७ „
१४ „	५४ „	३६ „
१६ „	५६ „	४० „
२० „	६२ „	५८ „

जिन मनुष्योंकी लम्बाई ऊपर लिखी सूचीसे कम हो उनके देहका वजन भी उसी अनुपातसे कम रखकर विचार

करना होगा। सोलह बरसके युवकके वजनकी अपेक्षा सोलह बरसकी षोड़शीका वजन प्रायः १ सेर कम होगा।

उद्दाम यक्ष्मा।

(Galloping Phthysis).

जब ऊपर बताये लक्षणोंके साथ बीमारी प्रकट होती है, उस समय तूफानकी तरह बड़े वेगसे वह बढ़ जाया करती है और बहुत जल्द फेफड़ेके तन्तुओंको ध्वंस कर देती है। इस अवस्थामें—इस रोगको "गैलोपिङ्ग थाइसिस" कहते हैं। साधारण यक्ष्मावाला रोगी जब कुछ अनियम और अत्याचार करता है, तो रोगकी यह उद्दाम अवस्था उत्पन्न हो जाती है। नीचे इसके कुछ उदाहरण दिये जाते हैं।

१। निषिद्ध पदार्थोंका खाना।

२। अच्छी तरह वस्त्र न पहनकर सर्दी लगाना।

३। शराब पीना या दूसरी उत्तेजक चीजोंका सेवन।

४। बहुत भारी चीज उठाना, दौड़ना, क्रोध, शोक, भय।

५। रति-क्रिया।

यक्ष्माका रोगी यदि इन विषयोंसे सतर्क न रहे तो उसके आरोग्य होनेकी आशा नहीं रहती।

नीचे लिखे विषयोंपर ध्यान रखकर यक्ष्मा रोगीकी चिकित्सामें हाथ लगाना चाहिये।

१। रोगीको यथासम्भव आरोग्यके अनुकूल स्थानमें रखना होगा तथा उसकी सेवा शुश्रूषा और पारिपार्श्विक अवस्थाको ठीक रखना पड़ेगा।

२। भोजन और आहारमें रुचि पैदा करनेका प्रबन्ध करना होगा। उसके साधारण स्वास्थ्य और शारीरिक पुष्टिके योग्य उपयुक्त औषधि और पथ्यका प्रबन्ध करना पड़ेगा।

३। वक्षका घेरा बढ़ाकर बहुत ज्यादा वायु श्वासके साथ ग्रहणकर रोगीके रक्त-प्रवाहमें अम्लजान बढ़ानेकी व्यवस्था करनी होगी।

४। हर तरहके रक्ताधिक्य, प्रदाह, खाँसी और रक्तोत्कास-का दमन करना होगा और ब्राङ्काइटिस, प्लुरिसि और निमो-नियाका आक्रमण या दुबारा आक्रमण किसी तरह न हो जाये इसपर लक्ष्य रखना होगा।

५। चिकित्साधीन क्षय-रोग दब या आरोग्य हो गया हो, तो इस बातपर हमेशा लक्ष्य रखना होगा कि वह फिरसे पैदा न हो जाय।

६। सब तरहकी उत्तेजनाओंसे अलग रहना होगा।

७। पाचन-क्रिया नियमित हो, इस बातपर ख्याल रखना पड़ेगा। यदि पाचन-शक्ति बिगड़ गयी हो, तो उसे बढ़ानेकी चेष्टा करनी होगी।

पथ्य और परिचर्या ।

विश्राम, हलका व्यायाम, बहुत ज्यादा खुली हवा, भरपूर पुष्ट भोजन, इन चार विषयोंसे यक्ष्मा रोगीका कल्याण होता है। रोगीकी मानसिक प्रसन्नता, उसके आरोग्यमें बहुत अधिक सहायता पहुँचाती हैं। साफ-सुथरे रहना क्षय रोगकी चिकित्साका एक अपरिहार्य अङ्ग-स्वरूप है।

भरपूर पुष्ट भाजन और नियमित कोष्ठ-शुद्धिकी ओर पहलेसे ही सतर्क दृष्टि रखनी चाहिये। असमयका खाना खराब है। रसोईके दोषसे भी कितनोंकी ही पाचन-क्रियामें विकार और अरुचि पैदा हो जाती है। ये दोनों उपसर्ग पैदा हो जानेपर रोगीके पोषण और पुष्टि-साधनमें कमी और बाधा पड़ जाती है और चिकित्सक भी चिन्तामें जा पड़ता है, इसीलिये इन दोनों विषयोंपर लक्ष्य रखना होगा।

दूध, मक्खन, गायका घी और नवनीत अर्थात जिन सब खाद्योंमें "बसा" (fat) जातीय पदार्थ वर्त्तमान रहते हैं, वे क्षय रोगियोंके लिये उपयोगी पथ्य हैं। मांसाहारी रोगीको भेंड़का मांस या मुर्गेके मांसका जूस दिया जा सकता है; नहीं तो छोटे मोरका मांस, माँगुर मछली और गुगलिका शोरबा देना चाहिये। अगर रोगीको आपत्ति न रहे, तो सवेरे दूध और चीनीके साथ एक ताजे मुर्गेके अण्डेका पीला अंश (yellow of the egg) अच्छी तरह मिलाकर दिया जा सकता है। अगर पचे तो इससे बहुत ताकत बढ़ती है,

अगर सहन न हो तो २४ घण्टोंमें १॥ सेर गायका दूध रोगीको पिलाना उचित है। यह पूरी उमरवाले रोगीके वास्ते उपयुक्त मात्रा है। अतएव अगर रोगीकी उमर कम हो तो उसीके अनुसार कम भी कर देना चाहिये। अगर **पतले दस्त आते हों**—तो जल-आरारूटके साथ थोड़ा-सा दूध, जल-बार्लीके साथ नमक और कागजी नेबूका रस, जल-सागूका पथ्य देना पड़ता है। बहुत अधिक कमजोरी रहनेपर, इस अवस्थामें कच्चे मांसका जूस (raw-meat-juice) फायदा करता है। सिंघाड़ेका आँटा भी जल्दी पचता और फायदा भी करता है।

अगर १०० डिगरीसे अधिक बोखार न रहे, तो पुराना अरवा चावलका भात, सूजीकी रोटी, लाल आटेकी रोटी या पाव-रोटीका टुकड़ा आगमें सेंककर (toast) दिया जा सकता है। कच्ची साग-सब्जियाँ भी भरपूर दी जा सकती हैं, पर भूनकर नहीं। कच्ची अवस्थामें या सिझाकर देना उचित है।

पलवर, गूलर, कच्चा केला, विट, गाजर, तोरई, भिण्डी, कच्चा मटर, बरबटी, टमाटो, पलबल-लत्ती, ब्राह्मी साग, पालम साग, सजनेके डांटा वगैरह पथ्य रूपमें दिये जा सकते हैं; पर इन सब अन्न या तरकारियोंमें तेल डालनेसे ही नुक-सान करने लगती है; जरूरतके अनुसार गायका घी, नमक और गोल-मिर्चकी बुकनी मिला देनी चाहिये। कद्दू या बैंगन यक्ष्मा-रोगियोंको न देना चाहिये; उनके लिये ये कुपथ्य हैं।

फल खूब फायदा करता है, पर बहुत पका फल खानेपर हानि होती है। बेदाना, अंगूर, मीठा कमला नेबू, अञ्जीर, सेव, मुनक्का, खजूर, पीच-फल, कसेरू, केला, सिंघाड़ा, बेलका मुरब्बा, कोहड़ा-पाक, आँवलेका मुरब्बा, मीठा आम और अमावट—ये सभी मुँहका स्वाद भी बढ़ा देते हैं और पुष्ट भी करते हैं।

स्नान।—सहन हो तो रोज कुछ गर्म पानीमें नहाना चाहिये; नहीं तो एक दिन या दो दिनोंके अन्तरसे नहाना चाहिये; पर यदि रोज नहाना सहन न हो तो कम-से-कम नित्य गरम पानीमें तौलिया भिंजाकर शरीर पोंछ डालना चाहिये। नहाने या बदन पोछनेके समय रोगीके शरीरमें हवा लगना ठीक नहीं, बन्द घरमें ही ये सब काम करने चाहियें। नहाने या बदन पोछनेके पानीमें थोड़ा-सा नमक या "ओडिकोलन" मिला देना चाहिये। इससे चर्मकी क्रिया बढ़ती है और पसीनेसे पैदा हुई बदबू और बेचैनीसे रोगीको छुटकारा मिल जाता है।

खुली साफ हवा—इस बीमारीकी बहुत ही मूल्य-वान दवा है; यदि इसे पथ्य कहा जाये तो भी अत्युक्ति नहीं है। रोगी जितना ही खुली हवामें रहेगा, उसके सोनेके कमरेमें जितनी ही सूर्यकी किरण और खुली हवा प्रवेश करेगी, उसको उतना ही अधिक फायदा होगा। काममें आनेवाली और वह भी तुरन्त काममें आनेवाली चीजोंके

अलावा और कोई विशेष सामान उसके घरमें न भर रखना चाहिये ; सब खिड़की, दरवाजे दिन-रात खुले रखने चाहिये सिर्फ जाड़ेकी रातमें और बरसातके समय ऐसा प्रबन्ध रखना चाहिये कि उसके शरीरमें हवाका झोंका न लगने पाये, इसलिये खिड़कीसे कुछ दूरीपर रोगीका पलङ्ग रखना चाहिये। सर्दी दूर करनेके लिये रजाई, कम्बल वगैरह अच्छी तरह ओढ़ाये रखना चाहिये ; पर खिड़की न बन्द करनी चाहिये और उसकी कोठरीमें आग न जलाना चाहिये। जरूरत पड़नेपर, गरम पानीसे भरा रबर या काँचका बोतल रोगीके बिछावनमें रखकर उसका जाड़ा दूर किया जा सकता है। रोगीके कमरे या बैठनेकी जगहपर धूल या धुआँ न इकट्ठा हो, इसपर नजर रखनी चाहिये। अगर पासमें कोई बाग या नदीका किनारा हो, तो वहाँ किसी वृक्षकी छायामें छोटी चौकी या कैनवेसकी कैम्प-चेयर बिछाकर अधिकांश समय रोगीको उसी जगह रखना चाहिये और बीच-बीचमें थोड़ी-थोड़ी देरतक टहलने देना चाहिये।

विश्रामके द्वारा शक्ति-सञ्चय और सूर्य किरण तथा विशुद्ध वायुके द्वारा जठराग्निका उद्दीपन और पुष्टि-साधन, यक्ष्मा-चिकित्साका मूलीभूत उद्देश्य है।

औषध ।

फेरम-फास ।—ज्वर या बीच-बीचमें चेहरेका गरम भाव और चेहरा लाल रङ्गका हो जाता है। श्वासमें कष्ट; खाक-खाककर सूखी खाँसी, श्वास-नलीका प्रदाह, वक्षमें दर्द, निकले हुए बलगमके साथ खूनका छींटा लिपटा रहता है। बहुत अधिक रक्तोत्कासके लिये भी फेरम-फास उत्कृष्ट दवा है; फेन-भरा चमकीला लाल रक्त इसकी विशेषता है।

कैल्केरिया-फास ।—धीमा-धीमा क्षय-रोग, दुबलापनकी प्रधानता रहनेपर यह दवा बहुत फायदा करती है; इसके साथ ही दूध, मक्खन और शर्करा प्रधान भोजन देना चाहिये। क्षय-रोगमें ताकत बनाये रखनेके लिये दूसरी दवाके साथ पर्यायक्रमसे इसका प्रयोग करना चाहिये।

कैल्केरिया-सल्फ ।—निकला हुआ श्लेष्मा पीव-मिला, मांस धोये पानीकी तरह रङ्गका, खून-मिला श्लेष्मा; लगातार बलगम निकला करता है, बलगम निकलनेमें कोई तकलीफ नहीं होती।

नेट्रम-म्यूर ।—क्षय-रोगमें, पानीकी तरह साफ, तरल और फेन-भरा या रक्त-मिला श्लेष्मा। सामान्य हिलने-डोलनेसे ही रोगीको बहुत कमजोरी मालूम होती है और वह खाटसे लग जाता है। वक्षमें पतले श्लेष्माकी वजहसे घर-घर आवाज होती है। क्षय रोगीकी पुरानी खाँसीके साथ फेन-

भरा बलगम निकलना। समुद्र किनारेकी जगह, जहाँकी हवामें लवणका भाग अधिक रहता है, जिन रोगियोंकी अवस्था अवनतिकी ओर अग्रसर होती जाती है, उनके लिये नेट्रम-म्यूर उपयोगी दवा है। **तेज रक्तोत्कास रोकनेके** लिये नेट्रम-म्यूर और इसके साथ ही पर्यायक्रमसे "फेरम-फास" का प्रयोग करनेपर तुरन्त फायदा दिखाई देता है; बल्कि इसके साथ ८४ पृष्ठमें लिखे उपदेशके अनुसार लवण-द्रव मल-द्वारकी राहसे प्रयोग करनेपर रक्तोत्कासके कारण पैदा हुई कमजोरी और पतनावस्था शीघ्र ही दूर हो जाती है।

साइलिसिया।—क्षय रोगकी यह एक श्रेष्ठ दवा है। इस बीमारीके प्रायः सभी लक्षण, खासकर रोगकी अन्तिम अवस्थाके सभी उपसर्गोंके लिये "साइलिसिया" उपयोगी है। गाढ़ा, पीली आभा लिये हरे रङ्गका बदबूदार पीबकी तरह बलगम निकलना; इसके साथ ही रोगीके मुँहमें एक मीठा वेस्वाद रहता है। सब समय बना रहनेवाला हलका पीब-ज्वर, तलवेमें जलन अनुभव होना, रातके समय माथेमें बहुत अधिक पसीना; कब्ज बना रहता है; तलवेके पसीनेमें बहुत बदबू; ढीली घर-घर शब्द करनेवाली खाँसी; बहुत अधिक श्लेष्मा निकलना।

कैलि-सल्फ।—क्षय-रोगमें खाँसीके साथ श्लेष्मा निकलना; कैलि-सल्फ्युरिकमके श्लेष्माकी प्रकृति ९० पृष्ठमें वर्णित की गयी है। बलगम गलेतक आकर फिर नीचे उतर

जाता है, निकाल नहीं सकता, ठण्डी खुली हवाकी इच्छा करती हैं; श्वासके वक्त सब उपसर्ग बढ़ जाते हैं; चर्म्म रूखा और सूखा।

कैलि-म्यूर।—गाढ़ा सफेद श्लेष्मा निकलना, सफेद या पीली आभा लिये लेप चढ़ी जीभ। कण्ठनलीमें प्रदाह; श्वासमें कष्ट और हृत्पिण्डका तेजीसे काँपना।

कैलि-फास।—गहरी साँस नहीं ले सकता; तेज और अगभीर श्वास-प्रश्वास, निकले हुए श्लेष्मामें सड़ी गन्ध आती है। सार्वाङ्गीन दुर्बलता और पतनावस्थामें कैलि-फास दवासे शक्ति संरचित होती है। क्षय रोगकी निद्राहीनताकी यह बहुत बढ़िया दवा है।

नेट्रम-सल्फ।—वक्षमें गहरी कमजोरी मालूम होना; खाँसीके साथ पीब-मिला पीली आभा लिये हरे रङ्गका श्लेष्मा निकलना; नेट्रम-सल्फका रोगी बरसातके समय, जलाशयके निकट रहने, तर घरमें, पानीमें खड़े होकर काम करने, मछली खाने या पानीके पासकी जगहमें पैदा हुए फल या तरकारी खानेपर उसकी बीमारी बढ़ जाती है। उसके शरीरमें श्लेष्माकी अधिकता (hydrogenoid condition) मौजूद रहता है। प्रमेह-दूषित धातुमें भी नेट्रम-सल्फकी विशेष क्रिया दिखाई देती है।

यक्ष्मा-रोगीकी रक्ताल्पता अगर प्रबल हो जाये तो १५८—१६० पृष्ठमें लिखी प्रणाली अवलम्बन करनी चाहिये।

श्वास-नली-सम्बन्धी लक्षण—(Bronchial symptoms)—प्रबल हो जानेपर १८३ पृष्ठसे २०४ पृष्ठतक देखिये।

आक्षेप-टङ्कार।

(Convulsion)

मुख-मण्डल तथा अन्यान्य अङ्गोंकी पेशीका अनैच्छिक आकुञ्चन और प्रसारणके साथ अचेतन अवस्थाको "कानवलशन" कहा जाता है। यह प्रचण्ड या मृदु—दोनों ही तरहका हो सकता है। बच्चे और बालक-बालिकाओंकी इस अवस्थाको "अकड़न-टङ्कार" या कानवलशन कहते हैं और अवस्था प्राप्त मनुष्योंको जब यह हो जाता है, तो उस अवस्थाको "आक्षेप" या spasm (स्पैज़्म) कहते हैं।

बायोकेमिक मतसे—स्नायु और पेशियोंके सफेद तन्तुओंके अजैव लवणका क्षय हो जानेकी वजहसे यह अवस्था उत्पन्न होती है। निर्दिष्ट लवणकी कमीको पूर्ण करनेके द्वारा इसका प्रतिकार हुआ करता है।

"कानवलशन" वास्तवमें स्वयं कोई व्याधि नहीं है। यह दूसरे-दूसरे रोगोंका एक प्रतिफलित उपसर्ग-भर है। यही स्नायविक विशृङ्खलता है।

खास-क्षेत्र।—माता-पिताकी धातुसे प्राप्त (जन्मार्जित); स्नायु-प्रवणता; रिकेट्स रोग; खूनकी कमी; रोगके बादकी कमजोरी; किसी दूसरे कारणसे शक्ति क्षय हो जाती है। ये सब अवस्थागत बच्चे और बालक-बालिकाओंको कानवलशन होनेकी सम्भावना अधिक रहती है।

उद्दीपक कारण।—शरीरके किनारेवाले भागका प्रदाह और उत्तेजना। जैसे—आगसे जलना; गरम पानी या दूध इत्यादि गिरनेकी वजहसे झुलस जाता है। कपड़ा, धोती अटकानेकी आलपीन असावधानताके कारण किसी अङ्गमें बिध जाया करती है। न पची हुई चीजका पाकाशयमें रह जाना; कड़ा मल आँतोंमें इकट्ठा रहना; नकली बनावटी खाद्य-पदार्थ खानेकी वजहसे उदरमें वायु-सञ्चय; क्रिमिके कारण पैदा हुई उत्तेजना; दाँत निकलना; कर्ण-शूल या कानके भीतर कीड़े या दूसरे पदार्थोंका रहना; पेशाब रुक जाना; परिश्रम करनेकी वजहसे या सूर्यकी गरमीमें शरीर गर्म रहनेपर एकाएक सर्दी लग जाना; डर; मस्तिष्कमें खूनकी कमी हो जाना या खून ज्यादा बढ़ जाना; मस्तिष्कका आवरक-तन्तु (meninges) की वजहसे बीमारी।

खसड़ा, चेचक प्रभृति रोगोंमें अगर ठीक-ठीक समयपर गोटियाँ या दाने न निकलते हैं अथवा अनजानमें दब जाते हैं, तो "कानवलशन" पैदा हो जाता है। मैलेरिया या किसी दूसरी तरहका तेज बोखार।

माताके डर जाने या शोक, मर्म-वेदना (आन्तरिक दुःख) क्रोध, उद्वेग इत्यादि स्नायविक गड़बड़ी पैदा होनेके बाद ही बच्चा अगर स्तनका दूध पीता है, तो अकड़न हो जानेकी विशेष सम्भावना रहती है। इस अवस्थामें प्रसूताको उपयोगी दवा सेवन कराकर उसका दूध निकालकर फेंक देना चाहिये; इसके बाद जब वह पूरी तरह स्वस्थ और शान्त हो जाये, तब बच्चेको स्तनका दूध पीनेको देना चाहिये।

आक्रमण।—बीमारीका आक्रमण एकाएक हो सकता है या कई दिन पहलेसे ही **आगन्तुक लक्षण सब** विकसित हो सकते हैं। बच्चा रोया करता है, खेलना और दौड़-धूप छोड़ देता है; हाथ-पैरकी अंगुलियाँ अकड़ने लगती हैं; अंगूठा, हाथकी तलहत्थीकी ओर टेढ़ा हो जाता और सट जाता है; हाथ-पैरोंका टेढ़ापन; दोनों ओठोंका सिकुड़ना या फड़कना; पलकोंका फड़कना और काँपना; एक या दोनों आँखोंकी पुतली सिकुड़ी या फैली। चक्षुगोलक स्थिर और निश्चल या लगातार हिलती रहती है। चेहरेके चारों ओर एक भूरा घेरेकी तरह दाग पड़ता है, चेहरेका रङ्ग बार-बार बदलता है और **श्वास-प्रश्वासमें** गड़बड़ी दिखाई देती है।

लक्षणावली।—यदि आक्रमण हलका हो, तो सिर्फ चेहरेकी पेशियोंपर ही रोगका हमला होता है; कोई एक अङ्ग या शरीरको आधे भागपर ही रोगका आक्रमण होता है।

एक या दोनों आँखें बिगड़ जाती हैं। आक्षेप तीन प्रकारका हो सकता है। (१) Tonic spasm अर्थात अङ्ग-प्रत्यङ्गका टेढ़ापन और कड़ा हो जाना; यह अवस्था बहुत देरतक स्थायी रहती है। (२) Clonic spasm अर्थात अनियमित रूपसे बार-बार होनेवाला आक्षेप अथवा अकड़न, फड़कना, उछलना और शिथिलता।

प्रायः सभी स्थानोंमें **आंखमें विकार** दिखाई देता है। आँख उलट-सी जाती है; पुतली ललाटकी ओर पलट जाती है और केवल सफेद अंशभर दिखाई देता है। आँख मानो गड़हेमें धँसकर या ठेलकर बाहर निकल आती है; देखनेमें आँख बहुत ही विकृत हो जाती है अथवा कितनी ही तरहसे घूमा रहती है; किसी-किसी रोगीकी पलक बराबर खुलती और बन्द होती रहती है। अधिकांश स्थानोंमें आक्रमणके आरम्भसे ही **कण्ठका आक्षेप** वर्त्तमान रहता दिखाई देता है। पतली या कड़ी चीज रोगी निगल नहीं सकता; **गर्दन और पीठ**—गर्दन अकड़ी और धनुषकी तरह टेढ़ी हो जाती है। **जीभ**—बाहर निकल पड़ती है; मुँहमें फेन-भरा थूक निकला करता है। **हाथ-पैर**—अकड़े या झटका खाते रहते हैं और रोगी उन्हें इधर-उधर पटका करता है। रोगके आक्रमणके आरम्भमें ही चेहरा लाल हो जाता है, इसके बाद घोर लाल या बैंगनी रङ्गका हो जाता है। कभी-कभी तो समूचे शरीरका रङ्ग बैंगनी हो जाता है; चेहरेकी

एक या एकसे अधिक पेशी-गुच्छमें अकड़न पैदा हो जाती है। रोगका स्थिति-काल कई मिनटसे—कई घण्टेतक हो जा सकता है।

अकड़न या आक्षेपके घटते रहनेपर अङ्गोंका कड़ापन और हिलना धीरे-धीरे घटता जाता है और शिथिल होता जाता है; बच्चा कुछ देरतक रोया करता है और उसके चेहरे और शरीरका स्वाभाविक रङ्ग लौट आता है। इस समय रोगी सो जाता है, उसके शरीरसे पसीना बहा करता है और नींद खुलनेपर शान्त और स्वस्थ हो जाता है। किसी-किसी रोगीको अकड़न होनेके बाद रोगी बहुत ही सुस्त हो जाता है, उसके माथेमें दर्द और भार मालूम होता रहता है और दूसरे दिनतक वह तन्द्रामें घिरे रहनेकी तरह आच्छन्न भावसे पड़ा रहा करता है।

किसी-किसी स्थानपर अकड़नका दौरा दूर होनेपर, किसी अङ्गके हिलनेकी शक्ति गायब हो जाती है। यह उपसर्ग आप-से-आप आरोग्य हो जाता है; पर मस्तिष्कके भीतरके उसी अङ्ग-सम्बन्धी स्नायु-केन्द्रोंपर जब आक्रमण हो जाता है, तो यह उपसर्ग स्थायी हो पड़ता है और पक्षाघातके लक्षण दिखाई देते हैं। ऐसी दुर्घटना बहुत ही कम होती है। प्रबल अकड़नका यह परिणाम होता है, तिर्यक-दृष्टि (डेरा देखना), तन्द्रामें घिरे रहना और पेशीका टेढ़ा पड़ जाना,— ये सब स्नायु-केन्द्रके ही उपसर्ग माने जाते हैं। कितनी ही

बार टङ्कार या अकड़न होनेके बाद रोगीमें मानसिक दुर्बलता अथवा बुद्धिकी गड़बड़ी होती दिखाई देती है।

दूसरे कारणसे प्रति-फलित आक्षेपके कारण कोई विशेष खराबी नहीं पहुँचती और वह सहजमें ही आरोग्य कर दिया जा सकता है; पर स्नायु केन्द्र-सम्बन्धी अकड़नका परिणाम अच्छा नहीं होता। एक वर्षकी उमरतकके बच्चोंको होनेपर यह भयकी बात है। अर्द्धाङ्गका पक्षाघात, कई दिनोंतक रहनेवाला अन्धापन, तोतलाना, डेरा देखना,—ये उपसर्ग अकसर पैदा होते दिखाई देते हैं। बचपनमें जिन्हें बार-बार प्रबल अकड़न हुआ करती है, उनमेंसे एक तिहाई रोगीको बड़े होनेपर "मृगी-रोग" होता दिखाई देता है।

चिकित्सा।

मैग्नेशिया-फास।—यह सब तरहकी अकड़न और सब अङ्गोंके आक्षेपमें ही उपयोगी है। पेशियोंका अकड़ना, सिकुड़ना, नाचना, फड़कना, बेहोशी इत्यादि लक्षणोंमें, गरम पानीके साथ इसका बार-बार प्रयोग करना चाहिये। उस समय अगर रोगीको दाँती लग जाये या जबड़े अटक जायें (lock jaw), तो रोगीके मसूढ़ेमें दवा घस देनेसे भी फायदा हो जायगा। चेहरेकी पेशियोंका आक्षेप, चेहरेके दोनों ओरके ओंठका बार-बार फड़कना, कोई चीज निगलनेकी चेष्टा करनेपर बार-बार कण्ठ-नली आक्षेप-ग्रस्त हो पड़ती है; बहुत तोतलाना।

कैलि-फास ।—भयकी वजहसे अकड़न, चेहरा रक्त-रहित या भूरे रङ्गका। अकड़नके समय इसके साथ पर्याय-क्रमसे मैग्नेशिया-फासका प्रयोग किया जाता है। अकड़न दब जानेके बाद, कुछ दिनोंतक केवल कैलि-फासका प्रयोग करनेपर, डरकी वजहसे पैदा हुई सुस्ती दूर होकर मानसिक शक्ति और स्थिरता पैदा हो जाती है। इस लवणके द्वारा मस्तिष्कके स्नायु-केन्द्र परिपुष्ट और सबल हो जाया करते हैं।

कैल्केरिया-फास ।—दुबले, क्षीण बच्चोंकी अकड़नमें, अकड़न बन्द हो जाने बाद, कुछ दिनोंतक इसका प्रयोग करनेपर, अकड़न होनेकी प्रवणता दूर हो जाया करती है। बच्चोंका दाँत निकलनेके समयका आक्षेप। इस लवणके द्वारा दाँत जल्दी निकलता है और कमजोर बच्चोंका पोषण हो जाया करती है।

कैलि-म्यूर ।—टङ्कारके बादका अपस्मार रोग—(मृगी—epilepsy) रोकनेके लिये इस लवणको एक अव्यर्थ दवा कहा जा सकता है। टङ्कारवाली अवस्थामें केवल मैग्नेशिया-फासका प्रयोगकर जब वह दब जाय तो कुछ दिनोंतक कैलि-म्यूरका प्रयोग करना पड़ता है।

फेरम-फास ।—दाँत निकलनेके समय अकड़नके साथ ज्वर मौजूद रहनेपर इस लवणका प्रयोग करना चाहिये; मैग्नेशिया-फासके साथ पर्यायक्रमसे प्रयोग किया जाता है।

आनुसङ्गिक चिकित्सा।

रोगीके कपड़े उतारकर उसे गरम पानीसे भरे टबमें गर्दन-तक डुबो रखना चाहिये और माथेपर ठण्डा पानी देना चाहिये; पानी बहुत गरम न रहना चाहिये; रोगीके शरीरमें छाले न पड़ जायें; इस अवस्थाको लगातार १५ मिनिटोंसे अधिक न रखना चाहिये। जरूरत मालूम पड़े तो एक घण्टा बाद फिर यही उपयाय करना चाहिये। १५ मिनट बाद गरम पानीसे उसे निकालकर सूखे कपड़ेसे जल्दीसे बदन पोंछ उसके गलेतक कम्बला ओढ़ाकर सुला देना चाहिये।

ज्वरकी तेजीकी वजहसे अगर अकड़न हो जाये, तो पहले ऊपर लिखे ढङ्गसे रोगीको गरम पानीमें बैठाकर, उसमें ठण्डा पानी या बरफ मिलाकर बहुत जल्द इस पानीको ठण्डा कर लेना चाहिये। माथेमें ठण्डे पानीकी धार देते रहना चाहिये। इस तरह १५ मिनटोंतक ठण्डे पानीमें रखनेके बाद, उसे निकाल, बहुत जल्दीसे सूखे कपड़ेसे बदन पोंछ, कम्बलसे ढँककर सुला रखना चाहिये। जरूरत होने-पर बार-बार इस प्रणालीका प्रयोग किया जा सकता है।

अगर बहुत ज्यादा खानेकी वजहसे या न पचनेवाली चीज खानेकी वजहसे बालक-बालिकाओंको अकड़न हो तो उन्हें कृत्रिम उपायोंसे कै करा देना चाहिये और इसके बाद उपयुक्त औषधिका सेवन कराना चाहिये।

आलपीन, सेफ्टि-पिन इत्यादि गड़ गयी है या नहीं, सबके पहले इस विषयकी खोज करनी चाहिये और ऐसे पदार्थको दूर कर देना चाहिये। रोगी जब होशमें आ जाता है, या उसके पहले ही रिश्तेदार या बन्धु-बान्धव उसे बुलाने और उसके चेहरेपर हँसी देखनेके लिये व्यग्र हो उठते हैं **यह एकदम मना है।** इस समय रोगीको एकदम मानसिक और शारीरिक विश्रामकी जरूरत रहती है, उसके कमरेमें किसी तरहकी आवाज, बातचीत, या गोलमाल न होना चाहिये। ऐसा प्रबंध रखना चाहिये कि उसकी आँखमें रोशनी न लगने पाये। इस समय उसे स्तन-पिलाने या कुछ खिलानेकी चेष्टा न करनी चाहये। इस समय सिर्फ दवा ही देनी चाहिये पर अगर उसे नींद आने लगे तो दवाका प्रयोग भी बन्द रखना चाहिये।

स्नेहके वशमें होकर, इस समय उसकी शान्ति भङ्ग करनेकी वजहसे कितने ही स्थानोंमें बार-बार अकड़न हो जाया करती है।

खाँसी।

(Cough).

वास्तवमें यह स्वयं कोई अलग बीमारी नहीं है। पर यह अन्यान्य रोगोंके लक्षण या उपसर्गके रूपमें आया करती है।

सर्दी लगकर गलनलीका प्रदाह, धूल या धुआँ प्रभृति उत्तेजक पदार्थके द्वारा कण्ठकी श्लैष्मिक झिल्लीमें उत्तेजना या प्रदाह, ब्राङ्काइटिस, न्युमोनिया, यक्ष्मा-रोग, क्रूप इत्यादि बीमारीके अन्यतम लक्षण-रूपमें खाँसी आया करती है। हृत्पिण्डकी बीमारी या उदरमें वायुकी अधिकता, क्रिमि-दोष, हिस्टीरिया इत्यादि अवस्थाओंके प्रति-फलित गौण उपसर्गके रूपमें भी खाँसीका वेग होता है। अगर उपजिह्वा बढ़ जाती है, तो कितनी ही बार बहुत ही तंग करनेवाली और दुर्दमनीय खाँसी पैदा हो जाती है। जरायुसे उत्पन्न या यकृतकी गड़बड़ीके कारण या सन्धिवात सम्बन्धी रोगके प्रतिफलित उपसर्गके रूपमें भी खाँसी आती है।

खाँसीकी कितनीही खास खास आवाजोंसे विशेष विशेष रोगका पता लगता है। अर्थात् रोग-विशेषके अनुसार खाँसीकी आवाजमें भी एक विशेषता होती है। इन शब्दोंकी जानकारी भी चिकित्सकोंके लिये बहुत ही प्रयोजनीय लक्षण है।

पहलेसे किसी तरहकी बेचैनी न रहनेपर भी रातके समय एकाएक खाँसीका वेग पैदा हो जाता है, कष्ट-साध्य और कर्कश श्वास-प्रश्वास ; रूखी, तेज, धातुके बने पात्रके भीतरसे वायु-प्रवाहकी आती हुई आवाजकी तरह खाँसी। यह **डिफ्थीरिया** रोग बतानेवाली खाँसी है।

कर्कश, ढीली और दर्द-भरी खांसी, इसके साथही ज्वर और तेज़ श्वास-प्रश्वास ; यह फेफड़ेमें श्लेष्मा बतानेवाली खाँसी है।

सूखी खाँसीके साथ तेज बोखार और श्वास-कष्ट, फेफड़ेका प्रदाह अर्थात **न्युमोनिया** निर्देशक खाँसी।

कुत्तेकी आवाजकी तरह शब्दवाली खाँसी, आक्षेपयुक्त खाँसीकी वजहसे श्वास बन्द होनेका उपक्रम हो जाता है, वक्षकी स्टेथास्कोपके सहारे परीक्षा करनेपर फेफड़ेसे आयी हुई कीं-कीं आवाज सुन पड़ती है। बच्चे और बालकोंको भीषण श्वास-कष्टकी वजहसे प्रायः आक्षेप-ग्रस्त हो जाना पड़ता है; ललाटमें ठण्डा पसीना होता है; खाँसीके अन्तमें तेज खींचन-युक्त कौएकी बोलीकी तरह आवाजवाली खाँसी सुन पड़ती है। "**मिलरका दमा**" (Asthma millari) रोगका लक्षण है।

सूखी, अत्यन्त और खोखलीकी तरह खाँसी; इसके साथ ही छींक, आँखसे पानी झरना और बोखार। **रोमान्ति अर्थात छोटी माता या खसड़ा** होनेकी सूचना देता है।

आक्षेपयुक्त बार-बार खाँसी, खाँसनेके समय दम बन्द हो जानेका उपक्रम, चेहरा लाल हो उठता है और वमन होता है। नियमित समयके अन्तरसे खाँसीका उच्छ्वास होता है। खाँसीके उच्छ्वासके समय, श्वास-ग्रहणके लिये बच्चेको बहुत चेष्टा और कष्ट करना पड़ता है और सूखी तथा शून्यगर्भ आवाजके साथ साँस लेता है। "**हूपिङ्ग खांसी का लक्षण**।"

बच्चेको ऊपर-के-ऊपर खुसखुसी खाँसी—खूब सवेरेसे आरम्भ हो जाती है। स्तन-पीनेके पहले खाँसी आया करती है; स्तन पीने बाद घट जाती है। इस तरहकी खाँसीके साथ कभी-कभी निद्रितावस्थामें बच्चा चौंक उठता है और हाथ-पैर पटका करता है; दाँत-पर-दाँत घसता, नाक रगड़ा करता है; लेप-चढ़ी जीभ और बार-बार भूख; **यह अवस्था क्रिमि बतानेवाली है।**

सूखी आक्षेपयुक्त खाँसी कितने ही स्थानोंमें—**दाँत निकलनेके समय** हुआ करती है।

चिकित्सा।

कैलि-म्यूर।—बहुत ही ऊँची आवाजके साथ खाँसी, गंभीर आवाज, मानो पेटके भीतरसे खाँसी आ रही है, इसके साथ ही सफेद या सफेद आभा लिये धुमैले रङ्गकी लेप-चढ़ी जीभ। खाँसीके साथ गाढ़ा दूधकी तरह सफेद लसदार बलगम निकलना। हूपिङ्ग खाँसीकी तरह तेज और बार बार खाँसी आना। काली खाँसीकी तरह स्वर-भङ्गके साथ कठिन खांसी; खाँसीकी तेजीके कारण मानो दोनों आँखें बाहर निकल पड़ती हैं; इसके साथ ही सफेद या सफेद आभा लिये धुमैली लेप-चढ़ी जीभ। जीभकी एक खास आकृति कैलि-म्यूरके प्रयोगका निर्देशक लक्षण है।

फेरम-फास।—सब तरहकी खाँसीके आरम्भमें ही इसका प्रयोग करना चाहिये। खाँसीके साथ बलगम निकलनेमें कमी अर्थात बलगम न निकलना; रूखी खुसखुसी खाँसी, कण्ठ और वक्षोस्थिमें खाँसनेके समय दर्द होना; साँस लेनेके समय फेफड़ेमें दर्द मालूम होना। श्वासनली (Bronchii) के प्रदाहकी वजहसे खाँसी, बिना बलगमके ही सूखी खाँसी अथवा सर्दी लगकर या किसी दूसरे ही कारणसे अगर खाँसी हो जाये, तो फेरम-फाससे बहुत फायदा होता है।

मैग्नेशिया-फास।—आक्षेपयुक्त और बहुत वेगसे खाँसी, बहुत कम बलगम निकलता है। इस दवाके साथ पर्यायक्रमसे कैलि-म्यूर प्रयोग करनेपर तुरन्त लाभ होता है। खाँसीका वेग और परिश्रमकी वजहसे फेफड़ेमें अकड़न और दर्द। गरम पानी या दूध इत्यादि पीनेपर कुछ देरके लिये खाँसी घट जाती है। यह नमक हूपिङ्ग खाँसीकी एक उत्कृष्ट दवा है। कैलि-म्यूर लवणकी खाँसीकी प्रकृतिके साथ मैग्नेशिया-फासकी खाँसीका बहुत कुछ सादृश्य है, पर कैलि-म्यूर लवणकी एक खास तरहकी जीभ देखकर इन दोनों दवाओंका प्रभेद निर्णय करना चाहिये।

कैलि-सल्फ।—कड़ी, आवाज बिगाड़ देनेवाली खाँसी, अधिक खाँसी आनेकी वजहसे कण्ठ सुन्न हो जाता है, बलगम लसदार और डोरीकी तरह लम्बा हो जाता है; पर खाँसीके साथ बलगम कण्ठमें आकर फिर नीचे उतर जाता

है ; रोगी बाध्य होकर उसे निगल जाता है। बार-बार खाँसी, ढीला, पीली आभा लिये या पानीकी तरह अथवा पीवकी तरह बलगम निकलना। गरम कमरेमें और सन्ध्याके समय बीमारीका बढ़ना ; ठण्डी खुली हवामें आराम मालूम होना।

कैलि-फास।—गलेमें दर्द, कण्ठनलीके प्रदाहकी वजहसे खाँसी, वक्षमें दर्द, गाढ़ा, पीले रङ्गका, नमकीन स्वादका और बदबूदार श्लेष्मा ; पुराना कास-रोग ; पहले ध्यान न देनेकी वजहसे रोगीकी अवस्था क्षीण ; चेहरा भूरा या हरे रङ्गका ; बोलनेकी शक्ति क्षीण और पतनावस्था आ जाती है। ऐसे स्थानपर कैलि-फास मन्त्रकी तरह काम करता है। इस लवणके द्वारा रोगीके शरीरमें "आक्सिजन" की क्रिया बहुत जल्द स्थापित हो जाती है ; श्वास-प्रश्वासके दूषित वाष्पका संशोधन हो जाता हैं। रक्तकी रासायनिक-क्रिया सुशृङ्खल होकर सब तरहसे रोगियोंका कल्याण करता है।

कैल्केरिया-फ्लुयोरिका।—उप-जिह्वा बढ़कर गलेमें बराबर सुरसुरी मालूम हुआ करती है और खाँसी आया करती है। नासारंध्रके पिछले छेदसे गलेमें श्लेष्मा टपकता है, खाँसीके साथ पीले रङ्गका, कड़ा और छोटा-छोटा बलगमका टुकड़ा निकलता है ; बीच-बीचमें उसमें बदबू पायी जाती है।

कैल्केरिया-फास।—अण्डेके सफेद अंशकी तरह अण्डलालमय श्लेष्मा निकलनेके साथ खाँसी। यक्ष्मा रोगकी सब तरहकी खाँसीमें भी दूसरी-दूसरी दवाके साथ उसका पर्याय-क्रमसे प्रयोग करनेपर यथेष्ट फायदा दिखाई देता है।

कैल्केरिया-सल्फ।—देखनेमें जखमके रसकी तरह पतला बलगम निकलनेके साथ खाँसी।

नेट्रम-म्यूर।—नाक, आँख और मुँहसे बहुत अधिक जल-स्रावके साथ खाँसी। फेन-भरा, पानीकी तरह, नमकीन स्वादका बलगम निकलनेके साथ खाँसी। इन सब लक्षणोंके साथ पुरानी खाँसी; इसके साथ ही अन्यान्य स्थानोंकी श्लैष्मिक-झिल्लीकी शुष्कावस्था, कब्जियत, पुष्ट भोजनका प्रबन्ध रहनेपर भी दुबलापन आते जाना, खासकर गर्दनका पतली पड़ते जाना; जाड़ेके दिनोंमें और दिनके तीसरे पहर रोगका बढ़ना; समुद्रके किनारेके स्थानका जलवायु सहन नहीं होता।

नेट्रम-सल्फ।—खाँसनेके समय वक्षमें खालीपन मालूम होना, मानो अब जरा भी शक्ति नहीं रह गई है। पीव-मिला श्लेष्मा निकलना, गाढ़ा, डोरीकी तरह लम्बा, पीली आभा लिये हरा बलगम निकलना; वक्षमें दर्द और कमजोरीकी अधिकताकी वजहसे रोगी आराम पानेके लिये वक्षको दबा रखता है।

साइलिसिया।—यक्ष्मा रोगीकी खाँसीके साथ पीली आभा लिये हरा, मीठा स्वाद या चर्बीकी तरह बेस्वाद बलगम निकलना। बरफका पानी या ठण्डी चीजें पीनेकी वजहसे खाँसी; यक्ष्माके रोगियोंकी सवेरेके वक्त आनेवाली खाँसी; यक्ष्माके रोगीके सोनेपर या सवेरे सोकर उठनेपर खाँसी आया करती है। बदबूदार बलगम निकलता है और वह पानीमें डूब जाता है।

रोगी-विवरण।

(१)

डाक्टर चैपमैनने नीचे लिखे हुए रोगीके विषयमें लिखा है:—

डेढ़ बरसकी उमरका बालक; इस समय भी ब्रह्मरंध्रकी अस्थि न जुड़ी थी; चल नहीं सकता था; बार-बार कष्टकर खाँसी आती थी; बलगम नहीं निकलता था। दूसरी-दूसरी चिकित्साओंसे हताश होकर, रोगीके पिताने अन्तमें बायो-केमिक चिकित्साकी शरण ली। परीक्षाकर देखा गया कि फास्फेट आफ लाइम लवणकी कमीके कारण बालककी ऐसी अवस्था हो गयी है, अतएव बायोकेमिक कैल्केरिया-फास लवणका प्रयोग किया गया। ३ सप्ताहतक इस दवाका सेवन करनेपर उसकी खाँसी एकदम आरोग्य हो गयी। उसके स्वास्थ्यकी उन्नति हो गयी और वह चल सकने योग्य हो गया।

(२)

डाक्टर फिशरने निम्नलिखित रोगीके विषयमें लिखा है:—

एक सम्भ्रान्त-महिलाको खुसखुसी खाँसीके साथ एक और भी लज्जाकर तथा कष्ट देनेवाला उपसर्ग पैदा हो गया था। उसे जितनी बार खाँसी आती थी, उतनी ही बार इच्छा न रहनेपर भी आप-से-आप पेशाब हो जाता था, इससे वह स्त्री घबड़ा उठी थी। बहुत तरहकी चिकित्साएँ कीं, पर जब यह उपसर्ग किसी तरह न घटा, तो अन्तमें उसने बायो-केमिक चिकित्साका आश्रय लिया। डाक्टर फिशरने उनपर "फेरम-फास" का प्रयोग किया और इसी दवासे वह स्त्री बहुत जल्द आरोग्य हो गयी। कई वर्ष बाद उसे फिर यही रोग हुआ। इस बार भी "फेरम-फास" ने ही सदाके लिये छुड़ा दिया।

क्रूप।

(Croup)

"क्रूप" और डिफ्थीरिया—ये दोनों ही अलग-अलग बीमारियाँ हैं। क्रूपकी बीमारी किसी खास जीवाणुके कारण उत्पन्न हुई बीमारी नहीं है और डिफ्थीरिया एक खास प्रकारके जीवाणुसे उत्पन्न बीमारी है। क्रूप रोगको साधा-रणतः "घुण्डी या काली खाँसी" कहते हैं।

लक्षणोंकी विशेषताके अनुसार क्रूपके कितने ही नाम हो गये हैं। जैसे—(क) Catarrhal croup या सर्दीको वजहसे पैदा हुआ क्रूप। (ख) False croup या अलीक क्रूप। (ग) Spasmodic croup या आक्षेपयुक्त क्रूप। (घ) True croup या असली क्रूप। (ङ) Membranous croup या झिल्लीयुक्त क्रूप। सारांश यह कि क्रूप-रोग **दो प्रधान श्रेणियोंमें** विभक्त हैं। जैसे—(१) अलीक क्रूप और (२) प्रकृत क्रूप।

१। False croup **अर्थात अलीक क्रूप।** इसका ही नामान्तर Spasmodic croup अर्थात आक्षेपयुक्त क्रूप; Spasmodic laryngitis या आक्षेपयुक्त कण्ठनली-प्रदाह; Catarrhal croup या सर्दीको वजहसे क्रूप है।

इस रोगमें कण्ठनलीका प्रदाह पैदा हो जाता है और स्वरतन्त्री (vocal cord) आक्षेपग्रस्त हो जाता है। कण्ठ-नलीकी श्लैष्मिक झिल्लीमें रक्तकी अधिकता हो जाती है; परन्तु किसी स्थानमें रोगसे उत्पन्न झिल्ली नहीं उत्पन्न हो जाती है; इसीलिये इसको Non-membranous croup अर्थात "झिल्लीविहीन क्रूप" कहा जाता है।

"अलीक क्रूप"—इसका आक्रमण **एकाएक** होता है। बालक-बालिकाएँ अच्छे स्वस्थ शरीरसे रातके समय सोती हैं; परन्तु दो-तीन घण्टे बाद ही क्रूपका आक्रमण होकर वह डरकर जाग पड़ती हैं और उठ बैठती हैं। रोगीको भयानक

श्वास-कष्ट हुआ करता है, साँस खींचनेमें वंशीकी तरह ऊँची आवाज हुआ करती है। कभी-कभी स्वर-भङ्गकी आवाजके साथ बार-बार सूखी खाँसी आती है, पर ज्वर एकदम नहीं रहता।

आकस्मिक आक्रमण, असली क्रूपकी तरह, धातुके बर्त्तनसे आयी हुई आवाज (metallic cough), खाँसीकी कमी और ज्वरका न रहना, **ये तीन अवस्थाएँ झूठे क्रूपका विशेष परिचय देती हैं** और true croup अर्थात झिल्ली मिले असली क्रूपसे इसका **पार्थक्य निर्दशक संकेत है।** आक्रमणकी प्रखरताके अनुसार, श्वास-कष्ट बहुत देरतक या थोड़ी देरतक स्थायी रह सकता है। इसके बाद जब श्वास-कष्ट घट जाता है, तो रोगी फिर सो जाता है और दूसरे दिन सवेरे सहज भावसे ही जाग उठता है, एक रातमें इसी तरहका आक्रमण दो या उससे भी अधिक बार हो सकता है। हमेशा ऊपर-के-ऊपर कई रातमें इस तरहका रोगाक्रमण हुआ करता है। यह बड़ी ही कष्टकर बीमारी है, पर **मारात्मक** नहीं है।

छोटी उमरकी बालक-बालिकाओंको यह रोगाक्रमण प्रवणता दिखाई देती है ; यह जन्मार्जित रोग है। कण्ठनलीका प्रदाह उत्पन्न करनेवाले कारण भी इस बीमारीके उत्तेजक कारण हैं।

२। True या Membranous; **झिल्लीयुक्त प्रकृति क्रूप।** इसके कई दूसरे-दूसरे नाम भी हैं। जैसे—Acute croupous laryngitis (ऐक्यट क्रूपस लेरिञ्जाइटिस), Pseudo-membranous laryngitis (स्यूडो मेम्बरेनस लेरिञ्जाइटिस); इसकी झिल्ली किसी आमयिक जीवाणुसे उत्पन्न नहीं है।

False croup अर्थात अलीक क्रूप रोगसे इसका प्रभेद यह है, कि यह रोग **धीरे धीरे आता है, ज्वरके उत्तापकी अधिकता रहती है और कंठमें झिल्ली संचारित होती है।**

Diphtheria (डिफ्थीरिया) रोगसे इसमें प्रभेद यह है, कि यह रोग डिफ्थीरियाकी तरह **संक्रामक नहीं है** और पूर्ववर्त्ती किसी सार्वाङ्गीन लक्षणका विकास होकर यह पैदा नहीं होता, इसमें गाँठें नहीं फैलतीं।

आक्रमण।—पहले साधारण सर्दीका लक्षण प्रकट होता है, जाड़ा मालूम होता है, छींक, गलेमें दर्द, शरीरके तापका बढ़ना, प्यास, नाड़ी कुछ तेज रहती है, स्वर-भङ्ग, थोड़ा बहुत श्वास-कष्ट; इन लक्षणोंसे आक्रमणकी सूचना प्राप्त होती है। क्रमसे सूखी आक्षेपयुक्त खाँसी और श्वासके साथ सीटीकी तरह आवाज सुन पड़ती है। कण्ठके भीतर देखनेपर, धुमैली सफेद रङ्गकी झिल्लीके द्वारा स्वरयन्त्र larynx

ढका दिखाई देता है, झिल्लीका बहुत कुछ अंश कण्ठनली (trachea) में फैल जाता दिखाई देता है; पर ऊपरकी ओर तालुमें फैलता नहीं दिखाई देता। गर्दनके पिछले भागमें या कण्ठके ऊपर आकर्णन करनेपर सूक्ष्म और कर्कश, घड़घड़ आवाज सुन पड़ती हैं।

रोगकी वृद्धिके साथ श्वास-कृच्छ्रता बढ़ती रहती है। अन्तःश्वासको (भीतरी श्वास लेनेके समय inspiration), मन्थर और अटक अटक कर आरीसे काठ चीरनेकी तरह आवाज निकलती है; साँस छोड़ने (expiration) की गति तेज रहती है। नाड़ीकी गति कम हो तेज होती जाती है। चेहरेका भाव ऐसा रहता है, मानो कुछ तकलीफ हो रही है। माथा पीछेकी ओर ढुलक पड़ता है; खाँसनेकी आवाज क्रमशः अस्पष्ट होती जाती है और चेहरा पीला होता जाता है। शरीरका उत्ताप अधिक रहनेपर भी हाथ-पैर ठण्डे रहते हैं; नाड़ी बहुत चीण और तेज चलनेवाली; श्वास-कष्टकी वजहसे—"आक्सिजन" की कमीसे, श्वास-रोधकी वजहसे रोगीकी मृत्यु होती है।

अगर बीमारी आराम होनेकी ओर बढ़नेवाली होती है, तो आक्रमणकी तेजीके अनुसार थोड़े दिनोंमें ही श्वास-कष्ट दब जाता है, स्वर-भङ्ग हट जाता है, सूखी और कठिन खाँसी ढीली और पतली होकर श्लेष्माके साथ झिल्लीके खण्ड सब निकलते रहते हैं; रोगी इसी तरह धीरे-धीरे आराम हो जाता है।

इस रोगका स्थायित्व प्रायः एक सप्ताहतक रहता हैं, पर कण्ठ-स्वरकी सम्पूर्ण स्वाभाविक अवस्थाके लौट आनेमें कई सप्ताहका समय लग जाता है।

तर और ठण्डी हवा, बहुत देरतक पैर पानीमें रखना; जलाशय या समुद्रके ऊपरसे प्रवाहित पानीसे तर हवा इत्यादि रोगके उत्तेजक कारण हो सकते हैं। दाँत निकलनेके समयसे लेकर किशोरावस्थातक इस रोगका आक्रमण होता देखा जाता है। अवस्था-प्राप्त मनुष्योंको इतना होता नहीं दिखाई देता है।

भावी फल अशुभ।—बालक-बालिकाओंके लिये यह बहुत मारात्मक बीमारी है।

चिकित्सा।

कैलि-म्यूर।—झिल्लीके साथ क्रूप रोगकी यह एक सबसे प्रधान दवा है। झिल्ली-रहित (false croup) रोगमें भी इसका प्रयोग किया जाता है। "फेरम-फास" लवणके साथ इसका व्यवहार हुआ करता है। ९०—९१ पृष्ठमें विशेष लक्षण देखिये।

फेरम-फास।—कष्ट-साध्य, तेज गतिका और छोटा श्वास-प्रश्वास; ज्वरका उत्ताप रहनेपर यह ज्यादा उपयोगी है। "कैलि-मूरर" लवणके साथ पर्यायक्रमसे प्रयोग करना चाहिये।

कैल्केरिया-फ्लुयोरिका।—True croup या असली क्रूप रोगकी प्रधान दवा है। "फेरम-फास" और "केलि-म्यूर" लवणके द्वारा पूरी तरह फायदा न होनेपर, इससे आरोग्य हो जाता है; ग्रीवा-ग्रन्थियोंका बढ़ना और पत्थरकी तरह कड़ापन।

कैल्केरिया-फास।—२८ पृष्ठमें वर्णन की हुई रोगीकी आकृतिकी ओर लक्ष्य रखना बहुत आवश्यक है। बच्चोंको शय्यासे उठानेपर ही श्वास बन्द हो जानेका उपक्रम हो जाता है। स्तनसे दूध पीनेके बाद, रोनेके बाद, शय्यासे उठानेपर, श्वास रुकने लगता है; माथा पीछेकी ओर झूल पड़ता है; चेहरा हरा हो जाता है; हाथ-पैर पटका करता है, इसके बाद ही सारा अङ्ग शिथिल हो पड़ता है।

कैलि-फास।—रोगके आरम्भमें चिकित्सापर ध्यान न देनेकी वजहसे रोगीकी पतनावस्था अगर आ गयी हो तो यह ज्यादा फायदा करता है। बेहोशी जैसी अवस्था; स्नायविक अवसाद; भूरा चेहरा। इसके साथ पर्यायक्रमसे "केलि-म्यूर" व्यवहार करनेपर ज्यादा फायदा करता है।

मैग्नेशिया-फास।—श्वासनलीका आक्षेपयुक्त अवरोध, एकाएक बड़े जोरसे चिल्ला उठना, गहरी खाँसीकी वजहसे श्वास रुकनेका लक्षण।

कैल्केरिया-सल्फ।—कठिन उपझिल्ली कोमल हो जानेके बाद और श्लेष्मा और झिल्ली निकलना आराम करनेके

बाद, जब निकला हुआ श्लेष्मा बहुत ही लसदार रहता है और इसी वजहसे कण्ठके भीतर बहुत तकलीफ हुआ करती है, उस समय इस लवणके प्रयोगसे क्रूपकी कठिन खाँसी सहजमें ही पतले बलगमवाली खाँसीमें परिवर्त्तित हो जाती है और रसका निकलना आरम्भ हो जाता है।

मन्तव्य।

क्रूप-रोगकी चिकित्सामें ऊपर लिखे लवण ३० वीं शक्ति या इससे ऊँची शक्तिका प्रयोग करनेपर बहुत जल्द और बहुत अधिक फायदा दिखाई देता हैं।

आनुसङ्गिक व्यवस्था।

एक रूमाल पानीमें भिंगोकर, उसकी तही कर रोगीके कण्ठपर रखना चाहिये और उसे तर रखनेके लिये उसपर लैनेलका एक टुकड़ा लपेट देना चाहिये। घण्टे-घण्टे बाद रूमालको पानीसे तर कर लेना चाहिये, जिसमें सूख न जाये।

रोगीका कमरा गर्म रहना चाहिये। २०४ पृष्ठमें लिखे अनुसार रोगीके कमरेको गरम भाफसे गर्म रखना चाहिये।

रोगी-विवरण।

(१)

डाक्टर जे० बी० चैपमैन, एम० डी० कहते हैं, कि उन्होंने बहुतसे क्रूपके रोगियोंका इलाज कर देखा है, कि समय रहते

फेरम-फास और **कैलि-म्यूर** का अगर प्रयोग किया जाता है, तो आरोग्यके लिये और किसी चीजकी जरूरत नहीं पड़ती। फेरम-फास ज्वरके उपसर्गोंको दमन करता है और "कैलि-म्यूर" झिल्ली तथा दूसरे-दूसरे उपसर्गोंको नष्ट कर देता है। कैलि-म्यूर मिले पानीके कुल्लेकी वे बहुत प्रशंसा करते हैं।

(२)

डाक्टर सुसलरने एक सात वर्षके बालकके क्रूप रोगके सम्बन्धमें लिखा है। कई वर्ष पहले इसी बालकको एक बार नकली क्रूपकी बीमारी हुई थी; तबसे तेज उत्तरी हवा चलनेपर ही उसे क्रूप (नकली) हो जाता था। डाक्टर सुसलर बुलाये गये। उन्होंने देखा कि बालकको नकली क्रूप हो गया है; ज्वर और इसके साथ ही कुत्तेकी आवाजकी तरह खाँसी आती है; इसके पहले रोगीको अन्यान्य डाक्टरोंके दवा देनेपर कोई फायदा न हुआ। इस तरह कई दिन बीतनेके बाद सुसलरको बुलाया गया। बहुत अधिक कड़ी खाँसीके कारण रोगी बहुत ही बेचैन हो गया था और उसके पिता-माता भी बहुत शङ्कित हो पड़े थे।

सुसलरने दो घण्टेका अन्तर देकर पूर्णमात्रामें **कैलि-म्यूर** का प्रयोग किया। कई मात्रा सेवन करनेके बाद खाँसी बहुत ढीली हो गई और खाँसीका वह भयानक शब्द एकदम गायब हो गया। दूसरे दिन रोगी बहुत कुछ स्वस्थ हो गया

और रातभर गहरी नींदमें सोता रहा। तीसरे दिन सवेरे उसमें रोगका चिन्हतक न था।

(३)

डाक्टर ग्राहम्सने एक रोगीका विवरण दिया है। एक सात वर्षकी उमरके बालककी चिकित्साके लिये रातके १० बजनेके समय बुलाया गया। इसके पहले रोगीको खसड़ा हुआ था। अब भयानक catarrhal croup ने आक्रमण किया था (सर्दीके साथ क्रूप)।

आधा ग्लास गर्म पानीमें **फेरम-फास** और **कैलि-फास** लवण प्रत्येक एक चम्मच मात्रामें मिलाकर १५ मिनटके अन्तरसे एक चम्मच मात्रामें वही पानी देनेका प्रबन्ध किया गया। रोगकी तेजी दब गयी; यह दवा एक घण्टाके अन्तरसे सेवन करनेको दी गयी; इससे बालक बहुत जल्द आरोग्य हो गया।

मूत्राशय-प्रदाह।

(Cystisis)

यह नये और पुराने—दोनों तरहके रूपमें दिखाई देता है। बायोकेमिक मतसे,—एक या एकसे अधिक लवणकी कमीकी वजहसे शरीरपर रोगका आक्रमण हो जाता है; इस रोगमें आमयिक जीव-सञ्चार होता भी दिखाई देता है।

चोट, कैथिटर या अन्य नश्तर लगवानेके बादके उपसर्ग, सर्दी लगनेकी वजहसे प्रदाह, मूत्राशयके पासकी जगहपर उत्पन्न फोड़ा या अर्बुदके कारण दबाव, मूत्राशयमें किसी तरहका उद्भेद पैदा हो जाना या बाहरकी किसी चीजका प्रवेश कर जाना, किसी कारणसे मूत्राशयका अपनी जगहसे हट जाना, पेशाबका वेग रोकना, पेशाबका कुछ अंश मूत्राशयमें रह जाना, इन सब कारणोंसे प्रदाह हो जाया करता है। प्रमेह रोगमें,—मूत्रनलीका प्रदाह फैलकर मूत्राशयमें जा सकता है।

खसड़ा, चेचक, डिफ्थीरिया, टाइफायड प्रभृति रोगके बादवाले उपसर्गके रूपमें भी मूत्राशय-प्रदाह हो सकता है।

नया मूत्राशय-प्रदाह रोगमें—थोड़ा बहुत ज्वर और दर्दके साथ रोग पैदा हो जाता है; पर कितने ही स्थानोंपर ज्वर न रहता भी दिखाई देता है। रोगकी सूचना मालूम होते ही मूत्राशय-प्रदेशमें बराबर दर्द हुआ करता है। पेशाब होनेके समय दर्दकी अधिकता और पेशाब होने बाद कुछ घट जाया करता है। बार-बार पेशाब करनेकी इच्छा, पेशाब करनेके समय बहुत वेग, कूथन और दर्द; थोड़ा-सा पेशाब होना और अन्तमें प्रायः कई बूंद खून निकलता है।

प्रदाह बढ़कर पीव पैदा होना या सड़नेपर, जब मूत्रपिंड (kidney) तक रोगका आक्रमण हो जाता है अथवा मूत्राशयके भीतरवाले तन्तुओंमें प्रदाह फैल जाता है, उस समय तेज बोखार और अरिष्टके लक्षण सब विकसित हो पड़ते हैं।

सर-दर्द, सरमें चक्कर आना, मिचली, नींद न आना; प्रलाप और बेहोशीके साथ—रोगीकी अवस्था जटिल हो पड़ती है।

पेशाबका रङ्ग हमेशा साफ ही दिखाई देता है; पर थिरानेपर उसके तलछटकी जब परीक्षा की जाती है, तो पीब epithelium अर्थात—उपत्वक और जीवाणु पाये जाते हैं; डिफ्थीरियासे उत्पन्न या सड़नेवाले प्रदाहमें इस तलछटमें क्षय हुए तन्तु सब रक्त-कणिका और मूत्राशयसे रक्त निकलनेपर, इस तलीमें रक्तके छोटे-छोटे थक्के भी दिखाई देते हैं। अनुवीक्षण-यन्त्रके सहारे ये सब पदार्थ दिखाई देते हैं। बीच-बीचमें गहरे रङ्गका पेशाब भी हो सकता है।

रासायनिक परीक्षासे मूत्रकी प्रति-क्रिया क्षार-गुण-विशिष्ट या अम्ल-गुण-विशिष्ट हो जाती है अथवा निरपेक्ष (neutral) स्वभाव दिखाई देता है।

पुराना (Chronic) मूत्राशय-प्रदाह रोगमें— लक्षण हलके ढङ्गके रहते हैं, पर पेशाबकी संख्या बहुत अधिक बढ़ जाती है; अधिकांश स्थानोंमें कुछ-न-कुछ दर्द भी रहता है। पेशाब गदले रङ्गका और उसमें पीबके कोषाणु पाये जाते हैं।

चिकित्सा।

फेरम-फास।—दर्द, उत्ताप और ज्वर, दिनमें हमेशा ही पेशाब करनेकी इच्छा बनी रहती है और बार-बार पेशाबका वेग पैदा हो जाया करता है।

कैलि-म्यूर ।—प्रदाहकी दूसरी अवस्थामें मूत्राशयमें सूजन मालूम होनेपर इस लवणका प्रयोग करना चाहिये। गहरे रङ्गका पेशाब, पेशाब गाढ़ा, सफेद बलगम निकलना ; यह पुरानी बीमारीकी प्रधान दवा है।

मैग्नेशिया-फास ।—लगातार पेशाबका वेग, मूत्राशयकी अकड़नकी वजहसे बड़ी कूथनके साथ बूंद-बूंद पेशाब निकलना। उत्ताप प्रयोग करनेपर जिन रोगियोंकी तकलीफ घटती है, उन्हें इस लवणसे ज्यादा फायदा होता है। मूत्रावरोध—पेशाबका रुकना।

कैलि-फास ।—प्रति-क्रियाकी कमी और पतनावस्था। मूत्राशय या मूत्र-पिण्डसे रक्त-स्राव। कमजोरीकी अधिकताका शोधन करनेकी यह सर्वश्रेष्ठ दवा है।

नेट्रम-म्यूर ।—पेशाब होनेपर काटनेकी तरह यन्त्रणा। प्रमेह रोगके कारण मूत्राशयमें प्रदाह फैल जानेकी वजहसे यह विशेष लक्षण अगर दिखाई दे तो नेट्रम-म्यूर श्रेष्ठ दवा है। १००—१०२ पृष्ठ देखिये।

कैल्केरिया-फास ।—आक्षेपग्रस्त मूत्रावरोध, जहाँ "मैग्नेशिया-फास" लवणसे फायदा नहीं होता, वहाँ "कैल्केरिया-फास" के प्रयोगसे सिद्धि-प्राप्त होती देखी गयी है।

कैलि-सल्फ ।—मूत्राशय-प्रदाह रोगमें पीले रङ्गका चिकना पीवका स्राव होते रहनेपर इस लवणका प्रयोग करना चाहिये।

कैल्केरिया-सल्फ।—मूत्राशय-प्रदाह रोगमें पीवके स्रावकी अधिकता रोकनेकी यह श्रेष्ठ दवा है।

मन्तव्य।

कितनी ही बार पासके शरीर-यन्त्रकी किसी बीमारीकी वजहसे प्रतिफलित दर्द और बहुत तरहकी तकलीफें मूत्राशयमें मालूम हुआ करती हैं। ऐसे स्थानोंपर परीक्षाकर मूल-रोगका स्थान और प्रकृतिका निर्णय करने बाद दवाका प्रयोग करना चाहिये। इस उपदेशकी सार्थकता नीचे लिखे रोगी-विवरणसे स्पष्ट मालूम होती है।

रोगीका विवरण।

डाक्टर जे० एम० जोन्सने इस रोगिनीका इलाजकर उसे आरोग्य किया था।

"रोगिनीकी उमर ६२ वर्ष, गोरा रङ्ग। कई वर्षों तक पुरानी मूत्राशय-प्रदाहकी बीमारी निर्णयकर एक विख्यात चिकित्सक रोगिनीका इलाज कर रहे थे। यह स्त्री न तो चल-फिर सकती थी और न कोई काम कर सकती थी। डाक्टर जोन्सने बहुत सावधानतासे रोगिनीकी परीक्षाकर देखा कि यह केवल प्रतिफलित-यन्त्रणा है, मूत्राशय या मूत्र-नलीकी कोई बीमारी नहीं मालूम हुई, पर रोगिनीका जरायु-मुख बहुत ही कड़ा हो रहा था और वहींसे रक्त-स्राव होता मालूम हुआ। उन्होंने इस रोगको जरायु-मुखका 'कार्सिनोमा'

(कर्कटिका) निर्णय किया। इस स्त्रीको आठ महीनोंतक नित्य दो घण्टे के अन्तरसे प्रति मात्रा तीन टैबलेट **कैल्केरिया-फ्ल्युओरिका** सेवन कराया गया। इन आठ महीनोंतक औषध सेवनकर वह स्त्री घरके समूचे काम करती थी और उसमें घरसे लगे हुए बागकी मिट्टीतक खोदनेकी सामर्थ्य आ गया था। इस स्त्रीने बहुत दिनोंतक "कैल्केरिया-फ्लुयोरिका" का सेवन किया।

डिलिरियम (विकार)।

(Delirium)

साधारणत: इसको विकार ही कहा जाता है। नींद न आना, अण्ट-सण्ट असंलग्न बातें करना, मानसिक और शारीरिक उत्तेजना—इस रोगके लक्षण हैं। यह कोई स्वाधीन रोग नहीं है, बल्कि दूसरी-दूसरी बीमारियोंकी तेजीसे पैदा हुए उपसर्गके रूपमें प्रकट होता है।

मस्तिष्कमें रक्तकी अधिकता, प्रदाह या चोट आ जाना, और कोई गहरा या कठोर मन:-कष्ट इस विकृत अवस्थाके साक्षात कारण हैं।

चिकित्सा।

फेरम-फास।—Meningitis अर्थात—मस्तिष्कावरण-प्रदाह, Brain fever अर्थात—मस्तिष्क-घटित ज्वर,

प्रबल जलीय उत्ताप, प्रदाह इत्यादि कारणोंसे विकार होनेपर इसका प्रयोग करना चाहिये।

नेट्रम-म्यूर।—चित्तकी सुस्ती; विषाद; प्रत्येक विषयकी केवल बुराई ही सोचता है; चिन्ता; दुर्भाग्यकी वजहसे रुलाई आना; सहजमें ही थक जाता है। ८७ पृष्ठ देखिये।

नेट्रम-फास।—माथेमें चोट लगनेके बादके उपसर्ग रूपमें मानसिक विलक्षणता और विकार। माथेके पिछले भागमें तेज दर्द, मस्तकमें रक्तकी अधिकता।

मैग्नेशिया-फास।—मस्तिष्क या मस्तिष्कावरणकी कोई ठीक-ठीक बीमारीके कारण विकार और अकड़न।

मस्तिष्कका अवसाद।

मस्तिष्ककी कमजोरीके साथ मानसिक अवसाद, याद-दाश्तमें गड़बड़ी, स्मरण-शक्तिका घट जाना, किसी काममें मन न लगा सकना, पाठ या बातका अर्थ देरसे समझमें आता है या मतलब समझ ही नहीं पाता है।

बुढ़ापा, बहुत अधिक दुश्चिन्ता, रातमें जागरण, बहुत ज्यादा पढ़ना, बहुत अधिक जप, ध्यान इत्यादि कारणोंसे यह होता दिखाई देता है।

चिकित्सा ।

कैल्केरिया-फास ।—स्नायविक अवसाद: निरुत्साह ; शरीरका रङ्ग भूरा हो जाना और दुबलापन ; रातमें सोनेपर बहुत ज्यादा पसीना होना ; कमजोरीके कारण हाथ-पैर ठण्डे हो जाना और शिराका फूलना। रति-क्रियाकी चीणता ; नींद न आना ; बीच-बीचमें कितने ही अङ्गोंका सुन्न हो जाना ।

कैलि-फास ।—स्नायविक दौर्बल्यकी यह सबसे श्रेष्ठ दवा हैं। सब तरहकी स्नायविक सुस्तीकी चिकित्सामें इसका व्यवहार होता है और दूसरी-दूसरी उपयोगी दवाओंके साथ इसका प्रयोग किया जाता है। अगर नींद न आती हो तो इस लवणका प्रयोग किया जाता है।

नेट्रम-म्यूर ।—नींद न आनेके साथ नाना प्रकारकी दुश्चिन्ताएँ और भावी अमङ्गलकी आशङ्का। थोड़ी देरतक बात करनेसे ही सुस्त हो पड़ता है।

साइलिसिया ।—अधिक मानसिक परिश्रमके बाद थकावट और सुस्ती, चित्तकी चञ्चलता, विभ्रम, किसी काममें मन न लगा सकना, अपनी कमजोरीकी बाबत सोचता-सोचता रोगी चिन्तासे व्याकुल हो पड़ता है।

रोगीका विवरण ।

(१)

विख्यात चिकित्सक सी० आर० वोगेल (M. D.) ने लिखा है :—

रोगिनी स्कूलमें पढ़ती थी, उमर १२ वर्ष, थोड़ी देरतक पढ़ने बाद ही बहुत थक जाती थी, थोड़ा-सा परिश्रम करनेसे ही इतनी क्लान्त हो पड़ती कि कुछ देरतक उसे सर झुकाकर खड़े रहना पड़ता था या सो कर विश्राम करना पड़ता था। किसी विषयको साफ-साफ और ठीक-ठीक सोच नहीं सकती थी, किसी तरहकी चिन्ता उसके लिये दुःसाध्य हो रही थी। मन स्थिर न रहनेकी वजहसे कुछ पढ़नेके समय सभी विशृ-ङ्खल हो पड़ता था, चेष्टा करनेपर भी वह चित्त स्थिर न रख सकती थीं। दुर्बलताके साथ दुबलापन भी मौजूद रहता था।

"साइलिसिया" चार घण्टेके अन्तरसे सेवन करनेके लिये एक सप्ताहकी दवा दी गयी और स्कूल जाना बन्द कर स्थान-परिवर्त्तनके लिये दूसरी जगह जानेकी व्यवस्था हुई। इसके बाद और भी एक सप्ताहतक इस दवाका प्रयोग किया गया। इस तरह १५ दिनोंतक दवाका सेवन करने बाद उसकी माताने समाचारभेजा कि रोगिनीको सब तरहसे लाभ पहुँचा है और वह स्कूल जानेके लिये व्यग्र हो रही है।

(२)

डाक्टर चैपमैनने लिखा है :—

रोगी साहित्यिक था। बहुत अधिक मानसिक परिश्रमकी वजहसे श्रान्त; स्नायविक दुर्बलता और शरीरमें जीर्णता पैदा हो गयी; किसी विषयको बिलकुल ही सोच नहीं सकता था। रोगीको "कैलि-फास" प्रयोग करनेको दिया गया। दवा सेवन करनेके साथ-ही-साथ फायदा दिखाई दिया और रोगीके सभी रोग-लक्षण थोड़ी देरमें ही गायब हो गये।

———

दन्तोद्भेद।

(Dentition)

बच्चोंको दाँत निकलनेके समय नाना प्रकारकी बीमारियाँ हुआ करती हैं। खासकर बच्चोंमें पोषणकी कमी, जन्मार्जित उपदंश या प्रमेह-दोष, रिकेट्स इत्यादि कारणोंसे दाँत निकलनेमें अगर देर हो जाती है, तो बहुतसे उपसर्ग पैदा होकर रोगीकी अवस्था बिगाड़ देते हैं। इसके अलावा कितने ही बच्चोंको टेढ़े-मेढ़े दाँत निकलते हैं। ये सभी अवस्थायें, बच्चेके शरीरमें अजैव-लवणका प्रयोगकर आरोग्य कर दी जा सकती हैं, पर साथ ही स्तन-पिलानेवाली माताके स्वास्थ्यकी ओर भी लक्ष्य रखना चाहिये।

चिकित्सा ।

फेरम-फास ।—मसूढ़ा फूला और गरम ; दाँत निकलनेके समय ज्वर । माथा और ललाट हमेशा ही गरम, चेहरा लाल और कष्ट प्रकट करनेवाला ।

मैग्नेशिया-फास ।—दाँत निकलनेके समय अकड़न (convulsion) और आक्षेप (spasms) ; यह नमक गरम पानीमें गलाकर बार-बार प्रयोग किया जाता है। "कैल्केरिया-फास" लवणके साथ पर्यायक्रमसे प्रयोगकर शारीरिक दोषका संशोधन कर दिया जाता है ।

कैल्केरिया-फ्लुयोरिका ।—निकले हुए दाँतके ऊपरका चमकीला आवरण (enamel) बिगड़ा हुआ ; दाँतका शरीर और शिखर टेढ़ा-मेढ़ा और रुखड़ा, दाँत क्षय हो जाया करते हैं । २२—२३ पृष्ठ देखिये ।

नेट्रम-म्यूर ।—बच्चेकी जागने या सोनेकी अवस्थामें मुँहसे बहुत ज्यादा लार बहना ; दाँत निकलनेके साथ-ही-साथ कब्ज ; दुबला शीर्ण बच्चा, गर्दनकी पेशीकी कमजोरीकी वजहसे माथा सामनेकी ओर हिलाया करता है ।

साइलिसिया ।—दुर्दमनीय कब्ज ; माथेमें बहुत अधिक पसीना होना ; पोषणकी कमी और कण्ठमाला धातु ; माथा बड़ा और ब्रह्मरंध्रकी सन्धि असंयुक्त ; दांत निकलनेके समय फोड़ा निकलनेकी सम्भावना ।

कैल्केरिया-फास।—इस लवणके द्वारा दाँतके कठिन अस्थिमय अंशका आवश्यक पदार्थ तैयार होता है। अतएव जब इसकी कमी हो जाती है, तो दाँत निकलनेमें देर होती है या दाँत टेढ़ा-मेढ़ा निकलता है और दूसरे-दूसरे उपसर्ग भी इस लवणसे दूर होते हैं। दूसरे-दूसरे निर्देशित लवणके साथ पर्यायक्रमसे इसका व्यवहार हुआ करता है। ब्रह्मरंध्रकी सन्धि खुली, चलनेमें देर, पाचनमें गड़बड़ी इत्यादि बहुतसे उपसर्ग इस लवणसे संशोधित होते दिखाई देते हैं।

मन्तव्य।

जिन प्रसूताओंको इस तरहकी धातुवाली सन्तान होती है, उनको गर्भावस्थामें यदि इसका सेवन कराया जाता है, तो सन्तानका शारीरिक-दोष संशोधित हो जाता है और उस बच्चेको दाँत निकलनेके समयकी बीमारी या दाँतकी बीमारी या अस्थि-रोग भोगते नहीं देखा जाता।

चूनेके पानीमें "कैलसियम" है और उससे बच्चेके पोषण और पाचनमें सहायता होगी—**इस भ्रान्त धारणाके वश होकर** बहुतसे आदमी नित्य या थोड़े-थोड़े दिनके अन्तरसे चूनेका पानी दूधके साथ मिलाकर बच्चेको पिलाया करते हैं। **यह बहुत ही हानिकर प्रथा है।** चूनेके पानीमें जो कैलसियम रहता है, उसके परमाणु बायो-केमिक लवणकी तरह सूक्ष्म नहीं होते और बच्चेके शरीरमें

उनका समीकरण (assimilation) नहीं होता ; परन्तु उससे अनिष्ट बहुत अधिक हो जाता है।

बहुमूत्र।

(Diabetes)

बहुमूत्रकी बीमारी दो तरहकी दिखाई देती है। जैसे— (क) शर्कराशून्य और अण्डलालहीन बहुमूत्र और (ख) शर्करायुत बहुमूत्र या मधुमेह।

१। Diabetes insipidus **अर्थात शर्कराशून्य बहुमूत्र।** इसके पेशाबमें चीनी नहीं आती। इसमें बिना रङ्गका अथवा हलका रङ्ग लिये पेशाब बहुत अधिक परिमाणमें होता है। पेशाबमें अण्डलाल या मूत्रपिण्ड अथवा मूत्राशयसे निकले तन्तु प्रभृति पदार्थ नहीं दिखाई देते हैं। बार-बार और बहुत ज्यादा मात्रामें पेशाब होता है ; पर उसका आपेक्षिक गुरुत्व (specific gravity) बहुत कम रहता है। लड़कपन या जवानीके आरम्भमें ही यह बीमारी ज्यादा होती है। जवानोंको यह बीमारी बहुत कम होती है। किसी-किसीको स्नायु-विधानके केन्द्रस्थलमें चोट लगनेके बाद उपसर्गके रूपमें यह बीमारी पैदा होनेका इतिहास प्राप्त होता है।

२। Diabetes mellitus **अर्थात चीनी मिला पेशाब ; मधुमेह।** यह प्रौढ़ावस्थाकी बीमारी है। बालक और बूढ़ोंको यह बीमारी बहुत कम होती है; यहूदियोंको यह बीमारी बहुत ज्यादा होती है।

साधारणत: स्नायविक प्रकृतिके स्थूलकाय मनुष्योंको बहुत खानेका अभ्यास रहनेकी वजहसे रोग पैदा होनेके योग्य क्षेत्र तैयार हुआ करता है। स्थूलकाय मोटे-ताजे और ढीली पेशीवाले मनुष्योंको कब्जियत रहना, बहुत ज्यादा खाना, व्यायाम न करना, उनका शरीर अपने ही शरीरके विषको फैलाने (auto intoxication) में सहायता करता है और इसलिये उनके स्नायु सब विकृत हो जाते हैं। इसका परिणाम यह होता है, कि pancreas नामक क्लोम-ग्रन्थिमें रहनेवाला "gland of langerhans" नामक पाचन-यन्त्रका क्षय होकर शर्कराके स्वाङ्गीकरणकी क्रिया बन्द हो जाती है, अतएव मूत्रके साथ बचा हुआ वह अंश जो स्वाङ्गीकृत नहीं होता निकला करता है और रक्तके प्रवाहके साथ मिलकर रोगीके रक्तको भी शर्करासे भारी बना देता है।

दैहिक या मानसिक आघात, बहुत अधिक मानसिक परिश्रम, गुरुतर दायित्वपूर्ण कार्यका भार, दुश्चिन्ता और उद्वेग, कमरेमें बैठे-बैठे काम करना, भारी गरिष्ट चीजें खाना, ये सब मधुमेह रोगके मुख्य कारण हैं। किसी-किसीको मस्तिष्क या कशेरुका (spine) में चोट लगनेके कारण भी यह

बीमारी होती देखी जाती है। किसी-किसी प्रसूताको गर्भावस्थामें स्नायु-केन्द्रपर अवसादक प्रभाव पड़ जाता है। फलस्वरूप सामयिक-रूपसे मधुमेह—diabetes हो जाता है।

लक्षण।—इस बीमारीका एकाएक आक्रमण शायद ही कभी होता दिखाई देता है। यह हमेशा धीरे-धीरे ही पैदा होती है। बार-बार पेशाब लगना और तेज प्यास इस बीमारीके प्राथमिक लक्षण हैं।

राक्षसकी तरह भूख और बार-बार बहुत ज्यादा परिमाणमें खाना—इतनेपर भी शरीर दुबला ही होता जाता है। कभी-कभी ऐसा भी दिखाई देता है, कि शारीरिक वजन बिलकुल ही नहीं घटता।

कमरमें दर्द इस रोगका साधारण लक्षण है।

त्वचा सूखी और रुखड़ी; कभी-कभी किसी-किसीको पसीना होता है।

खुजली—यह सारे शरीरमें रहती है अथवा केवल लिङ्गके पासकी जगहको खुजलाना पड़ता है।

चर्म्म-रोग, एकजिमा और फोड़ा निकलते रहना।

रोगके आरम्भसे ही रति-शक्ति कमजोर पड़ जाती है।

पेशाब हलके रङ्गका, सादा, प्रति-क्रिया अम्ल-गुणयुक्त; आपेक्षिक गुरुत्व बढ़ा हुआ; १°०२५ से १°०४५ तक हो जाता है।

साधारणत: पेशाबमें चीनीका भाग सैकड़े १॥ या २ अंश रहता है, पर रोग प्रबल होनेपर सैंकड़े ५ से १० अंश-तक हो जाया करता है।

रोगकी बढ़ी हुई अवस्थामें अजीर्ण हो जानेपर भूख घट जाती है और अतिसार या कब्जियत पैदा हो जाती है।

कितने ही रोगियोंके पेशाबमें चीनी और अण्डलाल (albumin) एक साथ पाया जाता है। इसके अलावा ketone (कीटोन) श्रेणीका पदार्थ भी निकला करता है, ये सब अत्यन्त ही गरिष्ट लक्षण हैं।

उपसर्ग।—मधुमेहकी वजहसे शारीरिक क्षय हो जानेके कारण रोगीके दोनों पैरोंमें एकाएक बिजलीकी तरह एक प्रकारका दर्द पैदा हुआ करता है; घुटना और पैर पूरी तरह फैला नहीं सकता। loss of knee jerk अर्थात—रोगीको ऊँची तिपाईपर पैर लटकाकर बैठाकर उसके घुटनेपर अंगुलीसे चोट दी जाये तो उसका पैर उछल पड़ता है; आँखमें मोतियाबिन्द हो जाता है।

Acyanotic dyspnœa अर्थात वायु या आक्सिजनकी कमी न रहनेपर और साधारण भावसे श्वास-प्रश्वास लेनेपर भी रोगीको श्वास-कष्ट होता है।

रोगीकी साँस और मुँहमें पके फलकी गन्ध आती है, सर-दर्द, सरमें चक्कर आना, पेशाबका अम्लत्व लगातार बढ़ते जाना, रक्तमें शर्करा बढ़ना, न्युमोनिया या कामा अर्थात

संज्ञा-हीनतामें रोगी और रोगीके जीवनका नाश हो जाता हैं।

मसाने (kidney) का प्रदाह, चय और अन्यान्य उपसर्ग; हाथ-पैरका सड़नेवाला जखम (gangrene); रोगकी विरामावस्थामें ये उपसर्ग भी पैदा हो जा सकते हैं। यकृतका थोड़ा बहुत बढ़ जाना, कभी-कभी यकृत बढ़कर दूना या तिगुना हो जाता है।

चिकित्सा।

Insulin (इन्सुलिन) नामक दवाका आजकल बहुत अधिक प्रयोग होता दिखाई देता है। यह pancreas (क्लोम) ग्रन्थिसे निकला हुआ पदार्थ है और विकृत क्लोम-ग्रन्थिसे निकले हुए रसकी कमीको पूरा करनेके उद्देश्यसे इसका प्रयोग किया जाता है; पर रोगीके स्नायु-विधानकी गड़बड़ीकी वजहसे क्लोम-यन्त्र बिगड़ जाया करता है। अतएव स्नायु-विधानकी उन्नति करना ही मुख्य उद्देश्य होना उचित है; नहीं तो चिकित्सासे पूरा-पूरा लाभ नहीं होता। बायोकेमिक **कैलि-फास** लवण स्नायुविधानके सभी विकार और चयोंको संशोधन करनेकी प्रधान दवा है। इस अजैव-लवणको प्रयोगकर, अगर स्नायु-विधान स्वाभाविक अवस्थामें ला दिये जायें तो क्लोम-यन्त्र मजेमें अपनी स्वाभाविक क्रिया कर सकता है। अवश्य ही, अन्यान्य उपसर्गोंकी वजहसे यथोपयोगी बायोकेमिक लवणके प्रयोगकी भी जरूरत पड़ा

करती है। जैसे,—यकृतकी गड़बड़ी और शरीरमें जलीय अंशकी वृद्धिकी वजहसे **नेट्रम-सल्फ**, मसानेके प्रदाहकी वजहसे रक्त-प्रवाहमें विशृङ्खलता पैदा हो जानेपर **फेरम-फास** और केल्केरिया फास ; शरीर-विधानमें जल भागका अनियमित रहना और असमयमें सञ्चार हो जानेके कारण तेज प्यास और जल्दी-जल्दी दुबलापन पैदा हो जाये तो **नेट्रम-म्यूर**। इसी तरह प्रत्येक रोगीको अपनी लक्षणावली और अवस्थाके अनुकूल बायोकेमिक लवणका प्रयोग करनेपर बहुत जल्द फायदा होता दिखाई देता है।

चिकित्सा।

नेट्रम-सल्फ।—क्लोम-यन्त्रका विकार संशोधन—करनेकी प्रधान दवा है। ११७ और १२२ पृष्ठ देखिये।

नेट्रम-फास।—अजीर्ण और अम्लकी अधिकताके कारण बीमारीका पैदा होना। अम्ल-दूषित धातु। ११२—११३ पृष्ठ देखिये।

फेरम-फास।—किसी अङ्गमें उत्ताप, दर्द और रक्तकी अधिकता हो जाना और नाड़ीकी गति अगर तेज हो जाये, तो अन्यान्य उपयोगी अजैव लवणके साथ इसका प्रयोग होता है।

कैलि-म्यूर।—पेशाबका परिमाण और चीनीका भाग अधिक। कमजोरी बढ़ती जाती है और तन्द्रालुता दिखाई देती है। मधुमेहसे उत्पन्न हुआ चर्म्म-रोग। ६४: पृष्ठ देखिये।

कैलि-फास।—Medula oblongata (मात्स्का मूलाधार) और pneumogastric nerve (फुसफुस-पाका-शयिक स्नायु) अगर विकृत हो जाये और इनकी क्रियाकी गड़बड़ीकी वजहसे श्वास-कष्ट, स्नायविक दौर्बल्य, असाधारण भूख, नींद न आना प्रभृति लक्षण प्रकट हो जायें तो कैलि-फास लवणके द्वारा ये सभी केन्द्र स्नायविक अवस्थामें आ जाते हैं और रोग-लक्षण गायब हो जाते हैं।

कैल्केरिया-फास।—बहुमूत्र; कमजोरी, प्यासकी अधिकता, जीभ और मुँहका भीतरी भाग सूखता रहता है; उदरकी पेशी ढीली हो जाती है और पेट फूल जाता है; सुअरका मांस और लवण खानेकी इच्छा; मधुमेहके साथ-ही-साथ फेफड़ेकी बीमारी। सुसलरने इस दवाके साथ पर्यायक्रमसे "कैलि-सल्फ" प्रयोग करनेका उपदेश दिया है। लिङ्ग और उसके आस-पासके स्थानोंकी खुजलीका उपसर्ग दबानेके लिये "कैल्केरिया-फास" श्रेष्ठ दवा है।

साइलिसिया।—मधुमेहकी वजहसे असमयमें ही आँखमें मोतियाबिन्द हो जाना। मधुमेहकी वजहसे हाथ-पैरमें सड़नेवाले घाव (diabetic gangrene) हो जाना।

पथ्यापथ्य।

निषिद्ध।—सब तरहकी शराब, आसव, बियर, ताड़ी, लेमोनेड प्रभृति मीठी चीजें या शरबत, आलू, मटर, उड़द, दाल, मूली, बैंगन, मीठे फल, अंगूर, नाशपाती, सेव, केला, बेर, मैदा और भात।

सुपथ्य।—भूसीभरा लाल आँटा, मेष और बकरेका मांस, मुर्गेका मांस, मुर्गीका अण्डा, मक्खन, जायतून, पटल झींगा, टमाटो अर्थात बिलायती बैंगन, कच्चा केला, कच्चा पपीता, प्याज, बरबटी, करैला, पाती या कागजी नींबू, पुरानी इमलीकी चटनी, धनिया-सागकी चटनी। बंद गोभी अच्छी चीज है, पर फूलगोभी खाना मना है।

रसोईमें मसालोंका जितना ही कम व्यवहार हो उतना ही अच्छा है। तेलमें बनी तरकारी नुक्सान करती है। हविष्यान्नकी तरह **सभी सिझाकर** और घी या मक्खन मिलाकर खाना चाहिये। इससे फायदा होता है।

सभी रोगियोंके लिये बँधे पथ्यकी व्यवस्था नहीं हो सकती। हरेक आदमीको धातु और पाचन-शक्ति और भोजन सामग्रीका फलाफल देखकर खिलाने-पिलानेका प्रबन्ध करना चाहिये। कितने ही मधु-मेहके रोगियोंको गायका दूध सहन नहीं होता पर भैंसका दूध सहन होता है। बहुतसे रोगियोंमें ठीक इसके विपरीत अवस्था भी दिखाई देती है। अतएव, व्यक्ति-

गत धातु और अवस्थाको विचारकर व्यवस्था करना उचित है। अगर ठण्डे पानीसे नहाना सहन हो तो नहाना चाहिये, नहीं तो उसमें गरम पानी मिलाकर उसी पानीसे स्नान करना चाहिये।

अतिसार।

(Diarrhœa)

मलका परिमाण, संख्या, रङ्ग और गाढ़ापनसे ही उदरामय रोगका परिचय प्राप्त होता है। पतला, परिमाणमें बहुत ज्यादा और बार-बार बहुत दस्त आना,—इसको रोगकी प्रबलता बतानेवाला लक्षण समझना चाहिये।

आँतोंकी स्नायविक उत्तेजना; न पचनेवाली चीज खानेकी वजहसे उदर और आँतोंका प्रदाह; किसी जगहका रस बहना एकाएक रुक जाना; किसी चर्मके उद्भेदका बैठ जाना; उद्वेग, भय और मनमें गुरुतर आघात; सारे शरीर और खासकर आँतोंकी कमजोरी इत्यादि बहुतसे मुख्य और गौण कारणसे उदरामय या अतिसार हुआ करता है।

फेफड़ेका क्षय-रोग, टाइफायड रोग, सड़नेवाला जखम इत्यादि रोगकी अवस्थामें ध्वंस हुए तन्तु और दूसरे-दूसरे जैव पदार्थ शरीरसे आँतोंकी राह होकर बाहर निकल जानेके समय आँतोंका उपदाह उत्पन्नकर पतले दस्त लाया करते हैं।

दाँतकी जड़में पीव पैदा हो जाना (pyorrhœa) होनेपर, वही पीव पेटमें तथा आँतोंमें जाकर भी पतले दस्त लाने लगता है।

बार-बार विरेचक औषध (जुलाब) लेना, दस्तावर चीजें खाना, अथवा विपरीत गुण-सम्पन्न चीजें (जैसे—दूध और मांस, रबड़ी और चटनी) एक साथ खाना ; वायुकी तरी अथवा बाहरी उत्तापका एकाएक परिवर्त्तन ; कुल्फी बरफ़, बरफ-मिला पानी, बहुत पके या सड़े फल, सड़े अन्न या तरकारी, बासी भोजन, सड़ी मछली, मांस, अधिक परिमाणमें अथवा दूषित हंसका अण्डा या मुर्गीका अण्डा, तेल-प्रधान मछली इत्यादि खाना ; दूषित कूप या पुष्करिणीका पानी पीना इत्यादि बहुतसे कारणोंसे अतिसार हो जाया करता है। नकली मिलावटी चीज-मिला घी और सरसोंका तेल व्यवहार करनेकी वजहसे अतिसार व्यापक-रूप धारण कर लेता है।

भूख न रहनेपर भी खाना, भ्रान्त स्नेहके कारण बालक-बालिकाओंको ज्यादा खिला देना ; लोभ या दुर्बुद्धिके कारण अति मात्रामें गुरुपाक चीजें खाना अथवा खानेके थोड़े ही देर बाद फिर खाना इत्यादि अपने किये हुए पापोंके कारण फिरसे अतिसार पैदा हो जाता है।

बच्चोंका अतिसार।—गन्दे मुहल्लेमें रहना, बहुत आदमी जिस कोठरीमें रहते हैं, ऐसी जगह रहना, दूषित पानी पीना, बासी दूध पीना, भैंसका दूध या गाढ़ा दूध पीना, इत्यादि कारणोंसे बच्चोंको पतले दस्त आने लगते हैं। साथ ही

इसका प्रधान कारण है,—बच्चोंके लालन-पालनके सम्बन्धमें उदासीनता या जानकारीका न रहना। बच्चा अगर रोता हो, तो उसका कारण खोजना और प्रतिकारका प्रबन्ध करना चाहिये। ऐसा न कर बच्चेको बार-बार स्तनका दूध पिलाना; बराबर मिसरी, बिसकुट, लाजेञ्जस चूसनेको देना; अनियमित समयके अन्तरसे दूध आदि पिलाकर, उसको शान्त रखनेकी चेष्टा करना। परिणाम यह होता है, कि बच्चोंको इन चीजोंके लिये ज़िद करनेका एक बुरा अभ्यास लग जाया है और साथ-ही-साथ पाचनमें विकार अतिसार, कमजोरी, दुबलापन, क्रिमि और फिर धीरे-धीरे अन्यान्य कड़ी बीमारियाँ पैदा होकर उसे बराबर रोगी ही बनाये रखती हैं अथवा असमयमें ही उसकी मृत्यु हो जाती है। आज-कलके फैशनका अनुकरणकर बच्चोंको बोतलका दूध खिलानेके कारण भी बच्चोंको दुरारोग्य अतिसार हो जाया करता हैं। “फीडिङ्ग-बोतल” और teat अर्थात रबरकी घुंडीका व्यवहार करने बाद, उसे तुरन्त गरम पानी और ब्रशसे बार-बार धो डालना चाहिये और कपड़ा या झाड़नसे न पोंछकर, उसे आगकी हलकी गर्मीमें सुखाकर कागजमें लपेटकर रखना चाहिये, फिर उसमें दूध ढालनेके पहले, उसे एक बार फिर गरम खौलते हुए पानीसे बोतल और रबरको धो लेना चाहिये। ऐसी सतर्कता यदि नहीं रखी जाती और बोतल या घुण्डीमें एक बूंद दूध या मलाईका एक कण भी रह जाता है, तो उससे लाखों जीवाणु उत्पन्न हो जाया करते

हैं और वे बच्चेके पेटमें जाकर **मारात्मक शैशवीय हैजा-रोग** उत्पन्न कर देते हैं। स्तन पिलानेवाली माताके लिये भी अपने खाने-पीनेके सम्बन्धमें सावधान रहना बहुत जरूरी है। माताको उपवास, भारी जल्दी न पचनेवाली चीजें खाना, बहुत ज्यादा खाना, रातमें जागरण, मनःकष्ट, अधिक क्रोध करना त्याग देना चाहिये। इन कारणोंसे स्तन पीनेवाले बच्चोंको अतिसार हो जाना एक बहुत ही साधारण बात है। २१८—१९ पृष्ठ देखिये।

नया, हलके ढङ्गका अतिसार, अगर समयपर आरोग्य नहीं हो जाता तो क्रमसे **पुराना** आकार धारण कर लेता है और उस समय उसको आरोग्य करनेमें बहुत समय लग जाता है। २२०—२१ पृष्ठमें "कालेरा मार्बस" देखिये।

बायोकेमिक विचारके अनुसार—चाहे किसी कारणसे भी हो, पाचक रसमें अजैव लवणके परमाणु जब विशृङ्खल हो पड़ते हैं, तो पतले दस्त आने लगते हैं और अगर किसी तरह उनकी शृङ्खला फिरसे स्थापित कर दी जाती है, तो बीमारी आराम हो जाती है।

स्त्रियोंका "सूतिका" नामक रोगके साथ होनेवाले अतिसारकी चिकित्सा भी इसीके अनुसार होती है और नीचे लिखे बायोकेमिक लवणोंके द्वारा ही उसका प्रतिकार होता है।

चिकित्सा ।

फेरम-फास ।—आँतोंके केशरकी तरह तन्तु या अन्यान्य शोषक कोषाणुओंकी शिथिल अवस्थासे उत्पन्न अतिसारमें यह बहुत फायदा करता है। इस शिथिल अवस्थाके कारण आँतोंकी साधारण प्रक्रियासे जलीय अंश सोखा नहीं जा सकता; इस अवस्थाको फेरम-फास दूर कर सकता है। खायी हुई चीज अजीर्ण अवस्थामें मलके साथ निकलती है; पानीकी तरह पतले दस्त बार-बार आया करते हैं। इसके साथ ही अगर ज्वर और प्यास रहे तो फेरम-फास और भी ज्यादा फायदा करता है। मलका रङ्ग देखकर और-और जो दवाएँ मालूम हों, उनके साथ पर्यायक्रमसे इसका प्रयोग किया जाता है।

अतिसार आरम्भ होते ही बहुत-सा गरम पानी मलद्वारकी राहसे पिचकारी द्वारा आँतोंमें अगर डाल दिया जाये, तो आँतोंकी श्लैष्मिक झिल्ली धुल जाती है और आरोग्यमें बहुत अधिक सहायता मिलती है। यदि केशरोंकी शिथिलताकी वजहसे ही बीमारी हुई हो, तो इसी प्रक्रियासे आरोग्य हो सकता है, दवा खानेकी जरूरत ही नहीं पड़ती।

नेट्रम-फास ।—अम्लकी अधिकताकी वजहसे अतिसार, खट्टी गन्ध लिये और हरे रङ्गका मल; बच्चोंको दाँत निकलनेके समय खट्टी गन्ध लिये और हरे रङ्गके पतले दस्त;

क्रिमि-दोषके कारण अतिसार। अतिसारके साथ जीभके पिछले भागमें पीले रङ्गका या मक्खनकी तरह गाढ़ा लेप; कच्चे फल खानेकी वजहसे या पाचन-शक्तिकी कमीकी वजहसे गर्मीके दिनोंका अतिसार।

नेट्रम-म्यूर।—पानीकी तरह पतला, स्वच्छ या चिकना श्लेष्मा मिला दस्त; बहुत ज्यादा नमक खानेकी वजहसे अतिसार, पर्यायक्रमसे कब्जियत और अतिसार; मलकी तेजीके कारण मलद्वारमें दर्द और खुजली।

नेट्रम-सलफ।—हरा या काले रङ्गका मल, पित्त-मिला, विष्ठा-मिला पतले दस्त। पुराना उदरामय रोग, सवेरे पतले दस्त; बरसाती-ऋतुमें तर दिनोंमें या सर्दीकी अधिकताकी वजहसे अतिसार। टाइफायड ज्वरका अतिसार, पैत्तिक अतिसार; बुढ़ापेका अतिसार।

कैल्केरिया-फास।—दाँत निकलनेके समय अजीर्ण दोष और खाद्य-पदार्थके साङ्गीकरणकी असमर्थताकी वजहसे अतिसारको रोकनेकी यह सबसे श्रेष्ठ दवा है। मलके रङ्गके अनुसार दूसरी चुनी हुई दवाके साथ पर्याय-क्रमसे प्रयोग किया जाता है। दस्त गरम, पानीकी तरह पतले, बदबूदार, परिमाणमें बहुत ज्यादा और वायु निकलनेके साथ चारों ओर छिटक पड़ता है; कभी-कभी हरे रङ्गका या अजीर्ण खायी हुई चीज मिला।

कैल्केरिया-सल्फ ।—मल पीव-मिला अथवा पीव और रक्त-मिला।

कैलि-म्यूर ।—पित्तकी कमीकी वजहसे अतिसार; मलका रङ्ग हलका पीला, गेरुआ या मिट्टीकी तरह। इसके साथ ही "कैलि-सल्फ" लवणका पर्यायक्रमसे प्रयोग किया जाता है। टाइफायड ज्वरमें इस प्रकृतिके उदरामयको रोकनेके लिये "कैलि-म्यूर" उपयोगी है। घी या चर्बी-मिले गुरुपाक पदार्थ खाकर उदरामय, मल सफेद या चिकना। रक्त-मिश्रित या श्लेष्मा-मिश्रित मल। उदरामय रोगमें भी इस लवणकी **खास तरहकी जीभ और अन्य लक्षणोंकी तरफ** नजर रखनी चाहिये।

कैलि-फास ।—अतिसार रोगमें सड़ा बदबूदार मल अगर निकलता हो, तो भीतरी धातु-दोषके संशोधनके लिये "कैलि-फास" का व्यवहार किया जाता है। चावल धोये पानीकी तरह मल, पेटमें दर्द या बिना दर्दका उदरामय, सुस्ती और बहुत अधिक क्लान्ति। ७२ पृष्ठ देखिये।

मैग्नेशिया-फास ।—अतिसारके साथ पेटमें खोंचा मारनेकी तरह दर्द, वायुकी अधिकताकी वजहसे शूल, गरम सेंक देनेपर घटना। मलके रङ्गके अनुसार अन्यान्य चुनी हुई दवाओंके साथ पर्यायक्रमसे इसका प्रयोग होता है।

साइलिसिया ।—यह बच्चोंके उदरामयकी श्रेष्ठ दवा है। सड़ा गला बदबूदार मल; गरम, कड़ा और फूला

तलपेट। माथेमें बहुत अधिक खट्टा पसीना ; गो-बीजका टीका लगवानेके बादके उपसर्ग।

पथ्य।

जबतक दस्त आते रहें, खौलाये हुए पानीके सिवा तबतक और कोई चीज खानेको न देनी चाहिये। खासकर गरिष्ट चीजें खानेके कारण अगर अतिसार हुआ हो, तो लंघन ही सबसे श्रेष्ठ दवा है।

अगर हलका अतिसार हो, तो पतला आरारोट, बार्ली या सागूका पानी, थोड़ा नमक और नेबूका रस मिलाकर दिया जा सकता है। मल गाढ़ा हो जानेपर पथ्य देना चाहिये। दस्त आना एकदम बन्द हो जानेके ५-६ घण्टे बाद भातके मांड़के साथ गन्दभादुलियाका शोरबा मिलाकर पहले पथ्य देना चाहिये। २१७—१८ पृष्ठ देखिये।

पुराने अतिसारके लिये—रोगीकी व्यक्तिगत धातु और पाचन-शक्तिको समझकर खूब हलका पथ्य देना चाहिये। इन सब रोगियोंका रातका भोजन बहुत हलका होना आवश्यक है और सन्ध्याके पहले ही खा लेना चाहिये। ज्यादा रातमें खानेपर अच्छी तरह पचता नहीं है और इसलिये आरोग्य होनेमें गड़बड़ी होती है।

बच्चोंका या शैशवीय अतिसार रोग के पथ्य के लिये २२३—२४ पृष्ठमें बतायी हुई व्यवस्थाके अनुसार पथ्य देना

चाहिये। पथ्यके नियमपर खयाल न रखनेके कारण या जरा-सी भी ढिलाई हो जानेपर, बच्चोंका अतिसार एक घण्टेमें "शिशवीय हैजा" में परिणत होते देखा गया है।

रोगीका विवरण।

(१)

रोगी दो महीनेका एक निग्रो बच्चा था। इसको दर्दके साथ पतले दस्त आते थे; हमेशा सर इधर-उधर घुमाता था; आँखें शिव-नेत्र अर्थात उलटी हुई थीं; जीभ भूरी आभा लिये पीली हो रही थी; बहुत देरसे खानेके लिये कुछ भी न मांगता था; इसी अवस्थामें चिकित्साके लिये डाक्टरको बुलाया गया। उसकी मातासे मालूम हुआ कि एक सप्ताहसे बच्चा उदरामय रोगसे तकलीफ पा रहा है, उसे नाना प्रकारकी दवाएँ भी दी गयी हैं, पर किसी तरह भी फायदा न होकर बल्कि बच्चेकी अवस्था दिनों-दिन खराब ही होती गयी। वर्तमान अवस्था देखकर कोई भी आरोग्यकी आशा नहीं करता। सवेरे प्रायः १० बजनेके समय उसे "मैग्नेशिया-फास" और "कैल्केरिया-फास" पर्याय-क्रमसे १५ मिनटके अन्तरसे दिया जाने लगा। तीसरे पहर २ बजे उसे देखकर आश्चर्यमें आ जाना पड़ा। रोगीकी अवस्था बहुत कुछ अच्छी हो गयी थी, उसका सर हिलाना बन्द हो गया था, आँखें स्वाभाविक हो गयी थीं, इस बीचमें दो बार स्तनका दूध पी चुका है और अब शान्तिसे सो रहा है; अब दवाका अन्तर

बढ़ा दिया गया। दूसरे दिन सवेरे अवस्था और भी अच्छी मालूम हुई, पर अब जीभपर मोटी सफेद मैलकी तह्ही जमी थी और मुँहमें जखम मालूम होता था। आज उसे कैल्के-रिया-फास लवणके बदले कैलि-मूर लवण दिया गया और मैग्नेशिया-फासके साथ पर्यायक्रमसे एक घण्टेका अन्तर देकर देनेकी व्यवस्था दे दी गयी। दूसरे दिन जीभ साफ थी और भी दो-तीन दिन दवायें देने बाद रोगी एकदम आरोग्य हो गया।

[E. H. H.]

(२)

एक दो वर्षका पुराना अतिसार रोग, मल गाढ़ा, जीभ मैल-चढ़ी; डाक्टर गुयोलोनने उसे "कैल्केरिया-सल्फ" का प्रयोगकर आरोग्य किया था।

(३)

डाक्टर केरीका मन्तव्यः—

बहुत दिनोंके पुराने अतिसारकी बीमारीमें "नेट्रम-सल्फ" लवणसे बहुत फायदा दिखाई देता है। इसका एक विशेष लक्षण है, सवेरे बड़े वेगसे बहुत-सा दस्त होता है; मलकी प्रकृति बहुत कुछ नेट्रम लवणके समान हो रहती है। बहुत श्लेष्माका स्राव, लक्षणवाली श्लैष्मिक-झिल्लीकी सर्दी होनेपर भी इस लवणसे बहुत फायदा होता है। इन सब स्थानोंमें अगर लक्षणोंकी प्रकृति और स्थानका बार-बार परिवर्त्तन होता हो, तो इस लवणके साथ पर्यायक्रमसे "कैल्केरिया-फास" का

अगर कुछ दिनोंतक प्रयोग किया जाये तो रोगीकी धातुमें छिपा-दोष संशोधित हो जाता है।

डिफ्थीरिया।

(Diphtheria)

यह एक **खास तरहकी जीवाणुकी रची उप-झिल्लीके साथ** श्वास-नलीकी बीमारी है। आविष्कर्त्ताके नामानुसार इस जीवाणुको (klebs-loeffler bacillus) 'क्लेब्स-लोफलर जीवाणु' नाम दिया गया है।

बचपन और बाल्यावस्थाकी बीमारी ; परन्तु जवानी और प्रौढ़ावस्थामें भी यह बीमारी होती देखी जाती है ; परन्तु ऐसी घटना बहुत कम होती है। जन-पूर्ण नगरोंकी नाली बन्द होने या कूड़ा-कर्कट-भरी अवस्थामें डिफ्थीरिया रोग जगह-जगहपर व्यापक-रूपसे होता दिखाई देता है। यह **संक्रामक और स्पर्शाक्रमक** रोग है। रोगका बीज शरीरमें जानेपर, दो दिनोंके बाद ही बीमारी आरोग्य हो जाती है।

सारा शरीर अस्वस्थ मालूम होना, गलेमें दर्द और बोखार (प्रायः १०१° डिग्री) के साथ इसके आक्रमणकी सूचना मिलती है। बहुतसे रोगियोंको इस समय जाड़ा और कप-कपी भी मालूम होती है ; ज्वर १०२° से १०४° डिगरीतक

चढ़ जाता है और नाड़ीका स्पन्दन भी तेज हो जाया करता है। भूख न लगना, मिचली और कभी-कभी वमन, सर-दर्द और पीठ तथा कमरमें दर्द होता है। कण्ठका बाहरी भाग गर्म और उस स्थानकी त्वचा सूख जाती है; पतली या कड़ी चीज निगलनेमें गलेमें दर्द होता है; गर्दन अकड़ी, फूली और स्पर्श सहन नहीं होता।

रोग आक्रमणके क्षेत्रके अनुसार डिफ्थीरिया दो श्रेणियोंमें विभक्त किया गया है। जैसे,—

(क) Pharyngeal diphtheria—गल-कोषमें उत्पन्न डिफ्थीरिया। गल नलीमें नकली झिल्लीका उत्पन्न हो जाना।

धुमैले रङ्गकी उप-झिल्लीका निकलना, चारों ओर घोर लाल रङ्ग रहता है।

उपझिल्ली कण्ठके तन्तुके साथ जुड़ी रहती है, जबर्दस्ती अलग करनेपर जख्मकी तरह पेशी दिखाई देती है।

इस उपझिल्लीको अलग हटा लेनेपर, उस स्थानपर बहुत जल्द नयी झिल्ली पैदा हो जाती है, पर अगर आप-से-आप अलग होती है तो फिर नयी नहीं पैदा होती।

यह उपझिल्ली सबसे पहले तालुमूल और तालुमें पैदा होती है, इसके बाद कण्ठके पिछले भागमें फैल जाती है।

(ख) Laryngeal diphtheria,—स्वर-यन्त्रका डिफ्थीरिया; इसका साधारण नाम **"मेम्ब्रेनस क्रूप"** है।

इसमें लगातार सुस्ती और कमजोरी बढ़ती जाती है ।

बीमारी आराम होते ही स्वरभङ्ग और क्रूपके आवाजकी तरह खाँसी आती है ।

उपझिल्ली पहले टानसिलमें उत्पन्न होती है, इसके बाद वह तालु और नासारंध्रमें तथा नीचे श्वासनली और स्वर-यन्त्रमें फैल जाती है ।

श्वास-प्रश्वासमें तकलीफ होती है और धीरे-धीरे साँस रुकती जाती है ।

गलनलीकी परीक्षा करनेपर, लाली और सूजन दिखाई देती है । कई घण्टोंमें ही तालुमूल-ग्रन्थिमें लसदार पीली आभा लिये रसकी तरह पदार्थ सञ्चित होता दिखाई देता है ; वह बहुत जल्द ऊपरकी ओर तालुमें और नासा-रंध्रमें तथा नीचेकी ओर श्वासनली, खाद्यनली और स्वर-यन्त्रमें फैल जाया करता है ; इस उपझिल्लीकी आकृति चमड़ेकी तरह दिखाई देती है । उपझिल्लीके नीचेकी श्लैष्मिक-झिल्लीके रोगियोंमें रक्त निकलनेकी वजहसे प्रदाह और जखम उत्पन्न हो जाता है । १३०—३१ पृष्ठ देखिये ।

साधारण उपझिल्लीका फैलना बढ़नेके साथ-ही-साथ ज्वरका उत्ताप घट जाता है, पर किसी-किसीको ज्वर समान-भावसे रहता या बढ़ता भी दिखाई देता है ।

कर्णमूल-ग्रन्थिकी और जबड़ेके नीचेवाले ग्रन्थिकी और उसके पासके स्थानोंकी सूजन और कड़ापन, डिफ्थीरिया रोगके साथका ही उपसर्ग है ।

इस झिल्लीका निकलना और ठहर जाना, कभी-कभी नासारंध्रमें भी होता और नीचेकी ओर फैलता दिखाई देता है।

उपझिल्ली सड़ जानेकी वजहसे रोगीकी **साँसमें बदबू** हो जाती है। अगर नासारंध्रमें बीमारी फैल जाती है, तो **बदबूदार खाल उधेड़नेवाला रस** नाकसे बहा करता है।

नाड़ी **दुर्बल और नमनीय** रहती है, किसी-किसी रोगीकी नाड़ी तेज और अस्थिर भी हो जाती है। डिफ्थीरिया रोगमें **ताकत बहुत तेजीसे क्षय होती जाती है,** टानसिल बढ़नेकी वजहसे और कण्ठके भीतरके तन्तुओंकी सूजनसे **भयानक श्वास-कष्ट और आक्सिजनकी कमी** हो जाती है; जीवाणु-निःसृत (toxin) **विष-पदार्थ शोषित होकर** रोगीका रक्त दूषित बना देता है। इस तरह हृद्-यन्त्रमें विषका भार हो जानेके कारण वह क्षीण हो जाता है और बेहोशी आकर मृत्यु हो जाती है।

इसके अलावा ऐसा भी होता है, कि अगर रोग न दबा तो किसी **एक या एकसे अधिक अङ्गका पक्षाघात** हो जाता है अथवा रक्त-दोषकी वजहसे बादके उपसर्गके रूपमें टाइफायडकी पतनावस्था आ जाती है या **धीरे-धीरे बढ़नेवाली बेहोशी** (coma) होकर मृत्यु हो जाती है। **मूत्रपिण्ड** (kidney) पर बीमारीका हमला होनेपर,

पेशाबमें अण्डलाल दिखाई देता है, पेशाब कुछ-न-कुछ **रुक जाता** है और **युरिनिया** (मूत्र-विकार) की वजहसे मृत्यु होती है। इस बीमारीके आरम्भसे ही **पेशाबमें कुछ-न कुछ अण्डलाल** (albumen) **दिखाई देने लगता है,** पर "एलबुमिनुरिया" रोगकी तरह आनुसङ्गिक **शोथ होते नहीं** देखा जाता है। १५० पृष्ठ देखिये।

यह रोग पाँच विभिन्न मूर्त्तियों और प्रणालियोंसे प्रकट होता है। जैसे,—

१। Catarrhal form.—सर्दीके साथ मृदु-भावका विकास। यह प्रायः प्राथमिक अवस्थामें ही बन्द हो जाता है, जल्दी आरोग्य होता है, रोगके बाद पाँच छः दिनोंतक कमजोरी रहती है, इसके बाद रोगीणी ठीक स्वस्थ हो जाता है। इसके विपरीत कुछ दिनोंतक कमजोरी रह भी सकती है; पेशाबमें अण्डलाल रह सकता है और डिफ् थीरियाके बादका एक खास तरहका पक्षाघात भी हो सकता है, पर साधारणतः ऐसा दिखाई देता है, कि यह हलका डिफ्थीरिया प्रबल डिफ्थीरिया होनेके लिये ही होता है, मानो यह उसकी सूचना है। अतएव, इस अवस्थामें भी चिकित्सक और सुश्रूषा करनेवालेको हमेशा सावधान रहना चाहिये।

२। Inflammatory form.—प्रदाह-साधक विकास। जिस स्थानपर बीमारी होती है, वहाँ बहुत अधिक रक्त-सञ्चयके साथ प्रबल आक्रमण। प्रचण्ड प्रदाह और बहुत

दूर तककी जगहपर फैली हुई उपभिल्ली निकलती दिखाई देती है। ऊपर बताये लक्षण रहनेके साथ-ही-साथ **अस्थि-सन्धियोंका प्रदाह और सूजन,** इस तरहके विकासका नया उपसर्ग दिखाई देता है।

३। Malignant form.—सांघातिक विकास। लक्षणोंकी बहुत तेजीके साथ यह रोग प्रकट होता है। अगर कण्ठ-देशके लक्षण प्रबल नहीं रहते, तो भी निकली हुई साँसमें बदबू और सान्निपात (typhoid condition) की अवस्था पैदा हो जाती है। रोगके विषसे रोगीके खूनका प्रवाह दूषित हो जाता है या अकड़न और बेहोशी अथवा सारा शरीर निस्तेज हो जाना प्रभृति लक्षण प्रकट होजाते हैं।

४। Gangrenous form.—सड़नेवाले रूपका विकास। इसमें उपभिल्ली निकलनेके साथ-ही-साथ सड़न पैदा हो जाती है। भयानक रूपसे बल क्षय हो जाया करता है। हैजाकी तरह पतनावस्था आ जाती है और बेहोशी आकर मृत्यु हो जाती है।

५। Chronic form.—बहुत दिनोंतक स्थायी विकास। बीमारीका यह ढङ्ग डेढ़ महीनेसे तीन महीनेतक स्थायी रहता है; पर इस ढङ्गका विकास बहुत कम होता देखा जाता है। शरीरमें जगह-जगह अथवा सारे शरीरका चमड़ा लाल हो जाता है और जबतक बीमारी आरोग्य नहीं हो जाती है, तबतक स्थायी रहता है; पर रोमान्ति या स्कार्लेट-

ज्वर (आरक्त-ज्वर) के उद्भेदकी तरह इससे 'खाल' नहीं निकल जाती।

डिफ्थीरियाका पक्षाघात।—यही इस रोग का अन्तिम उपसर्ग है। साधारणतः यह पक्षाघात मुँहके भीतर तालु (कोमल अंश), कण्ठनलीकी पेशी, आँखकी पेशी और हाथ तथा पैरकी एक या एकसे अधिक पेशीपर आक्रमण करता है।

बायोकेमिक विचार।

यह बीमारी एक खास तरहके जीवाणुसे पैदा होनेपर भी इसका प्रधान कारण अजैव लवणकी गड़बड़ी ही होती है। तन्तुओंके भीतरके **कैलि-म्यूर** नमकका परिमाण और अनुपात यदि बिगड़ जाता है, तो वहाँ ये खास तरहके जीवाणुको अपना घर बना लेनेकी सुविधा हो जाती है। अतएव, निर्दैषित अजैव लवणका प्रयोगकर, अगर इस कमीको पूरा कर दिया जाता है, तो उस स्थानके जीवाणु घर नहीं बना पाते, वे तुरन्त वहाँसे हट जाते हैं और बीमारी आराम हो जाती है। मनुष्य शरीरके जैव-पदार्थोंपर सब तरहके जीवाणुओंका आक्रमण हो सकता है और वहाँ ये अपना घर बना सकते हैं तथा जल्द ही ये सड़ने भी लगते हैं। अजैव-लवणके संयोगकी वजहसे जैव-तन्तु सब इस तरहके क्षयसे बच जाते हैं।

जीवाणु-वादियोंके साथ बायोकेमिक चिकित्सा-प्रणालीका किसी तरहका विरोध नहीं है। जैव-किमितिवाद (Bio-chemistry) विशेष रोग-जीवाणुओंका अस्तित्व या रोगोत्पादक शक्तिको अस्वीकार नहीं करता; परन्तु जैव-किमितिवादियोंका प्रमाण यही है, कि अगर मानव-शरीरमें पहले अजैव-लवणोंकी विशृङ्खला न हो जाये तो वहाँ किसी तरहके रोग पैदा करनेवाले जीवाणु अपना घर ही नहीं बना सकते; बल्कि रोगीके रक्त-प्रवाहमें (toxin) जीवाणुओंसे उत्पन्न विष-पदार्थको हटानेके लिये (anti-toxins) जैव-विषघ्न "सिरमकी" आवश्यकता भी स्वीकार कर ली जाती है। सिरमका प्रयोगकर जीवाणुमें उत्पन्न विष यदि नष्ट न कर दिया जाये तो अजैव-लवण रोगीके जैव-तन्तुके साथ मिलकर आरोग्य-कार्य करनेके पहले ही रोगीकी मृत्यु हो जा सकती है; पर "सिरम" का प्रयोग कर जीवाणुसे उत्पन्न विष नष्ट हो जानेपर भी सम्पूर्ण आरोग्यके लिये और इस आरोग्यको स्थायी बनाये रखनेके लिये तन्तु-लवणोंका (tissue-salts) प्रयोग करनेके सिवा कोई दूसरा उपाय ही नहीं।

चिकित्सा।

फेरम-फास।—आक्रमणकी खबर मिलते ही ज्वर रहनेपर "कैलि-म्यूर" लवणके साथ, एकके बाद दूसरा, इस क्रमसे इसका प्रयोग किया जाता है। अगर सर्दीके साथ

हलकी प्रकृतिका डिफ्थीरिया हो तो आरोग्यके लिये ये ही दोनों नमक यथेष्ठ हैं।

कैलि-म्यूर।—यह डिफ्थीरियाकी प्रधान दवा है। इसमें कण्ठके भीतरवाले तन्तुओंमें प्रदाह हो जाता है, श्लैष्मिक झिल्ली फूल जाती है और उसमें बहुतसे अंकुर पैदा हो जाते हैं, टानसिल फूल जाता है और उसपर सफेद या धुमैले बूंदकी तरहके बहुत-से दाने निकल पड़ते हैं; ये उद्भेद बहुत जल्द आपसमें मिल जाते हैं और तालु-देश तथा कण्ठमें फैलते रहते हैं। स्वर-भङ्ग, रूखी और तेज खाँसी, उसमें कुत्ता भूकनेकी तरह आवाज रहती है; जीभपर सफेद मैल-चढ़ा रहता है। इस नमकका कुल्ला करने या "स्प्रे" द्वारा बहुत फायदा होता है। ६४ पृष्ठ देखिये।

नेट्रम-म्यूर।—चेहरा फूला और पीला, इसके साथ ही तन्द्रा आती रहना, मुँहसे बहुत अधिक लार बहना; जीभ सूखी, श्वासमें कष्ट; पानीकी तरह पतला वमन या इसी तरहके पतले दस्त आया करते हैं। ८८ पृष्ठ देखिये।

नेट्रम-सल्फ।—गलेमें बहुत अधिक श्लेष्मा इकट्ठा हो जाना; हरे रङ्गका पतला वमन या तीता वमन; कैलि-म्यूरके साथ एकान्तरक्रम (एकके बाद दूसरा) से इसका प्रयोग किया जाता है। १२०—२१ पृष्ठ देखिये।

कैलि-फास।—रोगकी किसी भी अवस्थामें शक्तिका घट जाना या सुस्ती होनेपर अथवा रोगका सांघातिक विकास

होनेपर सान्निपातिक अवस्थामें, तेज डिफ्थिरियाके बादकी विपत्तियाँ, दृष्टि क्षीण हो जाना, बोलनेमें गड़बड़ी, स्वर-तन्त्रीका पक्षाघात, सच तो यह है, कि किसी भी अङ्गका पक्षाघात होनेपर यह लवण उसका प्रतिकार कर सकता है। ७१ पृष्ठ देखिये। दूसरे-दूसरे निर्देशित लवणोंके साथ एकान्तर-क्रमसे भी इसका प्रयोग किया जाता है।

कैल्केरिया-फ्लुयोरिका।—कण्ठ-नलीके प्राचीर-गात्रमें अंकुरकी तरह हो जाता है; उपजिह्वा (uvula) फूल जाती है और लम्बी हो जाती है; डिफ्थिरियाकी नकली झिल्ली बहुत तेजीसे श्वासनलीमें फैलती जाती है। सूजनकी अधिकताकी वजहसे कण्ठनली रुकी हुई मालूम होती है और इसी वजहसे श्वासमें बहुत अधिक तकलीफ होती है।

नेट्रम-फास।—मुँहके भीतर, तालुके ऊपर, तालु-मूलके ऊपर, जीभके पिछले भाग पर तर मक्खनकी तरह पीले रङ्गका मैल चढ़ा रहना।

कैल्केरिया-फास।—डिफ्थिरिया की उप-झिल्ली कण्ठमें फैल जाया करती है। यदि पहलेसे रोगीकी बायो-केमिक चिकित्सा होती रहती है, तो यह दुर्घटना अक्सर होती नहीं दिखाई देती। बड़ी उपझिल्ली अलग होनेके बाद, अगर दो-एक छोटे टुकड़े अड़े रहें, तो इस लवणके सेवनसे वे अलग हो जाते हैं। ताकत बनी रहनेके लिये खासकर

"रिकेट्स" रोगवाले बालक-बालिकाओंके रोगमें, दूसरे निर्दे-षित लवणोंके साथ एकान्तर-क्रमसे इसका प्रयोग किया जाता है। रोगके बादकी कमजोरीके लिये भी इसका व्यवहार होता है।

मन्तव्य।

डाक्टर सुसलर कहते हैं,—बायोकेमिक लवणका व्यवहार करते समय किसी दूसरी दवाका प्रयोग करना अथवा चूनेका पानी, कार्बोलिक-एसिडका द्रव (लोशन), बरफ या बरफ-मिला पानी प्रभृति चीजें व्यवहार करना एकदम मना है। इनके द्वारा बायोकेमिक दवाकी क्रिया नष्ट हो जाती है।

रोगीकी ताकत बनाये रखनेके लिये— पथ्यके साथ कई बूंद उत्तम ब्राण्डी मिलायी जा सकती है; पर भ्रान्त धारणाके वशीभूत होकर अधिक परिमाणमें या बार-बार ब्राण्डीका प्रयोग करनेपर उत्तेजना पैदा होकर हृद्-यन्त्रमें खराबी पहुँच सकती है; संयत मात्रामें और बँधे समयका अन्तर देकर प्रयोग करना चाहिये। "कैलि-फास" लवणसे बहुत फायदा होता है।

पथ्य।

नियमित समयका अन्तर देकर थोड़ी मात्रामें पथ्य देना चाहिये। एकदमसे बहुत अधिक न खिला देना चाहिये। पथ्य पतला, तरल और हलका होना चाहिये; पर उसका

पुष्टिकर होना जरूरी है। अगर तरल पथ्य भी निगला न जा सके, तो मल-द्वारकी राहसे (rectal feeding) प्रयोग करना चाहिये। इस बीमारीका सबसे उत्तम पथ्य दूध है। बेदानाका रस, कमला-नेबूका रस और अनारसका रस थोड़ी-थोड़ी मात्रामें प्रयोग किया जाता है ; मांसका जूस भी दिया जाता है।

आनुसङ्गिक चिकित्सा।

मकानके सबसे ऊपरी तल्लेमें रोशनी तथा हवासे भरे कमरेमें रोगीको रखना चाहिये। रोगीके व्यवहारमें आने-वाली खास चीजें और बिछावनके सिवा उस कमरेमें और कुछ भी न रखना चाहिये। सुश्रूषा करनेवाला एक ही आदमी उस कमरेमें रहे और किसी दूसरेके साथ संस्रव त्याग देना चाहिये। रोगीको शय्यापर सुलाये रखना होगा। बिछावन-पर भी उठकर बैठने न देना होगा। उपझिल्ली निकल जाने और ज्वर छूटनेके एक सप्ताह बाद उठ सकता है। रोगीके व्यवहारमें आये हुए सभी पदार्थ और वस्त्र आदि खौलते पानीमें थोड़ा पर्माङ्गनेट आफ पोटास मिलाकर उसमें खौला लेना चाहिये। सुश्रूषा करनेवाला अपना पहना हुआ कपड़ा भी उसी कमरेमें छोड़ दे और उसी द्रवसे हाथ-पैर धोनेके बाद बाहरके किसी मनुष्यको छुए तथा स्वयं भी खाना-पीना करे। डिफ्थिरिया रोगीकी सुश्रूषा करनेवाले मनुष्यको किसी बच्चे या बालक-बालिकाओंको न छूना चाहिये ; उनके कपड़े

लत्ते भी न छूना चाहिये। सुस्रूषाका काम समाप्त हो जाने-पर भी एक सप्ताहतक यह नियम पालन करना चाहिये।

तीन सप्ताहतक रोगीको दूसरे आदमियोंके संसर्गसे अलग रखना चाहिये। जबतक उसका स्वास्थ्य एकदम ठीक न हो जाये, तबतक पढ़ना-लिखना या स्कूल-पाठशाला जाना बन्द रखना चाहिये। पूरी-पूरी ताकत आ जानेके पहले इन सब निषेधोंपर ध्यान रखनेके कारण हृद्-यन्त्रकी क्रिया रुकनेकी वजहसे (heart-failure) रोगीकी मृत्यु हो जाती है।

विशेष विधान।—Anti-toxin serum (विषघ्न सिरम) के प्रयोगमें विलम्बकर रोगीका जीवन संकटमें डालना उचित नहीं है। कण्ठके भीतरकी सूजन, प्रदाह और उप-झिल्लीकी अधिकताकी वजहसे अगर साँस रुकनेकी तैयारी हो जाये, तो तुरन्त नकली नल कण्ठमें (intubation) प्रवेश कराकर या कण्ठनली काटने (tracheotomy) के लिये नश्तर लगानेका प्रबन्ध करना चाहिये।

रोगीके कमरेकी हवा तर रखनेके लिये कमरेमें भाफ फैला रखनेका प्रबन्ध करना चाहिये। इसके लिये रोगीकी शय्यासे थोड़ी दूरपर steam atomiser (स्टीम एटोमाइ-जर) यन्त्रका व्यवहार किया जाता है। रह-रहकर "कैलि-म्यूर" लवणका द्रव "स्प्रे" यन्त्रके सहारे रोगीके मुँहके भीतर और कण्ठमें प्रयोग करना चाहिये।

इस रोगके उपसर्गके रूपमें नियुमोनिया, कैपिलरी ब्राङ्का-इटिस, हृद्-यन्त्रका प्रदाह इत्यादि बीमारियाँ होती देखी जाती हैं। १९७ से २०४ पृष्ठ देखिये।

कुछ गरम पानीमें थोड़ा-सा "अलकोहल" मिलाकर इससे रोज रोगीका शरीर पोछ देना (sponging) आवश्यक है। रोगीके शरीरमें गर्म कपड़ा पहना रखना चाहिये और कण्ठतक हलका गरम कपड़ा ओढ़ा रखना चाहिये; परन्तु रोगीके कमरेमें साफ हवाके आवागमनके लिये उससे कुछ दूरपरकी खिड़की खोल रखनी चाहिये।

रोगीका मुँह खूब ध्यान रखकर दिनमें तीन-चार बार साफ कर देना चाहिये। कुछ गरम पानीमें थोड़ा "कैलि-म्यूरर" अथवा "पर्माङ्गनेट आव पोटास" गलाकर उसका व्यव-हार करना चाहिये।
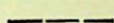
शोथ।

(Dropsy)

यह कोई स्वाधीन बीमारी नहीं है। शोथ शब्दसे साधा-रण सूजन ही मालूम होती है। लक्षण, कारण और स्थानके प्रभेदके अनुसार इसका अलग-अलग नाम पड़ गया है।

(क) Anasarca (एनासारका)।—यह सारे शरीरका शोथ है, पैरसे लेकर ललाटतक कुछ-न-कुछ सूजन रहती है।

शरीरके रुद्ध गह्वरोंमें (जैसे—उदर, वक्ष) या कौषिक-तन्तुसे बनी छोटी-छोटी झिल्लियोंमें अथवा दोनों ही स्थानोंमें **जल-सञ्चय** की वजहसे यह सूजन उत्पन्न होती है। इस बीमारीमें किसी स्थानमें **प्रदाह नहीं पैदा होता।** अधिकांश स्थानोंमें, सबसे पहले दोनों पैरोंमें सूजन होती है; अंगुलीसे दबानेपर इस स्थानमें गड़हा पड़ जाता है; यह सूजन धीरे-धीरे ऊपर बढ़कर वक्षस्थल और मुख मण्डलतक फैल जाती है, आँखकी पलकें फूल जाती हैं और आंखकी निचली पलक देखनेपर पानी-भरी थैलीकी तरह मालूम होती है। कितने ही रोगियोंमें ऊपरी अङ्गकी सूजन घटकर नीचेवाले अङ्गकी सूजन बढ़ जाती है। इसके बाद कई दिनोंतक इसी तरह रहनेपर निम्नाङ्गकी सूजन घटकर उर्द्धाङ्गकी सूजन बढ़ जाती है। फुसफुसावरण (pleura) और हृदावरक झिल्ली (pericardium) में जल-सञ्चय होनेपर फेफड़े और हृत्पिण्डके पूरी तरह फैलनेमें बाधा पड़ती हैं। इसी वजहसे रोगीको श्वास-प्रश्वासमें तकलीफ होती है और कलेजेकी धड़कन बढ़ जाया करती है।

सर्वाङ्गव्यापी—शोथ रोगमें रोगीकी **त्वचा** लालित्य-हीन हो जाती है और भूरी पड़ जाती है। पसीना न निकलनेके कारण त्वचा सूखी और रुखड़ी रहती है। **जीभ**—लाल और नीरस रहा करती है या लेपसे ढकी और सरस रहती है अथवा अस्वाभाविक रूपसे साफ और चमकीली रहा करती है

पाचनमें विकार, **भूख** न लगना, साधारणतः **कब्जियत,** पर किसी-किसीको **पतले दस्त** भी आते हैं; पेशाब परिमाणमें थोड़ा और गहरे रङ्गका होता है; प्रायः हमेशा **ज्वर भाव** रहता है, खासकर सन्ध्याके बाद तो रहता ही है; **नाड़ी** तेज या मृदु; अधिकांश स्थानोंमें अनियमित और व्यतिक्रम-पूर्ण रहती है। कुछ-न-कुछ तेजीसे ही **ताकत घटती** जाती है और इसके साथ ही बाहरी **जड़ता** पैदा होती जाती है। इसके अलावा बीच-बीचमें सूखी विरक्त करनेवाली **खांसीके कारण** रोगीको तकलीफ होती है। रातके समय बेचैनी बढ़ जाती है, **नींद नहीं आती** या बार-बार चौंककर नींद खुल जाया करती है; इसके साथ ही प्रायः **श्वास-कष्ट** और **उत्कण्ठा** रहती है।

(ख) Ascites (**एसाइटिस**)—उदर-प्रदेशमें जल सञ्चय होता है। इसका साधारण नाम—**उदरी** या **जलोदर** है। इसका एकाएक आक्रमण होता है अथवा धीरे-धीरे जल-सञ्चय हुआ करता है; पर प्रकृत जलोदर-रोगमें किसी तरहके पूर्ववर्त्ती लक्षणके द्वारा बीमारीका पहलेसे पता नहीं लगता। कभी-कभी किसी स्थानपर बीमारीके अग्र-दूतके रूपमें दुबलापन, प्यासका बढ़ जाना, पेशाबकी गिनती और परिमाणमें गड़बड़ी, सर-दर्द, हाथ-पैरका काँपना और उत्कण्ठाका लक्षण दिखाई देता है।

जलोदर रोगकी परीक्षाके लिये—रोगीको चित सुला देना चाहिये। (क) उसके उदरके एक पार्श्वमें चिकित्सक हाथकी तलहत्थी समान-भावसे रखकर, उदरके विपरीत पार्श्वमें दूसरे हाथकी अंगुलियाँ एकत्रित कर धीरे-धीरे चोट दे तो इससे उदरमें इकट्ठा हुए पानीमें तरङ्ग उठती है और दूसरे हाथकी तलहत्थीके नीचे यह तरङ्ग अनुभवमें आती है। (ख) रोगी इसके बाद अपनी दाहिनी करवट यदि सोता है, तो उदरका जल आपेक्षिक गुरुत्वकी वजहसे उसी ओर आकर इकट्ठा हो जाता है। इस समय उसके उदरके बायें पार्श्वमें एकत्रित हुई अंगुलियोंसे धीरे-धीरे आघात करनेपर इस पार्श्वमें खोखली आवाज (hollow sound) आती है ; क्योंकि उस समय बायें पार्श्वमें पानी नहीं रहता, पानी दाहिनी ओर चला आता है।

चर्म्म-रोगके दाने भरपूर न निकलने, खुजली या छोटी माताकी गोटियाँ बैठ जाने, बहुत दिनोंतक यकृत या प्लीहा बढ़नेके साथ मैलेरिया रोग भोगनेके बाद, अतिसार या ग्रहणी अथवा पाण्डु-रोगके बादके उपसर्गके रूपमें "शोथ" होता है। शोथ-रोगमें **"पसीना न होना"** एक खास लक्षण है।

पार्थक्य निर्णय।

कितने ही रोगोंके साथ जलोदर रोगका आकृतिगत-सादृश्य रहनेकी वजहसे पार्थक्य-निर्णयमें भ्रम हो सकता है। जैसे,—

मूत्राशयका फूलना।—पेशाब रुकने या किसी दूसरे कारणसे मूत्राशयमें सूजन होनेपर, इस अवस्थाको जलोदर समझ कर अनभिज्ञ चिकित्सकको भ्रम हो सकता है। मूत्राशयकी सूजन तलपेटके नीचेवाले भागमें दिखाई देती है; उसकी आकृति उस समय गोल और उठी हुई रहती है। रोगीके करवट लेनेपर उसकी आकृतिमें फर्क नहीं आता या उसकी जगह नहीं बदलती। "कैथिटर-यन्त्र" से मूत्राशयकी परीक्षा करनेपर, तुरन्त ठीक ठीक अवस्थाका पता लग जाता है।

गर्भ-सञ्चार।—जलोदरकी गर्भावस्था और गर्भावस्थासे जलोदरका भ्रम होनेके कारण कितने ही स्थानोंमें गड़बड़ी हुई है। रोगिनीके मासिक ऋतुके सम्बन्धमें ठीक-ठीक पता लगानेपर प्रकृत अवस्थाका निर्णय हो जाता है।

डिम्बाशयका अर्बुद (Tumour)।—इस तरहका अर्बुद उदरके एक पार्श्वमें होता है और रोगिनीके करवट लेनेपर अर्बुदकी जगह नहीं बदलती। छूने और दबानेपर कड़ापन मालूम होता है—यह अर्बुदका एक दूसरा परिचय है। रोगकी बढ़ी हुई अवस्थामें दूसरी ओर भी अर्बुद उत्पन्न होता देखा गया है।

पुराना स्थायी अन्त्रावरण-प्रदाह (Chronic peritonitis)।—रोगके इतिहाससे इसका परिचय और जलोदरसे इसका प्रभेद मालूम होता है।

पहले ही कहा जा चुका है, कि शोथ कोई स्वतन्त्र बीमारी नहीं है, बल्कि यह दूसरे-दूसरे रोगके लक्षण या उपसर्गके रूपमें ही पैदा होता है। शरीरके जिस किसी अङ्गमें रस-सञ्चय अर्थात जल-सञ्चार हो सकता है, खासकर रुके हुए थैलीकी तरह स्थानोंमें ही यह बराबर हुआ करता है। **बड़ी सन्धियोंमें** जल-सञ्चय हो जाता है, पर इस अवस्थामें कुछ-न-कुछ प्रदाह मौजूद रहता है।

ब्राइट रोगमें और गुर्देकी बीमारीमें—जलोदर और शोथ ये दोनों ही अवस्थाएँ पैदा हो जा सकती हैं।

हृत्पिण्डकी बीमारीमें।—सर्वाङ्गीन शोथ या हृदावरक झिल्लीमें (hydro-pericarditis) जल-सञ्चय हो सकता है।

यकृतकी बीमारीमें।—जलोदर होता देखा जाता है।

वात-रोगाधिकारमें—सन्धियों में रस-सञ्चय हो सकता है।

फुस्फुसावरक झिल्लीकी (pleura) बीमारीमें यदि **जल-सञ्चय** होता है, तो उसको (hydrothorax) **हाइड्रो-थोरैक्स** कहते हैं। इस रोगमें प्रदाह नहीं पैदा होता दिखाई देता। इसमें दोनों ही ओरके फुसफुसावरणमें

एक ही समय जल-सञ्चय होता है; अगर जल-सञ्चय अधिक होता है, तो फेफड़ेपर दबाव पड़ता है; हमेशा श्वास-कष्ट होता है और सोनेपर श्वास-कष्ट बढ़ जाता है। अगर जल-सञ्चय लगातार बढ़ता जाता है, तो श्वासके साथ खींची हुई हवाको जगह नहीं मिलती और इसीलिये वायुकी कमीके कारण नीलिमा पैदा हो जाती है। हृद्-पिण्डपर दबाव पड़नेकी वजहसे हृद्-यन्त्रकी क्रियामें भी गड़बड़ी आ जाती है। आकर्षण और प्रतिघातसे वक्षावरकझिल्लीके रस-स्राव (pleural effusion) से उत्पन्न शब्द सब सुन पड़ते हैं।

फुसफुसमें जल-सञ्चय (Pulmonary œdema, dropsy of the lungs)—इसमें **एकाएक श्वास-कष्ट और नीलिमा पैदा** हो जाती है; लगातार बढ़ती हुई खाँसी रहती है और निकला हुआ श्लेष्मा पतला, स्वच्छ या खून-मिला रहता है। बहुत ज्यादा पसीना होता है, श्वास रुकता है और उत्कण्ठा रहती है, धीमा बोखार रहता है। **वक्षकी आकर्णनमें**—कण्ठ-स्वरकी प्रवाहित तरङ्ग (vocal fremitus) कम पड़ जाती है; केश मलनेकी तरह आवाज (crepitant rales) और कर्कश आवाज सुन पड़ती है।

नीचे लिखी बीमारियोंमें फेफड़ेमें जल-सञ्चय होना सम्भव है और उस सन्देहको दूर करनेके-लिये सावधानतासे परीक्षा करना उचित है।

लोवर निमोनियाकी बीमारीमें जब रोगीको प्रलाप होता है।

प्लुरिसिकी बीमारीमें रोगीके सामान्य परिश्रमकी वजहसे रस-क्षरण बढ़ जानेपर।

हृत्पिण्डका प्रसारण (dilatation) और हृद्-शूल—(angina)।

बहुत दिनोंके पुराने ज्वरमें बल क्षय।

गुर्दा, हृद्-यन्त्र और मस्तिष्क-सम्बन्धी रोगोंकी अन्तिम अवस्थामें।

रक्ताल्पता (anæmia) के साथ होनेवाली अन्य बीमारियोंमें।

राजयक्ष्मामें।

उपदंश प्रभृति बीमारियोंकी वजहसे धातु-दोष (cachexia) हो जानेपर।

बेरी-बेरी।

(Beri-Beri)

कई बरसोंसे बङ्ग-देश तथा भारतके दूसरे-दूसरे प्रदेशोंमें बहुव्यापी शोथ व्याधि (epidemic dropsy) फैल रही है। यह सब ऋतुओंमें ही होती देखी जाती है और यदि एक बार इसका आक्रमण हो जाता है, तो यह रोगीको छोड़कर

जाना नहीं चाहती। कभी कम हो जाती है, कभी छिप जाती है और फिर समयका अन्तर देकर पूरी तरह उभड़ पड़ती है। बहुतसे मनुष्य इसको **बेरी-बेरी** (beri-beri) कहते हैं ; पर **यह भ्रमात्मक** है। बेरी-बेरीकी बीमारी एकदम स्नायु-विधानसे उत्पन्न बीमारी है। इसका दूसरा नाम Polyneuritis (पोलिनुयराइटिस) है, इसमें स्नायुके उपादानोंसे उत्पन्न प्रदाह, रोगीके स्नायुकी जगहपर दर्द, जलन, झुनझुनी और सुन्नपन पैदा हो जाता है। स्नायुपर दबाव या स्पर्श सहन नहीं होता। वास्तविक **बेरी-बेरी रोग,**—शराब पीना, उपदंश, वात-रोग, टाइफायड रोग, मैलेरिया, बहुमूत्र और मधुमूत्र-रोग, कण्ठमालाग्रस्त धातु, गुर्देके यन्त्रकी बीमारी प्रभृति रोगोंके उपसर्गके रूपमें पैदा होती है। अतएव, इन दोनों बीमारियोंका अर्थात बेरी-बेरी और बहुव्यापक शोथ रोगका पार्थक्य निर्णय करना कठिन नहीं है।

बहुव्यापक शोथ-रोगके लक्षण।

बहुत कमजोरीके साथ सरमें चक्कर आना, सर-दर्द, माथेके पिछले भागमें (occiput) अधिक मालूम होता है ; चेहरा सफेद और दोनों आँखें रक्त-शून्य और मलिन ; भूख न लगना ; कब्जियत ; पाचन-क्रियामें विकार और पतले दस्त आना ; पित्त-वमन या पतली लार बहना ; दाँतके मसूढ़े से और नाकसे कुछ-न-कुछ रक्त-स्राव ; थोड़ी मात्रामें गहरे

रङ्गका पेशाब ; आँतोंमें आवाज होना और छोटी आँतमें दर्द ; बड़ी आँतमें शूलके दर्दकी तरह यन्त्रणा ; कब्जियत होनेपर मलका रङ्ग पीली आभा लिये अथवा पीली आभा लिये नीला हो जाता है और दिनभरमें आठ-दस बार पाखाना होता है। चर्मके नीचेवाले तन्तुमें जल-सञ्चय होनेकी वजहसे **सूजन** दिखाई देती है। यह सूजन सबसे पहले तलवेके ऊपरी भागमें और गुल्फ-सन्धि (ankle) में पैदा होती है और क्रमसे जानु-सन्धि (knee) से गुल्फतक, पैरकी दीर्घास्थिके ऊपरतक सूजन फैलकर रुक जाती है, रोग कठिन और प्रगतिशील होनेपर सूजन फैलकर जानु और जननेन्द्रियतक आक्रमण करती है। पुरुषोंका अण्डकोष और स्त्रियोंका भगोष्ठ बहुत फूलता देखा गया है। रोग अगर दुःसाध्य हो जाता है, तो यह सूजन और भी ऊपर चढ़कर चेहरा, दोनों हाथ, वक्ष और उदर-प्रदेशमें भी चली जाती है और उदरी और वक्षमें जल-सञ्चयके लक्षण दिखाई देते हैं। पूर्वान्हकी अपेक्षा अपरान्हमें और सन्ध्याके बाद सूजन बढ़ जाती है। त्वचा सूखी, प्यासकी अधिकता, ज्वर, श्वास-कष्ट और कलेजा धड़कना (palpitation) हो जाता है और ये सब उपसर्ग धीरे-धीरे बढ़ते जाते हैं। बहुतोंका सारा शरीर सुन्न पड़ जाता है और दोनों पैरोंमें आंशिक पक्षाघात होते देखा जाता है। **हृद्-यन्त्रपर** विशेषकर आक्रमण होता है और उसपर हानि पहुँचती है। अनुपयुक्त चिकित्सा द्वारा ही अधिकांश रोगियोंकी मृत्यु होती है।

आँखकी बीमारी।—इस रोगका एक साधारण उपसर्ग है। glaucoma (ग्लोकोमा) नामक धूसरमन्य अर्थात तिमिर-दृष्टि रोग पैदा होकर आँखका कृष्ण-पट (Retina) और उससे संलग्न स्नायु नष्ट होकर अन्धापन पैदा हो जाता है। अस्त्र-चिकित्साके बाद भी स्वाभाविक दृष्टि नहीं लौट आती।

बहुव्यापक शोथ-रोगमें पेशाबमें कुछ-न-कुछ अण्डलाल रहता है; पर रोगीके मल-मूत्र या रक्तमें यह रोग पैदा करनेवाले किसी विशेष जीवाणुका आजतक आविष्कार नहीं हुआ। इस रोगका कारण-तत्व अबतक जाना नहीं गया। चावल और तेल (खासकर कलका छाँटा, उसना चावल और मिलावटी सरसोंका तेल) व्यवहार करनेकी वजहसे यह रोग होना कितने ही चिकित्सक बताया करते हैं। मारवाड़ियों और युरोपियनोंको यह बीमारी होती नहीं देखी जाती। प्रकृति इन दोनों सम्प्रदायवालोंको बचाये रखती है। श्री काशीमें १८२५ ईस्वीके आरम्भमें इस रोगका भयङ्कर प्रादुर्भाव हुआ था और मृत्यु-संख्या अधिक होनेके कारण भय भी छा गया था। एक ही मुहल्लेमें बङ्गाली और उक्त भारतीयोंके रहनेपर भी यह बीमारी केवल बङ्गालियोंको ही होती दिखाई दी। अतएव, पानी या स्थानकी किसी तरहकी गड़बड़ीकी वजहसे रोग नहीं पैदा हुआ मालूम होता। बंगालियोंके अभ्यास खाद्य-पदार्थकी वजहसे तथा सम्प्रदायगत शारीरिक दुर्बलता और रोग रोकनेकी शक्ति न रहनेकी वजहसे बङ्गालियोंमें ही

इसकी संहार-लीला दिखाई दी। इस मतको अनुचित नहीं कहा जा सकता। बंगाली जातिके असन-व्यसनके सम्बन्धमें आलोचना और उपयुक्त परिवर्त्तन, चिकित्सकोंकी आन्तरिक चिन्ताका विषय हो गया है।

शोथ-रोगपर बायोकेमिक विचार।

मनुष्यके रक्त और रक्त-रसमें "कैलसियम फास्फेट और सोडियम-क्लोराइड"—इन दोनों नमकोंकी कमीके कारण शोथ-रोग पैदा हो जाता है। इसके बाद इन दोनों नमकोंकी कमीसे पानी और अण्डलाल समूचे शरीरमें नहीं फैल सकता, इसीलिये ये संयोजक तन्तुमें इकट्ठे हो जाते हैं।

इसके बाद रोगकी प्रगतिके साथ अन्यान्य अजैव-लवणोंके परिमाण भी बिगड़ जाते हैं और नाना प्रकारके उपसर्ग पैदा होते हैं। नकली उपायोंसे पसीना लानेके कारण कितने ही रोगियोंकी अवस्था बहुत सांघातिक हो जाती है। बायोकेमिक मतसे, घटे हुए लवणकी कमीकी पूर्त्तिके द्वारा ही रोगका प्रतिकार होता है।

चिकित्सा।

कैलि-म्यूर।—पित्त-विकार और प्रकृतिकी गड़बड़ीसे उत्पन्न शोथ; सफेद या सफेद आभा लिये धुमैला लेप-चढ़ी जीभ। हृद्-यन्त्र और वृक्क-यन्त्र (गुर्दक) दोषकी वजहसे शोथ। हृत्पिण्डकी कमजोरी और कांपना; "कैलि-

फास" लवणके साथ एकके बाद दूसरा, इस क्रमसे प्रयोग करना चाहिये।

नेट्रम-सल्फ।—शोथ और उदरी रोगकी यह एक बहुत बढ़िया दवा है। पुरुषोंके अण्डकोष और स्त्रियोंके भगोष्ठतक रोग फैल जानेपर भी इस नमकके प्रयोगसे आरोग्य होता देखा जाता है। लक्षणके अनुसार अन्यान्य लवणोंके साथ एकान्तर क्रमसे प्रयोग किया जाता है।

नेट्रम-म्यूर।—प्रायः सब तरहके शोथ रोगमें ही लाभदायक है। इसके साथ एकान्तरक्रमसे "नेट्रम-सल्फ" का प्रयोग होनेपर ज्यादा फायदा होता है। अण्डकोषमें जल-सञ्चयवाली अवस्थामें भी लाभ करता है। खसड़ा या छोटी माताके बाद शोथ ; चेहरा उतरा हुआ ; सफेद ; लार बहनेके साथ ही सफेद वमन। नेट्रम-म्यूर लवणकी खास तरहकी जीभ ८६ पृष्ठमें देखिये। पर्याय-क्रमसे कब्जियत और अति-सार ; बहुत अधिक कमजोरी और थकावट मालूम होना ; लसिका और वसा-स्रावी ग्रन्थि-स्थानोंका पुराना शोथ। १०६ पृष्ठ देखिये।

फेरम-फास।—खूनकी कमीकी वजहसे चीण हो जानेके बाद शोथ रोगमें ; खायी हुई चीजोंकी साङ्गीकरण शक्तिकी कमीकी वजहसे गौण उपसर्ग रूपमें उत्पन्न शोथ। इस लवणके साथ एकान्तर-क्रमसे **कैल्केरिया-फास** का प्रयोग करनेपर बहुत अधिक फायदा होता है। अङ्ग-

प्रत्यङ्गका सुन्न हो जाना और ठण्डक, चींटी रेंगनेकी तरह अनुभव होना; जीर्ण और क्षयकर तथा प्रलेपी (hectic) रोगके बादका शोथ; तिमिर-दृष्टि और कनीनिकामें फैलनेवाला गदलापन।

कैल्केरिया-फ्लुयोरिका।—जल-सञ्चयकी वजहसे हृदुपिण्ड, फेफड़ा और प्लुराका फैलना; वात-रोगके साथका शोथ; हृत्पिण्डकी बीमारीसे उत्पन्न उदरी रोग। अण्डकोष और भगोष्ठका फूलना और हृदुपिण्डका काँपना; पेशाबका परिमाण थोड़ा, रङ्ग गहरा और उसमें तेज गन्ध रहती है। कनीनिका प्रदाह; उदरीके साथ जरायुका अपने स्थानसे हट जाना।

कैलि-सल्फ।—छोटी माताके बादका शोथ। सर्दी मालूम होना, क्लान्ति और कलेजा काँपना; किसी चर्म-रोगके रुक जानेके बाद शोथ; पाकाशयमें जलन, प्यास, मिचली और वमन; स्वाद बिगड़ा हुआ; जीभपर पीली आभा लिये चिकनी मैल चढ़ी रहती है; पीले रङ्गका लसदार, पतला और बदबूदार मल। हाथ-पैरमें ऐंठनकी तरह दर्द, इधर-उधर हटनेवाला दर्द; चर्म निष्क्रिय, उसमें पसीनेका अभाव रहता है। तीसरे पहरसे आधी राततक सब लक्षण बढ़ जाते हैं। बन्द कमरेमें बेचैनी और उत्कण्ठा बढ़ जाती है, खुली जगहमें घटना।

कलि-फास।—सुस्ती और स्नायविक दुर्बलताकी अधिकता होनेपर दूसरे-दूसरे उपयोगी लवणोंके साथ पर्याय-क्रमसे सेवन कराना चाहिये। पेशिक और स्नायविक पतनावस्थासे पक्षाघाततक सभी अवस्थाओंमें लाभदायक है। "कैलि-फास" लवणको बायोकेमिक प्रणालीसे मृत-सञ्जीवनी कहा जाये तो भी अत्युक्ति नहीं है। स्नायविक अवसाद और दुर्बलताकी अधिकताके कारण सरमें चक्कर आना; माथेके पीछेवाले भागमें दर्द और भार मालूम होना; चित्तका उद्विग्न रहना; नींद न आना; दृष्टि-शक्तिका बिगड़ जाना। छोटी आँत और मलद्वारकी प्रक्षेपन शक्तिकी कमीकी वजहसे कब्जियत अथवा बिना किसी तरहका दर्दके, पानीकी तरह दस्त। पेशाब केशरकी तरह पीला, स्नायविक दौर्बल्यकी वजहसे पेशाबको रोक न सकना। सब तरहके उपसर्ग **सर्दीसे बढ़ जाते हैं।**

पथ्य और परिचर्या।

पथ्यपर खयाल न रहनेकी वजहसे सभी रोग बढ़ जाते हैं, और रोगी भी नष्ट हो जाता है। शोथ रोगमें जब तेज बोखार वगैरह उपसर्ग नहीं रहते तब कितने ही रोगी और उनके अभिभावक पथ्य और परिचर्याके सम्बन्धमें पहलेसे सतर्क नहीं रहते। इसीलिये, अन्तमें बहुत कुछ परिताप और चेष्टा करनेपर भी रोगीकी रक्षा करना असम्भव हो जाता है।

स्मरण रखना चाहिये, कि शोथ और जलोदर रोगमें पसीना लानेके उद्देश्यसे **गरम पानीसे बदन पोंछना या नहाना मना है।** इससे बहुत हानि होती है। रोगी कमजोर हो जाता है और यहाँतक कि एकाएक मृत्यु तक हो सकती है। थोड़े गरम पानीमें शरीर धोना और नहाना उचित है; पर चर्मका अच्छी तरह रगड़ना बहुत आवश्यक है; इसीलिये कोमल गमछेके बदले मोटा झाड़न या तौलिया काममें लाना उचित है। नहाने बाद, एक दूसरे सूखे तौलियेसे अच्छी तरह बदन पोंछकर तुरन्त फ्लैनेल या कोई दूसरा नरम और गरम वस्त्र पहन लेना होगा। शरीरके ठीक ऊपर ही फ्लेनेलका कपड़ा पहनना उचित है। शोथ रोगीके लिये **ठण्डी हवा लगाना एकदम मना है।**

रोगके आरम्भसे ही **नमक छोड़ देना उचित है।** यदि बिना नमकका भोजन बिलकुल ही अच्छा न लगे तो बहुत थोड़ी मात्रामें सैंधव नमकको थोड़ा भूनकर व्यवहार किया जा सकता है।

शोथ होनेपर **पानी बन्द करना उचित है।** पानी पिये बिना अगर बहुत तकलीफ हो तो पानी खौलाकर ठण्डा होनेपर पिलाना चाहिये। सूखे नारियलका पानी भी पिलाया जा सकता है; पर यह एकदम असमर्थ अवस्थामें सेवन करना चाहिये। छानाका पानी बहुत उत्तम पानीय

है, जरूरत होनेपर उसके साथ मधु मिला लिया जाता है; यह शोथ रोगीके लिये सुपथ्य है।

दूध (गायका दूध) शोथ-रोगका बहुत श्रेष्ठ पथ्य है। अगर किसी वजहसे दूध पीनेके कारण उदरमें वायु हो अथवा पतले दस्त आने लगें तो "नेट्रम-फास" के प्रयोगसे वह उपसर्ग छूट जाता है। पीपलके साथ भी दूध उबाल लेनेका नियम है, पर बायोकेमिक औषध सेवन करनेके समय पीपल प्रभृति औषध गुण-सम्पन्न पदार्थ किसी तरह व्यवहार करनेके कारण बायोकेमिक दवाका गुण नष्ट हो जाता है।

रोग प्रबल न होनेपर दोनों वक्त दूधके साथ भात मिलाकर मिस्रीकी बुकनीके साथ खिलाया जा सकता है, पर ४-५ वर्षका पुराना दाऊदखानी चावलका भात (न मिले, तो ढेंकीका छाँटा पुराना अरवा चावल) खाना उचित है। भातका माँड़ निकाल न फेंकना चाहिये, उसीमें सुखा लेना अच्छा होता है। तथा हो चावलमें ज्यादा पानी न देकर जरूरतके अनुसार थोड़े-से पानीमें चावल डालकर सावधानतासे सिझा लेनेपर सुन्दर भात होगा; पर शोथ-रोगमें भात छोड़ देना ही अच्छा है। दो पहरके पहले लाल आटाकी रोटी और दूध, सन्ध्याके समय मानमण्ड या धानका लावा और दूध खाना चाहिये। जलपानके लिये छाना, सन्देश, ब्राउन ब्रेड (लाल गेहूँकी रोटी) सेंककर और उसमें मधु मिलाकर खाया

जा सकती हैं। अरुईका हलवा, अरुईका बड़ा और रोगीकी रुचिके अनुसार भातमें भी अरुई खायी जा सकती है।

शोथ-रोगमें दही मना है ; पर मठा उत्तम पथ्य है। घरमें गायके दूधका दही जमाकर, जरूरतके मुताबिक इस दहीमें एक चौथाई पानी मिलाकर मठा बनाना चाहिये। इसके साथ भुने हुए जीरेकी बुकनी, थोड़ा-सा भुना हुआ सैंधव नमक और थोड़ा-सा मधु मिला लेनेपर उपयोगी पान-सामग्री तैयार होती है।

एक वक्त गेहूँका लाल आटा या जौके आटेकी रोटी और दूध और सन्ध्याके समय दूध, साबू, ब्राउन-ब्रेड और दूध प्रशस्त खाद्य होता है।

तरकारियोंमें सजनेकी फली, अरुई, ओल (सूरन) गाजर, कच्चा केला, केलेका फूल, गूलर, करेला, प्याज और अदरख खाना चाहिये।

दाल।—किसी तरहकी दाल न खाना ही उचित है ; सिर्फ मूंगका जूस खाया जा सकता है।

मछली।—एकदम मना है।

मांस।—शोथ-रोगमें मांस सुपथ्य है ; पर बकरेका मांस और भेंड़का मांस न खाना चाहिये। मुर्गी, तीतर, मोर और खरगोशका मांस सुपथ्य है। बकरे या भेंड़के मांसका

रस (raw-meat juice) खिलानेपर नुकसान नहीं करता, यह सहजमें पच जाता है ... ता है।

... रारोट सिझा-

... पेट भरकर ... ा, भारी और

... है। श्लेष्मा, ... साथ मल- ... बहुत बोखार ... रहती और ... है, १०।१५ ... मा (आम) निकलता देखा जाता है। इसका प्रदाह बड़ी आंतमें ही अड़ा रहता है, पर सरलान्त्र (rectum) का उपदाह (irritation) इतना अधिक होता है कि बहुत मामुली आम भी नहीं धारण कर सकता। इसी लिये, बार बार पाखाना लगता है। सरलांत्रमें धीरे धीरे प्रदाह हो जाता है, वह फूल जाती

रस (raw-meat juice) खिलानेपर नुकसान नहीं करता, यह सहजमें पच जाता है और ताकत भी बढ़ा देता है।

अगर पतले दस्त आते हों, तो दूधके साथ आरारोट सिझाकर मिला लेना चाहिये।

निषिद्ध।—ज्यादा परिश्रम, व्यायाम, पेट भरकर खाना, नया चावल, खटाई, शराब, दिनमें सोना, भारी और विरुद्ध भोजन और मैथुन।

प्रवाहिका (आमाशय)।

(Dysentery)

यह बीमारी आँतोंके प्रदाहकी वजहसे होती है। श्लेष्मा, रक्त, अथवा खून-मिला श्लेष्मा बड़े वेगसे कूथनके साथ मलद्वारकी राहसे बार बार निकलता है। थोड़ा बहुत बोखार और प्यास ज्यादा लगती है, दस्तमें विष्ठा नहीं रहती और बीमारी जब बढ़ जाती है तो ज्वर भी बढ़ जाता है, १०।१५ मिनिटके अन्तरसे पाखाना लगता है और श्लेष्मा (आम) निकलता देखा जाता है। इसका प्रदाह बड़ी आँतमें ही अड़ा रहता है, पर सरलान्त्र (rectum) का उपदाह (irritation) इतना अधिक होता है कि बहुत मामूली आम भी नहीं धारण कर सकता। इसी लिये, बार बार पाखाना लगता है। सरलांत्रमें धीरे धीरे प्रदाह हो जाता है, वह फूल जाती

है, मल निकलनेकी भ्रान्त अनुभूतिकी वजहसे रोगी पाखाना फिरनेकी चेष्टा करता हुआ बैठा बैठा काँखा करता है। पर एक बूंद भी मल नहीं निकलता। इस बीमारीमें बहुत तेजीसे कमजोरी आती जाती है और रक्तके क्षयकी अपेक्षा कमजोरीके कारण ही मृत्यु होती है।

खाने-पीनेकी गड़बड़ीसे यह **व्यक्तिगत भावसे** (sporadic) रोगीपर आक्रमण करती है। बहुत ज्यादा परिश्रम करनेके बाद शरीर गरम रहनेके समय, जवानोंकी तरह सर्दीका सेवन—जैसे, आइसक्रीम, बरफका पानी शीत या कपड़े उतार कर, बिजलीके पंखेके नीचे बैठ जाना और हवा खाना, पसीना रुकना इत्यादि कारणोंसे या पनालेकी दूषित भाफ नाककी राहसे जानेपर इस बीमारीका व्यक्तिगत भावसे आक्रमण हो सकता है।

स्थानबद्ध आविर्भाव (Endemic)—मलेरियाकी तरह किसी विशेष नगर, जिला या मुहल्लेमें इसका आक्रमण हो सकता है। उस स्थानकी जलवायुके दोषसे और कूड़ा-कर्कट पूरी तरह साफ न करनेके कारण ऐसा होता है।

बहुव्यापक आक्रमण (Epidemic)—यह आक्रमण एक ही समय बहुत-से मनुष्योंपर होता है। जेलके कैदियोंमें, फौजमें तथा किसी एक मकानमें बहुत-से किरायेदार रहनेपर, उन सबको एक ही समय यह बीमारी हो जाती

है। गन्दगी, नालियोंकी दूषित अवस्था, गन्दा पाखाना, तलैया या कूएँका गन्दा पानी प्रभृति कारणोंसे ऐसा होता है।

शीतके आरम्भ और शीतके अन्तमें, दिनमें उत्तापकी अधिकता और रातके समय ज्यादा सर्दी मालूम होनेपर,—इस रोगका आक्रमण अधिकतर होता दिखाई देता है।

नयी आमाशयकी बीमारी।—साधारणतः एक सप्ताहमें ही आराम हो जाती है और बायोकेमिक चिकित्सासे इसके लक्षण तीन-चार दिनोंमें ही दबा दिये जाते हैं। यदि इतने समयके बीच आराम नहीं हो जाता और रोगकी वृद्धिके कारण मृत्यु नहीं हो जाती तो बीमारी पुराने भावापन्न (chronic) हो जाती है। ऐसी अवस्थामें कई महीने या कई बरसतक रोग भोगना पड़ता है। कितने ही स्थानोंमें रोगीका सारा जीवन जीर्ण आमाशय-ग्रस्त होकर रहते देखा गया है। बहुत छुआछूतका ख्याल रखनेवाली स्त्रियोंको अधिक पानी व्यवहार करनेकी वजहसे यह बीमारी पुराने भावकी होकर जीवनभर कष्ट दिया करती है।

जब व्यक्तिगत या व्यापक रूपसे यह रोग दिखाई दे, तो सबके पहले रहनेकी जगह या मुहल्लेकी सफाईकी ओर ध्यान देना चाहिये। नाली और पाखानेकी ओर ज्यादा ध्यान देना चाहिये।

आमाशयकी बीमारी **दो तरहकी** होती है। (क) बेसिलरी अर्थात एक प्रकारके विशेष जीवाणुसे उत्पन्न और (ख) एमिबिक डिसेंट्री। परिवर्त्तित पलल घटित।

(क) बैसिलरी डिसेण्ट्री।—पीनेके पानी या दूधमें shiga (शीगा) नामक जापानी चिकित्सकके आविष्कार किये हुए एक खास जीवाणु द्वारा रोगका आक्रमण होता है और इस जीवाणुके आक्रमण करनेके दो दिनके भीतर ही रोग प्रकट हो जाता है।

शीत और कम्पनके साथ रोग पैदा हो जाता है और ज्वर १०५ डिगरीतक चढ़ता है।

तलपेटमें बहुत दर्द होता है।

रक्त और श्लेष्मा निकलता है। २०, ३० या इससे भी अधिक बार पाखाना होता है। बहुत वेग और कूथन रहती हैं।

यह बहुत बार दोहरा सकता है और लक्षण भी बहुत प्रबल रहते है।

पाखानेकी परीक्षा करनेपर जीवाणु मिलते हैं।

(ख) एमिबिक डिसेण्ट्री।—इसमें भी बैसिलरीकी प्रकृतिकी तरहके ही लक्षण रहते हैं, पर इसमें दुबलापन और कमजोरी बहुत आ जाती है।

बड़ी आँतसे **तन्तु छूटकर** मलके साथ निकलते हैं।

छूटे हुए आममें (श्लेष्मा) एमिबा (entamebo histoylitica) दिखाई देता है। रोगके आक्रमणके दो महीनोंके भीतर ही यकृतके दाहिने भागमें (right lobe) अधिकांश स्थानोंमें फोड़ा निकलता है।

यकृतकी वृद्धि ऊपरकी ओर होती है और दाहिने पार्श्वकी ओर फैलती है। पंजरास्थिका निचला भाग छूनेपर यकृत सरल मालूम होता है। यकृत और फेफड़ेका सम्मिलित फोड़ा (hepato pulmonary abscess) और आँत तथा आँतके आवरणका फटना (perforation) इस रोगका मारात्मक उपसर्ग है।

अधिकांश स्थानोंमें ही बहुत बार पुनराक्रमण होता देखा जाता है। प्रदाह और जखम सूखकर अन्त्र-प्रणालीमें सङ्कोचन (stricture) उत्पन्न होकर उसका आंशिक अवरोध हो जाता है।

बायोकेमिक विचार।

जिन प्रत्यक्ष कारणोंसे अतिसार होता है, आमाशय रोगमें भी वे ही सब कारण पैदा हो जाते हैं; पर आमाशय रोगमें आँतोंके प्रदाहित तन्तुओंमें एक खास तरहके जीवाणु अपना घर बना लेते हैं और इसीलिये इसमें एक विशेष प्रकारके लक्षण पैदा हो जाते हैं।

रक्तवहा नाड़ियाँ, शिरा और धमनियोंमें लौह-कणके परमाणुओंकी कमी होनेपर, रक्त-स्राव और प्रदाह प्रभृति लक्षण पैदा होते हैं; शरीरका जलीय अंश बढ़ जानेकी वजहसे अथवा असम हो जानेके कारण, पतले दस्त आने लगते हैं।

मैग्नेशिया-फास लवणकी गड़बड़ी होकर उदर और आँतोंमें नाना प्रकारकी अकड़न, दर्द वगैरह लक्षण प्रकट होते हैं।

रोगके आरम्भ कालसे ही बायोकेमिक चिकित्सा करनेपर आमाशय सहजमें ही आरोग्य हो जाता है।

चिकित्सा।

कैलि-म्यूर।—यह लवण और फेरम-फासके पर्याय क्रमसे प्रयोग द्वारा रोग अंकुरावस्थामें ही नष्ट हो जाता है। उदरमें हमेशा दर्द बना रहना, अकड़न, काटनेकी तरह दर्द। हमेशा ही पाखानेका वेग बना रहना, कूथन और बार-बार पाखाना होना, पीली आभा लिये, पीब-मिला, आम मिला मल।

फेरम-फास।—ज्वरके साथ या ज्वर-भावके साथ तथा प्रदाह और दर्दके साथ आमाशय रोग; मल गरम और पतला। कैलि-मूयर लवणके साथ पर्यायक्रमसे इसका प्रयोग किया जाता है।

कैलि-फास।—तलपेटमें बहुत दर्दके साथ पाखानेका वेग और कूथन; बहुत बदबूदार और लाल आभा लिये मल, केवल खून निकलना। पाखाना होनेके बाद जलन और मल-द्वारमें दर्द; रोगी उद्विग्न और दुःखित रहता है। रोगी विकारग्रस्त हो पड़ता है, उदर फूल उठता है और मलमें बहुत बदबू होती है। जीभ बहुत सूखी और सफेद, चिकनी

या उसपर पीसे हुए सरसों लगी रहनेकी तरह लेप चढ़ा रहता है।

कैल्केरिया-फास।—पीव मिला मल, पीव और रक्त-मिला मल। कैलि-म्यूरके बाद बहुत उपयोगी है। जीभ ढीली, थुलथुली, पिछले भागमें पीली आभा लिये मैल चढ़ा रहता है।

मैग्नेशिया-फास।—आमाशय, पेटमें ऐंठन की तरह दर्द, मलद्वारमें तेज दर्द, बड़े जोरसे और वेगसे मल निकलता है। बार-बार वेग आता है और अधोवायु निकलनेके साथ पाखाना होता है। रगड़ने, दबाने और गर्म सेंक देनेपर आराम होता है; दर्दकी तेजीके लिये अन्यान्य लवणके साथ एकान्तर-क्रमसे प्रयोग किया जाता है। रुका हुआ वायु, पेट गड़गड़ाना और डकार; आक्षेपिक मूत्रावरोध।

पथ्य।

पानीमें बनी बार्ली, छानाका पानी और आरारोट आमाशय रोगका उपयोगी पथ्य है। नये अतिसार रोगमें **बेलका सूखा गूदा** सेवनसे फायदा नहीं होता, पर रोग पुराना हो जानेपर इससे बहुत फायदा होता है। बेलके गूदेके दो टुकड़े अच्छी तरह पानीमें धोकर एक सेर पानीमें छोड़ देना चाहिये और धीमी आँचपर चढ़ा देना चाहिये। जब आध

सेर रह जाये तब उतार लेना चाहिये ; इसी बेलके पानीमें बार्ली या आरारोट तैयारकर मिलाना या जल-बार्ली और जल-आरारोटके साथ सम भागमें मिलाकर देना आमाशय रोगके लिये सुपथ्य है। कच्चा बेल आगमें भूनकर मिसरीके चूरके साथ सेवन करनेपर पुराने आमाशय रोगमें फायदा होता है। **बकरीके दूधके साथ** उसका दूना पानी मिलाकर औंटाकर सेवन करनेपर भी फायदा होता है।

रोगीको नयी अवस्था दब जानेपर गरम-गरम पूरी मिश्रीके चूरके साथ खानेकी प्रथा दिखाई देती है, पर आटा या मैदा इस समय रोगीको नुकसान पहुँचाता है। चूड़ेका माँड़ या भातका मांड़ और कच्चा केला सिझाकर तथा गन्धभादुलियाके रसके साथ **प्रथम पथ्यके** रूपमें फायदा करता है। कुछ दिनोंतक यह पथ्य खानेके बाद कच्चे केलेके शोरबाके साथ खूब नरम पुराने चावलका भात दिया जा सकता है। इसके बाद धीरे-धीरे कोमल परवल, कच्चा केला, कच्चा बैंगन, गूलर और मानकच्चू (अरवी) भी दिया जा सकता है। तीसरे पहर अन्न न देकर, धानके लावाका मांड़, बहुत अधिक मात्रामें गरम पानीमें डालकर पतला-पतला ही खिलाना फायदा करता है, नहीं तो साबूदाना या बार्ली देना चाहिये। खूब जोरकी भूख न लगे तो दोनों शाम अन्नका पथ्य देना उचित नहीं हैं।

बहुत दिनोंतक आमाशय भोगनेपर रोगी दुबला और कमजोर हो पड़ता है। इस समय **मांसका जूस,**

माँगुर या सींगी मछलीका शोरबा, मूँग या मसूरकी दालका शोरबा देना चाहिये। मांसका जूस पुष्टकर है, पर पशुके मांसकी अपेक्षा पक्षीका मांस ज्यादा फायदा करता है। मुर्गा, बत्तक या कबूतरका मांस कुचलकर उसमें थोड़ा-सा पानी और नमक मिलाकर २ घण्टे तक ढक रखना चाहिये। इसके बाद उसे अच्छी तरह खोलाकर साफ कपड़ेसे छानकर रस निकाल लेना चाहिये। अगर रोगी केवल यही रस न खाना चाहे, तो थोड़ा-सा घी और तेजपत्ता देकर छौंक देना चाहिये। इसके अलावा मांसको चौगुने पानीके साथ सिझाकर शोरबा भी दिया जा सकता है।

गायका या भैंसका दूध, रोगकी पहली अवस्थामें मना है; पर पुराने आमाशय रोगमें अर्थात रोग पुराना और बहुत दिनोंका स्थायी हो जानेपर **गायके दूधके साथ** खूब सिझाया हुआ भात दिया जाता हैं। जल-बार्ली या जल आरारोटके साथ बराबरकी मात्रामें गायका दूध मिलाकर भी दिया जा सकता है। बेलके गूदेके पानीके साथ सम-भाग गायका दूध फायदा करता है।

रक्तामाशयके बादकी कमजोरीके लिये गुगुली के साथ थूलकुड़ी सागका शोरबा फायदा करता है। भातके साथ मिलाकर खाया जाता है। जलपानके लिये भूना हुआ बेल या बेलका मुरब्बा अच्छा होता है।

रोगीका विवरण।

डाक्टर एच० के० लेनार्ड (M. D.) ने नीचे लिखा रोग-विवरण दिया है :—

"अभी हालमें आमाशयके एक रोगीके पाखानेके समय दर्दके कारण मैं बहुत तरद्दुदमें जा पड़ा था। पाखानेकी गिनती तो क्रमशः घटती जाती थी, पर पाखानेके समयका दर्द बढ़ता ही जाता था। यह दर्द क्रमशः इतना तेज होने लगा कि रोगी उसकी वजहसे बेहोश हो पड़ता था। अगर दर्द न दबाया जायगा, तो रोगी दूसरोंके हाथमें चला जायगा—यह देखकर मैं उद्विग्न हो पड़ा था। रोगीके तलपेट और मलद्वारमें बहुत तेज दर्द होता था, पर ज्यादा दर्द मलद्वारमें ही होता था। पाखानेके समय कूथन ज्यादा रहनेकी वजहसे मलद्वारकी पेशीमें बहुत समयतक अकड़न बनी रहती थी, अन्तमें मैंने "मैग्नेशिया-फास" लवण गरम पानीमें गलाकर प्रयोग किया। मालूम होता है, मार्फियाका अधःत्वचा (इञ्जेक्शन) देनेपर भी इतना अधिक फायदा नहीं होता। पहली मात्राके सेवनसे ही रोगीकी तकलीफ एकदम गायब हो गयी। दूसरे दिन उसके सभी लक्षण गायब हो गये और यह देखकर कि रोगी आरोग्य हो गया है, मैंने बिदा ली। इतनी तेज और इतनी सुन्दर दवाकी क्रिया इसके पहले मैंने कभी न देखी थी। न्यूयार्कके अन्तर्गत विङ्गहामटन निवासी डाक्टर ई० ई० स्नाइकरने एक प्रमेह रोगीके मूत्राशय-प्रदाह

रोगमें आक्षेप-ग्रस्त कूथनको मैग्नेशिया-फासका प्रयोगकर आरोग्य किया था। यही सुनकर मुझे भी अपने आमाशयके रोगीपर इसके प्रयोगकी प्रेरणा हुई और मुझे भी आश्चर्य-जनक लाभ दिखाई दिया।"

मन्तव्य।

बच्चोंको दाँत निकलनेके समय, माताके भोजनकी गड़बड़ीसे अथवा ठण्ड लगकर, आमाशय या उदरामय होते देखा जाता हैं। ऊपर लिखी दवाओंसे लक्षणके अनुसार चुनकर प्रयोग करनेपर जल्द आरोग्य हो जाता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि स्तनका दूध पिलानेवाली माता अगर अपने खाने-पीनेकी ओरसे सावधान नहीं रहती तो आरोग्यमें देर होती है।

आमाशय रोगीके तलपेटमें फ्लैनेल या और कोई कोमल गरम कपड़ा लपेट रखना चाहिये। इस समय पेटमें किसी तरह सर्दी न लगने देनी चाहिये।

कष्टरजः—बाधक।

(Dysmenorrhœa)

रमणियोंके मासिक रजः-स्रावमें दर्द और बहुत तरहकी तकलीफ होती है। किसी-किसीको पहली बार रजो-दर्शनसे

ही कुछ-न-कुछ तकलीफ होती दिखाई देती हैं। बहुत-से कारणोंसे और बहुत तरहके दर्दके साथ कष्टरजः पैदा होता है।

(क) व्याहत रजःकृच्छ्रता—

(Obstructive Dysmenorrhœa).

१। जरायुका अपनी जगहसे हट जाना, आगेकी ओर टेढ़ा पड़ जाना, जरायुमें सौत्रिक अर्बुद या बहुपाद (polypi) उद्भेदकी वजहसे जरायु-ग्रीवा रुककर स्वाभाविक रजःस्राव रुक जाता है और इसी वजहसे दर्द आदि बहुतसे उपसर्ग पैदा हो जाते हैं।

२। विटप स्थानके (pubes) ठीक ऊपरी भागमें मध्य-रेखा (median line) को अवलम्बन कर दर्द पैदा होता है।

३। रजःस्रावके साथ-ही-साथ दर्द आरम्भ होगा।

४। दर्दकी प्रकृति रह-रहकर होनेवाली होती है; ऐंठनकी तरह दर्द होता है और इसके साथ ही खूनके थक्के निकलते हैं।

(ख) डिम्बाधारीय रजःकृच्छ्रता।

(Ovarian Dysmenorrhœa).

१। ऋतु-स्रावके कई दिन पहलेसे ही दर्द आरम्भ हो जाता है और रजःस्रावके साथ बढ़ जाता है।

२। नितम्ब और ऊरु होता हुआ दर्द नीचेकी ओर उतरता है।

३। मिचली, सर-दर्द प्रभृति परिलक्षित उपसर्ग हमेशा दिखाई देते हैं। ये सब पहले कही हुई रजःकृच्छ्रतामें नहीं रहते।

(ग) झिल्लीयुक्त रजःकृच्छ्रता।

(Membranous Dysmenorrhœa).

१। प्रसवके बाद, गर्भ-स्राव या प्रमेह-दोषकी वजहसे जरायुके अन्तर्वेष्टक प्रदाह (endometritis) से उत्पन्न होता है।

२। ऐंठन या मरोड़की तरह अथवा प्रसवके दर्दकी तरह निःसारक प्रकृतिका दर्द।

३। केवल रजःस्रावके साथ दर्द होता है।

४। अन्तर्वेष्टक झिल्लीके टुकड़े निकलनेके साथ दर्द गायब हो जाता है और उस समय आर्त्तवका रक्त निकला करता है।

५। ऋतुके दूसरे दिन ये खण्ड या टुकड़े सब निकलते हैं। यह झिल्ली पतली, फूली, मोटी और चिकनी रहती है, तथा उसमें छेद रहते हैं: कभी-कभी जरायुकी भीतरी झिल्ली समूची निकल जाती दिखाई देती है। यदि ऐसा होता है, तो वह तिकोनिया रहती है और देखनेमें एक थैलीकी तरह मालूम होती है तथा "फैलोपियन टियुब" (कालल-नल) नलीके संयोगके मुँहका चिन्ह उसपर रहता है।

(घ) स्नायविक रजःकृच्छ्रता ।

(Neuralgic Dysmenorrhœa).

इसमें बहुत अधिक दर्द होता है और दूसरे-दूसरे स्नायविक उपसर्ग भी होते देखे जाते हैं ।

किसी भी कारणसे हो, आर्त्तव निकलनेकी नैसर्गिक चेष्टाके समय अगर किसी तरहकी बाधा प्राप्त होती है, तो प्रकृति उसे जबर्दस्ती निकालनेकी चेष्टा करती है। इस चेष्टाका ही यह नतीजा होता है, कि रोगिनीको बहुत तकलीफ हुआ करती हैं। दर्द खासकर तेज और ऐंठन या मरोड़की तरह अथवा प्रसवके दर्दकी तरह होता है, जरायुके ऊपर या समूचे तलपेटपर क्रिया हुआ करती है। स्रावके कई घण्टे पहलेसे दर्द आरम्भ हो जाता है, पर कितनी ही बार ऋतुके साथ-साथ भी दर्द होता देखा जाता है। **रक्तका रङ्ग** चमकीला लाल, हलका लाल, काली आभा लिये काला या गहरा काला रहता है। हर महीने, दर्दके साथ ऋतु-स्राव होता है और धीरे-धीरे दर्द ऐसा होता जाता है, कि सहन नहीं होता ।

लुप्तरजः के सम्बन्धमें २८६ पृष्ठमें देखिये। ऋतु-स्राव-सम्बन्धी दूसरे-दूसरे विकार भी दिखाई देते हैं ; बँधे समयके पहले रजःस्राव या देरसे रजःस्राव होना ; उपयुक्त और साधारण मात्राकी अपेक्षा ज्यादा या कम होना ; ऋतु-

स्रावके बदले नाकसे रक्त-स्राव प्रभृति बहुतसे रोग-लक्षण पैदा हो जाया करते हैं। इसके बाद इन सब लक्षणोंके अनुसार दवा बतायी जाती है।

चिकित्सा।

फेरम-फास।—ऋतुके समय रक्तको अधिकता, चेहरा लाल, नाड़ी बहुत तेज, स्राव चमकीले लाल रङ्गका होता है, योनि सूखी और उसमें स्पर्श सहन नहीं होता; ऋतुके समय अजीर्ण खायी हुई चीजको के होती है और उसका स्वाद खट्टा होता है। तीन सप्ताहका अन्तर देकर ऋतुस्राव होता है और आर्त्तवके साथ तलपेट और नितम्बोंमें दबाव और भार मालूम होता है और माथेके बीचमें दर्द होता है, झिल्ली निकलनेवाला ऋतु-स्राव।

अगर हरेक बार ऋतु-स्रावके समय "फेरम-फास" लवणके ये ऊपर लिखे लक्षण दिखाई दें, रजःस्राव होनेके एक सप्ताह पहले रोज "फेरम-फास" का सेवन करनेपर रोगकी गति रुक जाती दिखाई देती है; यह दवा प्रतिषेधकका भी काम करती है; "कैलि-फास" के साथ पर्यायक्रमसे सेवन करनेपर बहुत फायदा होता है।

कैल्केरिया-फास।—जिन रोगिनियोंकी पेशियाँ संकुचित और शिथिल रहती हैं तथा जो दुबली-पतली रहती हैं, उनके रजः-विकारमें यह फायदा करता है। यह ऋतु-

शूल जवानीमें सावधान न रहनेके कारण होता है। ऋतुके पहले और ऋतुके साथ दर्द, प्रसवके दर्दकी तरह दर्द, सर-दर्द, सरमें चक्कर आना, माथेमें टपकका दर्द, ऋतुके समय कामकी अधिकता, किसी तरह भी रति-इच्छा तृप्ति नहीं होती; ऋतुके बाद बहुत कमजोरी और सुस्ती; रोगिनी हमेशा लेटे रहना चाहती है, उठने और चलने-फिरनेमें उसे बहुत तकलीफ मालूम होती है; वात-धातुवाली स्त्री।

जिन सब युवतियोंको बँधे हुए ऋतुके समयके पहले ही ऋतु-स्राव होता है और जिन प्रौढ़ाओंका ऋतुका समय पीछे हटता जाता है, इन दोनोंके लिये ही "कैल्केरिया-फास" फायदेमन्द है। २४—२५ पृष्ठ देखिये। स्तन पिलानेके समय ऋतु-स्राव।

मैग्नेशिया-फास।—यह ऋतुशूलकी सबसे बढ़िया दवा है। मरोड़की तरह दर्द रहता है; ऋतुके कुछ पहले ही अथवा ऋतु-स्रावके साथ साथ दर्द होता है; चलने-फिरनेपर दर्द बढ़ जाता है और गरम सेंक देनेपर घटता है। झिल्ली निकलनेवाला ऋतु-शूल, इस नमकको गरम पानीमें गलाकर देनेपर बहुत जल्द फायदा होता है।

यह नमक थोड़ा-सा लेकर गरम पानीमें गला लेना चाहिये और उसमें कपड़ा तरकर, रोगिनीके पेटपर जरायुकी जगह लगा देना चाहिये, इससे दर्द तुरन्त दब जाता है। रोगिनी जितना गरम सहन कर सके, उतना ही गरम-गरम

लगाना चाहिये और गरमी बनी रहे, इसलिये उसके ऊपर "आयरण्ड सिल्क" अथवा मोटा फलैनेल लपेट देना चाहिये।

कैलि-फास।—खूनकी कमीवाली रोगिनी, स्नायु-कृच्छ्रता, स्त्रियोंका ऋतु-शूल। ऋतु-रोध या देरसे ऋतु-स्राव होनेके साथ सुस्ती, कमजोरी और स्नायविक दुर्बलता; बहुत थोड़ी मात्रामें ऋतु-स्राव अथवा बहुत ज्यादा मात्रामें गहरे लाल रङ्गका या काली आभा लिये ऋतु-स्राव, ऋतु-स्रावमें कभी-कभी तेज गन्ध होती है। स्नायविक प्रकृतिकी रमणियोंका ऋतु, समयके पहले ही ऋतु-स्राव हो जाया करता है, परिमाणमें भी ज्यादा होता है या ऋतु-स्राव अनियमित रहता है; देरसे होता है, बहुत थोड़ी मात्रामें और बदबूदार स्राव होता है। इसके साथ ही तलपेटमें भार मालूम होता है; जीभपर पीला मैल चढ़ा रहता है; ऋतुके पहले स्वामी-सहवासकी बहुत अधिक इच्छा रहती है।

नेट्रम-म्यूर।—मासिक ऋतु-कालके पहले ही ऋतु स्राव हो जाता है, स्राव बहुत ज्यादा होता है, उसके साथ ही बहुत तेज दर्द होता है, ऐसा मालूम होता है, मानो माथा फट जायगा; बार-बार सिहरावन और कपकपी मालूम होती है। ललाटमें दर्द आरम्भ होकर, ऋतु-स्राव हुआ करता है, ऋतुका रक्त थोड़ा और काला होता है। ऋतु-स्रावके समय बहुत उदासी रहती है और नित्य सवेरे सर-दर्द होता है। सर-दर्द और कमरमें दर्द, उठनेमें तकलीफ होती है, कड़ी जगहमें सोनेपर आराम मालूम होता है।

युवतियोंका ऋतुरोध अथवा बहुत अधिक समयका अन्तर देकर थोड़ा-सा ऋतु-स्राव; उदरमें दर्द; खायी हुई चीजका वमन; कमजोरी और बेहोशी पैदा हो जानेका लक्षण; खट्टी चीज खानेकी इच्छा, पर मांस, रोटी या रसोई खानेकी इच्छाका न होना; कब्जियत या पर्यायक्रमसे कब्जियत और अतिसार।

कैलि-सल्फ।—बहुत देरसे और बहुत थोड़े परिमाणमें ऋतु-स्राव; तलपेट भरा और उसमें भार मालूम होना; सर-दर्द; पीला लेप चढ़ी जीभ। "मिट्रोरेजिया अर्थात रजसाधिक्य"।

साइलिसिया।—ऋतुके समय समूचा शरीर बरफकी तरह ठण्डा हो जाता है, कब्जियत, मल कुछ निकलता है और फिर भीतर चला जाता है; ऋतु-स्राव बहुत तेज गन्ध लिये होता है; कमरमें दर्द और पक्षाघातकी तरह मालूम होता है। ऋतु-स्राव आगे समय बढ़ाकर होता हैं, पर परिमाणमें थोड़ा होता है; शायद ही कभी ज्यादा मात्रामें होता है। स्तनसे दूध पिलानेके समय बहुत दिनोंका पुराना ऋतु-स्राव। १२२ पृष्ठ देखिये।

रोगीका विवरण।

(१)

डाक्टर आर० डी० वेल्डिङ्गने नीचे लिखे रोगी-विवरणका उल्लेख किया है।

एक स्त्री बहुत दिनोंसे रजःशूलकी बीमारी भोग रही थी। उदरके बायें पार्श्वमें दर्द और तकलीफ होती थी, पीठकी अंश फलकास्थि (scapula) तक दर्द चला जाता था। बायीं करवट सोनेपर दर्द बढ़ जाता था, रोगिनी ठण्डी सूखी हवामें अच्छी रहती थी; प्रत्येक गर्मीके ऋतुमें उसके शरीर-पर जुलपित्ती (आम वात) के चकत्ते निकल आते थे; उसके ऊपरी ओंठपर अकसर घाव हो जाया करता था और वह चोटके सपने देखा करती थी। **नेट्रम-म्यूर** (२०० शक्ति) सेवन करनेपर वह एकदम आरोग्य हो गयी।

(२)

डाक्टर बी० ह्वीटियरने नीचे लिखी रोगिनीको आरोग्य किया था:—

रोगिनीको हिस्टीरियाकी बीमारी थी और वह स्नायविक प्रकृतिकी थी। १५ बर्षोंसे ऋतु-शूलकी तकलीफ भोग रही थी। दूसरे-दूसरे प्रकारकी चिकित्सासे कोई फायदा न हुआ; ऋतुके समय स्तनमें इतना दर्द होता था, कि उसे कपड़ेका स्पर्शतक सहन न होता था। तलपेटमें ऐंठनकी तरह दर्द होता था, तलपेटमें इतना प्रचण्ड दर्द होता था, कि मालूम होता था, कि नस-नाड़ियाँ निकल पड़ेंगी। कभी कभी ऊपर चढ़नेवाला दर्द होता था। यह दर्द तलपेटसे पाकाशयतक फैल जाता था, ऐसा अनुभव होता था कि कोई तरल पदार्थ नीचेसे ऊपर चढ़ रहा है और फिर कुछ क्षण बाद

ही पित्तकी कै या फेन-भरा खट्टा वमन होता था। कभी-कभी वमनके साथ खूनका छींटा दिखाई देता था। वमन हो जाने बाद पाकाशयकी तकलीफ तो घट जाती थी, पर जरायुका दर्द बढ़ जाता था और २४ घण्टांतक बना रहता था। समूचे माथेमें दर्द आरम्भ होकर, अन्तमें वह बायीं आँखपर आकर ठहर जाता था। माथेमें दर्द रहनेपर, दूसरी जगहका दर्द कम रहता और माथेका दर्द घटनेपर दूसरी जगह दर्द बढ़ जाता था। उसको **कैलि-फास** खिलाया गया; दवा सेवन करनेके बादवाला ऋतु पहलेकी अपेक्षा बहुत अच्छा हुआ। छः महीने "कैलि-फास" सेवन करनेसे वह एकदम आरोग्य हो गयी।

(२)

डाक्टर जी० टी० केण्ट (M. D.) ने लिखा है:—

रोगिनीको ऋतुके समय बहुत ही वेग, तीर बेधनेकी तरह स्नायविक दर्द होता था। यह दर्द उदरमें आरम्भ होकर दो एक दिन स्थायी रहता था। पीठमें दर्द पैदा होकर वह घूम-कर उदरमें आकर रुक जाता था। "मैग्नेशिया-फास" गरम पानीके साथ बार-बार प्रयोग करनेपर दर्द घट गया और कई महीनोंतक ऋतुके समय, इसी तरह "मैग्नेशिया-फास" का प्रयोग करनेपर वह आरोग्य हो गयी।